तृतीय संस्करण का वक्तव्य

सभा द्वारा जोधराजकृत 'हम्मीररासो' का प्रथम संस्करण संवत् १६६५ में प्रकाशित हुआ था। उसमें मूल के अतिरिक्त पादटिप्पणी में कुछ पाठांतर भी दिए गए थे। ग्रंथ किस हस्तलेख के आधार पर संपादित किया गया और पाठांतर देने में किस दूसरे हस्तलेख से सहायता ली गई इसका उल्लेख ग्रंथ के संपादक स्वर्गीय बाबू श्यामसुंदरदास जी ने अपनी भूमिका में नहीं किया है। वहाँ इतना ही संकेत है कि कुँअर कृष्णसिंह जी वर्मा से यह काव्य प्राप्त हुआ था। 'खोज' में हम्मीररासो का कोई हस्तलेख आज तक नहीं मिला। सभा के आर्यभाषा-पुस्तकालय में अलबत्त एक आधुनिक हस्तलेख है जो सं० १८८४ की 'असल प्रति' की अनुलिपि है और संवत् १६६१ में प्रस्तुत हुआ है। सभा से हम्मीररासो का प्रथम संस्करण इस अनुलिपि के चार वर्ष बाद प्रकाशित हुआ। अत उसके संपादन के लिये ही कदाचित् यह अनुलिपि कराई गई होगी और इसका उपयोग भी किया गया होगा। फिर भी इस अनुलिपि में अनेक पाठांतर मिलते हैं और एकाध स्थल पर कुछ पंक्तियाँ भी अधिक हैं। इसमें दो पृष्ठ (१७५-१७६) नहीं हैं, पूरी अनुलिपि १७६ पृष्ठों में समाप्त हुई है।

प्रथम संस्करण में एकरूपता नहीं थी। कुछ ऐसे कठिन शब्द भी थे जिनका अर्थ देना आवश्यक जान पड़ा। अतः इस संस्करण (तृतीय आवृत्ति) में यह पूर्ति कर दी गई है। यह कार्य बहुत मनोयोगपूर्वक संपन्न किया है 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' के सहायक संपादक श्री शिवनाथ, एम० ए० ने जो नई पीढ़ी के अच्छे आलोचक हैं। जोधराज ने यह ग्रंथ सं० १७८५ में प्रस्तुत किया था। यह हिंदी-साहित्य का रीतिकाल या शृंगारकाल था। 'रासो' ग्रंथों की परंपरा अपभ्रंशकाल की है। जैन अपभ्रंश में 'रास' नाम के अनेक

ग्रंथ मिलते हैं। रासो, रास या रासा संस्कृत के 'रासक' शब्द से बने हैं जिसका अर्थ 'काव्य' होता है। अपभ्रंश में 'रासक' लिखने की प्रथा बहुत थी। भारतीय विद्याभवन बंबई से अद्दहमान (अब्दुर्रहमान) का जो 'संदेशरासक' प्रकाशित हुआ है उससे प्रमाणित है कि देशभाषा अपभ्रंश की प्राचीन परंपरा वैसी ही भेद-भावशून्य थी जैसी हिंदी की आधुनिक काल के पूर्व तक रही है। अपने को 'मिच्छ' (म्लेच्छ) देश (वर्तमान सीमाप्रांत) का निवासी बतलाते हुए कवि ने बड़ी विनय से ग्रंथ का आरंभ किया है।

हिंदी में 'रासो' शब्द चल पड़ा है, पर खड़ी बोली हिंदी के गद्य में उसका रूप 'रासा' ही होना चाहिए। अभी तक यह शब्द अनुमित संस्कृत शब्दों के साथ जोड़ा जाता रहा है। आश्चर्य की बात ५ कि 'पृथ्वीराजरासा' के हस्तलेखों की पुष्पिकाओं में प्रयुक्त होने पर भी 'रासक' शब्द की ओर विद्वानों का ध्यान नहीं गया। प्रस्तुत ग्रंथ का गतानुगतिक नाम 'हम्मीररासो' ही है। मूल पाठों की एकरूपता के लिये पुराने हस्तलेखों के व्यवहार-बाहुल्य के आधार पर 'वर्तनी' रखी गई है। पाठ-संपादन में पूर्वोक्त अनुलिपि का ही सहारा रहा है। पर अनुलिपिकर्ता ने उतनी सावधानी से कार्य नहीं किया जितनी ऐसे ग्रंथ के लिये अपेक्षित थी। प्राचीन हस्तलेखों में 'वर्तनी' अनेक प्रकार की मिलती है। इसके कारण देशभेद, कालभेद, भाषाभेद आदि हैं। राजपूताने और अवध प्रांत के हस्तलेखों में, सोलहवीं शताब्दी और अठारहवीं शताब्दी के हस्तलेखों में तथा बुंदेली और भोजपुरी जनपदों में मिले हस्तलेखों में 'वर्तनी' का अंतर बहुत है। कवि अपने समय तक विकसित रूपों के साथ ही काव्य-परंपरा में व्यवहृत रूपों को भी बनाए रहते हैं। इसलिये जब तक कवि के हाथ को ही लिखा कोई हस्तलेख न मिले तब तक किसी प्रामाणिक हस्तलेख का ही आधार मानकर 'वर्तनी' रखी जा सकती है और उस समय के प्रचलन आदि के अनुमान पर ही पाठों का संपादन किया जा सकता है। प्राचीन हस्तलेखों में 'न'

और 'म' के पूर्व का आकार प्रायः सानुनासिक ही रखा गया है, जैसे धाँम, बाँन आदि में। क्रियापदों, कृदंतों, विभक्ति-चिह्नों में ओकारांत, औकारांत दोनों का घालमेल है। इसका कारण यह है कि काव्यभाषा 'व्रज' का उच्चारण ऐसे मध्यस्थल का उच्चारण है जिसके पश्चिम ओ की प्रवृत्ति है और जिसके पूर्व औ की। विचार करने पर दिखाई देता है कि इसका प्रभाव भिन्न भिन्न शब्दों पर पृथक् पृथक् पड़ा है। क्रियापदों में तो औकार की ओर झुकाव है पर संज्ञा-शब्दों में ओकार की ओर। अनुलिपि से संगति बैठाते हुए इसी नियम का पालन किया गया है।

'रासो' ग्रंथों में राजस्थानी के प्रभाव के कारण 'व'-बहुला और 'ण'-बहुला प्रवृत्ति है। इनमें से 'व' की प्रवृत्ति व्रज के अनुकूल नहीं है इससे उसमें यथास्थान 'ब' का ही व्यवहार किया गया है, पर 'ण' रहने दिया गया है—पारंपरिक रूपों के ग्रहण का विचार करके। विभिन्न प्रदेशों, समयों, कवियों, उपभाषाओं के प्राचीन ग्रंथों के संपादन में कैसी 'वर्तनी' रखी जाय इसका विस्तृत विवेचन अपेक्षित है और इसपर स्वतंत्र निबंध क्या पुस्तिका लिखने की आवश्यकता है। खोज-विभाग के प्राचीन हस्तलेखों का आलोडन और विवरणों के अनुशीलन से पता चलता है कि पूरबी, पछाहीं आदि कई शैलियाँ हैं। इसका अनुसंधान अपेक्षित है। अतः प्रस्तुत संस्करण में एकरूपता लाने के लिये जिस वर्तनी का व्यवहार किया गया है उसका विस्तार करने की यहाँ कोई विशेष आवश्यकता नहीं। यह संस्करण संपादन की थोड़ी सामग्री के होते हुए भी जहाँ तक हो सका है उपयोगी बना दिया गया है। द्वितीय आवृत्ति बहुत दिनों पूर्व समाप्त हो गई थी। इस आवृत्ति के प्रकाशन होने में कुछ देर सुसंपादन के कारण ही हुई है। आशा है कि यह संस्करण विशेष लाभदायक प्रतीत होगा।

वासंतिक नवरात्र
सं० २००५ वि०

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
(साहित्य-मंत्री)

भूमिका

यह ऐतिहासिक काव्य कवि जोधराज का बनाया हुआ है। नीमराणा के राजा चद्रभान की आज्ञा से जोधराज ने इस काव्य को सवत् १७८५ में रचा। इसमें रणथंभौर के वीरशिरोमणि महाराज हम्मीरदेव का चरित्र और विशेष कर अलाउद्दीन के साथ उनके विग्रह का वर्णन है। भारतवर्ष के इतिहास में हम्मीर का नाम प्रसिद्ध है और उसके चरित्र को पढ और सुनकर लोग अब तक मनोमुग्ध और उत्साहित होते हैं। कवियों और लेखकों ने भी उसके चरित्र का गान करने में कोई बात उठा नहीं रखी है। अब तक कविता में इस विषय के तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। एक तो चद्रशेखर का हम्मीर-हठ है जो छपकर प्रकाशित हो चुका है। दूसरा ग्वाल कवि का ग्रथ है जो अब तक छपा नहीं। उसकी कविता-शैली भी ऐसी उत्तम नहीं है। तीसरा ग्रंथ यह जोधराज का है। और भी अनेक ग्रथ इस विषय के होंगे, इसमें कोई सदेह नहीं। गद्य में भी अनेक ग्रथ लिखे गए हैं परतु दुःख के साथ कहना पडता है कि उनमें ऐतिहासिक खोज का बहुत कुछ अभाव देख पडता है। राजपूताने में दो हम्मीर हो गए हैं। एक उदयपुर के और दूसरे रणथंभौर के। लेखकों ने प्रायः दोनों के चरित्रों को मिलाकर एक कर डाला है और इसी भ्रम में पड़कर इतिहास के विरुद्ध बातें लिख डाली हैं। जिन हम्मीर की इतनी प्रसिद्धि है और जिनके गुण गाने से अब तक लोग उत्साहित होते हैं तथा जिन्होंने अलाउद्दीन से गर ठानी थी वे रण-थंभौर के चौहान थे, न कि उदयपुर के सिसौदिया हम्मीर। अतएव इस काव्य के विषय में कुछ लिखने के पहले अथवा इसके संबंध की ऐतिहासिक बातों का उल्लेख करने के पहले मैं जोधराज कृत इस काव्य में चौहान हम्मीर का जो कुछ चरित्र वर्णन किया गया है उसे

दे देना उचित समझता हूँ। इस सारांश के लिये, जो आगे दिया जाता है, मैं कुँवर कन्हैया जी का अनुगृहीत हूँ।

भारतवर्ष के अंतिम सम्राट् भृगु[१] कुलोत्पन्न महाराज पृथ्वीराज के वंश में चंद्रभान नाम का एक वीर पुरुष था। यद्यपि नीमराणा अब एक छोटी सी रियासत अलवर राज्य के अंतर्गत है, पर यहाँ के अधिपति चौहानों के मुकुटमणि माने जाते हैं। ये राजा अपने को महाराज पृथ्वीराज का वंशधर बताते हैं। महाराज चन्द्रभान को उनके वीरत्व, दातृत्व, औदार्य्य, पराक्रम, बुद्धिमत्ता और सर्वप्रियता के कारण लोग राठ[२] का महाराज कहा करते थे, और सब लोग उसी भाँति उसका आदर भी करते थे। उक्त चंद्रभान के दरबार में आदि गौड़-कुलोत्पन्न अत्रिगोत्रीय ब्राह्मण, बालकृष्ण का पुत्र जोधराज था। इस वंश के लोग डिडवरिया राव कहे जाते थे।

एक समय चंद्रभान ने जोधराज से हम्मीररासो के सुनने की इच्छा प्रकट की और कहा कि इस काव्य में महाराज हम्मीर की वंशावली, उनका अलाउद्दीन से वैर, उनकी वीरता और उनके युद्ध-कौशल इत्यादि का यथाक्रम सक्षेप में वर्णन होना चाहिए। तब जोधराज ने इस काव्य "हम्मीर रासो" की रचना की।

सृष्टिरचना—प्रथम कल्प के आदि में संसार रूपी उपवन के जीव-निर्जीव, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब पदार्थ वीर्य्यस्वरूप से उस परम प्रभु परमात्मा अनादि जगदीश्वर के स्वरूप में स्थित थे और वह प्रभु योगनिद्रा में निमग्न था। एक समय वह अपनी शक्ति का आप ज्ञान करके निद्रा से उठा और उसके इच्छा करते ही माया उत्पन्न

---

१ चहुआनों के भृगुवंशी होने का वर्णन आगे इसी पुस्तक में है।

२ पुस्तक में मूल पाठ "राठ पतिशाह" है जिसका अर्थ "राठ का बादशाह" होता है। 'राठ' उस भूभाग का नाम है जो अलवर और जयपुर राज्य के बीच में है और जहाँ नीमराणा राज्य स्थित है।

हुई। जिस समय शेषशायी भगवान् के नाभि-कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए वह वाराह कल्प का आदि था।

मानवसृष्टि—जलज से उत्पन्न हुआ ब्रह्मा बहुत समय पर्यंत इसी विचार में मुग्ध रहा कि मैं क्या करूँ। इसी प्रकार जब बहुत समय बीत गया तब उसे आपसे आप अनुभव हुआ कि तप करके सृष्टि उत्पन्न करनी चाहिए और उसने वैसा ही किया। पहले तो उसने अप, तेज, वायु, पृथ्वी, आकाशादि पंच महातत्त्वों की रचना की, तदनंतर बीज वृक्षादि जड़ वस्तुओं को रचना करके उसने सनक, सनंदन, सनत्कुमारादि चार पुत्र रचकर मानव जाति की वृद्धि करनी चाही; किंतु जब सनकादि कुमारों ने अखंड ब्रह्मचर्य्य धारण कर सांसारिक विषय-भोगादि से अरुचि प्रगट की तब ब्रह्मा ने उसी प्रकार से अन्यान्य मुनिवरों को उत्पन्न किया। ब्रह्मा के मन से मरीचि, कानों से पुलस्त्य, नाभि से पुलह, हाथों से क्रतु, त्वचा से नारद, छाया से कर्दम, पीठ से अद्धर्म, कंठ से धर्म्म और ओष्ठ से लोम ऋषि उत्पन्न हुए। इन्हीं ऋषियों से मनुष्यों की भिन्न भिन्न जातियों की वृद्धि हुई।

चंद्रवंश और सूर्य्यवंश—ब्रह्मा के पुत्र मरीचि के १३ स्त्रियाँ थीं जिनमें से एक का नाम कला था। कला के कश्यप और धर्म दो पुत्र हुए। अत्रि ऋषि के तीन पुत्र हुए जिनमें से बड़े का नाम सोम था और कनिष्ठ का नाम दुर्वासा। उक्त सोम का पुत्र बुध और बुध का पुत्र पुरुरवा हुआ। इस पुरुरवा के ६ पुत्र हुए जिनसे चंद्रवंशियों के ६ कुल प्रख्यात हैं।

इसी प्रकार भृगु मुनि से चहुआन क्षत्रियों का वंश चला जिसका वर्णन इस प्रकार से है कि भृगु मुनि की पहली स्त्री से धाता और विधाता नाम के इनके दो पुत्र हुए। भृगु की दूसरी स्त्री से दैत्यगुरु का और च्यवन ऋषि का जन्म हुआ। च्यवन के ऋचीक, इनके जमदग्नि और जमदग्नि के परशुराम नामक क्षात्र वृत्तिधारी पुत्र हुए जिन्होंने क्षात्र धर्म्म से च्युत विषयलोलुप सहस्रों क्षत्रिय राजाओं

को मारकर उनका वंश पर्य्यंत नाश कर डाला और उनके रुधिर से पितृ-देवताओं का तर्पण किया। इस प्रकार परशुराम के पराक्रम से प्रसन्न हुए पितृ-देवताओं ने परशुराम को शांत होकर तप करने की आज्ञा दी।

आबूराज प र्वत पर यज्ञ और चहुआनों की उत्पत्ति—इधर सृष्टि के शासनकर्ता क्षत्रियों के समूल उन्मूल हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी और दैत्य और राक्षसों के उपद्रव से ऋषि लोगों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों के उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचारकर अर्बुदगिरि अर्थात् आबू के पहाड़ पर गए। वहाँ पर सब ऋषियों ने शिव की आराधना की। तब शिव ने भी वहाँ आकर मुनिवरों की प्रार्थना स्वीकार की और वे उक्त पर्व्वत पर अचल रूप से विराजमान हुए; अस्तु तब मुनिवरों ने भी सुंदर वेदिका रचकर यज्ञ-कर्म्म आरंभ किया। इस यज्ञ में द्वैपायन, वशिष्ठ, लोम, दालिभ, जैमिनि, दर्पन, धौम्य, भृगु, घटयोनि, कौशिक, वत्स, मुद्गल, उद्दालक, मातंग, पुलह, अत्रि, गौतम, गर्ग, शांडिल्य, भरद्वाज, जाबालि, मारकंडेय, जरत्कारु, जाजुल्य, पराशर, च्यवन और पिप्पलाद आदि मुनियों का समारोह हुआ था। इसके अतिरिक्त शिव और ब्रह्मा भी स्वयं वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्निशिखाएँ आकाश को स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से निकले। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पा दैत्यों से युद्ध भी किया; किंतु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके। तब ऋषियों ने उक्त यज्ञस्थल को त्यागकर उसी पहाड़ पर नैऋत दिशा में दूसरा अग्निकुंड निर्माण किया। इस बेर के यज्ञ में ब्रह्मा ने ब्रह्मा, भृगु मुनि ने होता, वशिष्ठ ने आचार्य्य, वत्स ने ऋत्विक और परशुराम ने यजमान का कार्य्य संपादन किया।

निदान इस यज्ञ से जो अग्नि के समान तेजवाला पुरुष उत्पन्न हुआ उसका नाम चहुआन जी हुआ; क्योंकि इनके चार बाहु थे और प्रत्येक बाहु खड्ग, धनुष, शूल और चक्र इन चारों आयुधों को धारण किए हुए था। इस पुरुष ने ऋषिवरों के आशीर्वाद और निज कुलदेवी आशापूरा के प्रसाद से संपूर्ण दैत्यों का वध कर ऋषि और देवताओं को प्रसन्न किया।

कथामुख—इस प्रकार यज्ञकुंड से उत्पन्न चहुआन जी के वंश में बहुत दिनों पीछे विक्रमीय १२वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के आरंभ में राव जैतराव चहुआन जन्मे। एक समय जैतराव जंगल में शिकार खेलने गए। वहाँ उन्होंने एक बलवान् वाराह को देखकर उसके पीछे घोड़ा डाल दिया। बहुत दूर निकल जाने पर एक गंभीर वन में वाराह तो अदृष्ट हो गया और राव जी संगी साथियों से छूटकर चकित चित्त अकेले उस वन में भटकते फिरने लगे। ऐसे समय में वहाँ उन्हें एक ऋषि का आश्रम देख पड़ा। वहाँ जाकर वे देखते क्या हैं कि परम रमणीय पर्णकुटी में कुशासन पर बैठे हुए पद्म ऋषि जी ध्यान में मग्न हैं। राव जी ने उनके निकट जाकर साष्टांग प्रणाम किया और उनके दर्शन से अपने को कृतार्थ जानकर वे उनकी स्तुति करने लगे। निदान तब ऋषि ने भी प्रसन्न होकर राव जी को आशीर्वाद दिया, और कुछ दिवस पर्य्यंत उसी स्थान पर रहकर उन्हें शिवार्चन करने का भी उपदेश दिया। राव जी ने वैसा ही करके शिव को प्रसन्न किया। तब ऋषि ने पुनः आज्ञा दी कि राव जी तुम यहाँ एक गढ़ भी निर्माण करो। अस्तु राव जी ने उसी समय अपने मित्र, मंत्री और सुहृदों को बुलाकर संवत् १११० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार को पाँच घटी सूर्य्योदय में रणथंभगढ़ की नींव डाली और उसी के उपत्य में एक रमणीक नगर भी बसाया।

ऋषि का तप भंग होना—उस पर्वतावेष्टित प्रच्छन्न एवं दृढ़ दुर्ग की रम्य भूमि को पद्म ऋषि ने राव जी से अपने रहने के लिये माँग लिया और उसी मे रहकर वे तप करने लगे। जब उनके उग्र

एवं पवित्र तप की सूचना इंद्र को मिली तब भीरुहृदय इंद्र ने अपने श्रीभ्रष्ट होने के भय से आशंकित होकर पद्म ऋषि का तप भ्रष्ट करना चाहा और इसीलिये उसने इस कर्म के लिये कुकर्मी-मकरकेतु को उपयुक्त जानकर उसे आज्ञा दी कि हे मित्र, तू अपने सच्चे सहचर वसंत के सहित जाकर रणथंभ गढ़ में तप करते हुए तेजस्वी पद्म ऋषि की श्री नष्ट कर दे। इस प्रकार इंद्र से उत्तेजित किया हुआ कामदेव अपनी सहकारी षट् ऋतुओं सहित रणथंभ गढ़ में ध्यानमग्न पद्म ऋषि को जाग्रत करने की इच्छा से ऋतुओं के उपचार का प्रयोग करने लगा, किंतु ग्रीष्म का प्रचंड मार्तंड और मलय समीर, पावस के पपीहा, शरद की स्वच्छ चाँदनी, शिशिर के दुशाला और हेमंत के पाला को पराजित करनेवाले मसाले भी जब ऋषि की समाधि भंग न कर सके, तब उस कुसुमायुध ने साक्षात् शिव को रसिक बनानेवाले वसंत का प्रयोग किया अर्थात् उस जनशून्य वन में नाना प्रकार के पुष्प प्रस्फुटित हुए और उनपर मधुप गुंजार करते हुए आनंद से मकरंद पान करने लगे, जहाँ तहाँ नाना वर्ण के पक्षी-सावक कलरव करते हुए कल्लोल करने लगे। उसी समय इंद्र द्वारा प्रेरित अप्सराओं ने आकर नृत्य और गान करते हुए उस शिखरशैली को इंद्र का अखाड़ा बना दिया, तब उपयुक्त समय जानकर कामदेव ने भी अपने शरों से मुनिवर के शरीर को बेध दिया। इस प्रकार समाधि भंग होने पर जब मुनि ने आँख उठाकर देखा तो देखते क्या हैं कि उस रणथंभ के अभेद्य दुर्ग में शांत रस को पराजित कर शृंगार रस ने पूर्णतया अपना अधिकार जमा लिया है और एक चंद्रमुखी मृगलोचनी, गयंदगामिनी, नवयौवना सन्मुख खड़ी हुई मुनि की ओर कटाक्ष-सहित देख रही है। यह देखकर पद्म ऋषि के शरीर से शांति और तप इस प्रकार विदा हो गए जैसे तुषारतोपित वृक्ष सुकोमल पल्लवों को त्याग देते हैं, एवं जिस प्रकार फल के लगते ही वृक्षगण सूखे पुष्प का अनादर कर देते हैं। इस प्रकार कामातुर होकर पद्म ऋषि समाधि छोड़ सुंदरी

का आलिंगन करने को उत्सुक हो उठे। उधर उस रमणी ने भी ऋषि के मनोगत भाव को जानकर उनका हाथ पकड़ लिया और तब वे दोनों आनंद से रस-क्रीड़ा करने लगे।

पद्म ऋषि का शोक और शरीरत्याग—इस प्रकार जब अधिक समय व्यतीत हो गया तब सुंदरी तो अंतर्हित होकर स्वर्ग को चली गई और पद्म ऋषि की भी मोहनिद्रा खुली। तब वे मन ही मन विचार और पश्चात्ताप करके विलाप करते हुए आप ही आप कहने लगे—हाय ! मैं कैसा दुर्बुद्धि हूँ कि मैंने क्षणिक सुख के लिये अपना सर्वनाश किया और फिर भी जिसके लिये सर्वस्व का त्याग किया वह भी पास नहीं। हा ! यह मैंने अब जाना कि पाप का परिणाम केवल संताप होता है और संतप्तहृदय मनुष्य जो कुछ कर डाले सब थोड़ा है। हाय, मैं तप से भी गया, भोग से भी गया, अब मैं इस शरीर को रखकर क्या करूँ ? इस प्रकार शोकातुर होकर मुनि ने एक वेदिका रचकर उसमें अपने शरीर के पाँच खंड करके होम कर दिए। जिस समय पद्म ऋषि ने शरीर त्याग किया उस दिन माघ शुक्ल १२ सोमवार आर्द्रा नक्षत्र था। पद्म ऋषि के मस्तक से अलाउद्दीन बादशाह, वक्षस्थल से राव हम्मीर, भुजाओं से महिमाशाह और मीर गभरू, चरणों से उर्वसी अर्थात् अलाउद्दीन की उस बेगम का अवतार हुआ जो कि इस आख्यान की नायिका है।

हम्मीर का जन्म—पद्म ऋषि के उपर्युक्त रीति से शरीर त्यागने के पश्चात् अर्थात् संवत् ११४१, शाका १००६ दक्षिणायन शरद ऋतु कार्तिक शुक्ला १२ रविवार को उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में उक्त रणथंभ गढ़ के चहुआन राव जैतराव जी के हम्मीर नाम का एक पुत्र जन्मा। पुत्र का प्रफुल्लित मुख देखकर जैतराव के आनंद का ठिकाना न रहा। उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाकर लग्न-कुंडली बनवाई। सहस्रों ब्राह्मणों, भिक्षुकों और बंदीजनों को यथायोग्य संमान अन्नदान, गोदान, हेमदान, गजदान देकर सबको संतुष्ट किया।

जिस समय रणथंभ गढ़ में हम्मीर का जन्म हुआ उसी समय गजनी में शहाबुद्दीन के पुत्र अलाउद्दीन का तथा मीणा के घर महिमा मंगोल दोनों भाइयों का और गभरू के घर उक्त स्त्री का अवतार हुआ।

हम्मीर और अलाउद्दीनशाह का वैर—एक समय वसंत ऋतु के आरंभ में अलाउद्दीन ने सहस्त्रों सैनिक और अमीर उमराओं तथा बेगमों को साथ लेकर शिकार के लिये यात्रा की। उसने एक परम रमणीक वन प्रांत में शिविर लगवा दिए और वह उसी वन में इतस्ततः आखेट करके जंगली जंतुओं के प्राण संहार करने लगा। इसी प्रकार जब वसंत का अंत होकर ग्रीष्म के आतप से भूमि उत्तापित हो रही थी, अलाउद्दीन सब सर्दारों सहित शिकार खेलने चला गया। इधर बेगमें भी अपनी सखी सहेली और अगनित खोजाओं को लेकर एक कमलवन-संपन्न निर्मल सरोवर पर जाकर जलक्रीड़ा करने लगीं। दैवयोग से उसी समय सहसा वायु का वेग बढ़ते बढ़ते इतना प्रचंड हो गया कि बड़े बड़े मेघस्पर्शी वृक्ष टूट-टूटकर गिरने लगे; धूलि के आकाश में आच्छादित हो जाने के कारण घोर अंधकार छा गया। इस आकस्मिक घटना से भयभीत होकर सब लोग तीन तेरह होकर अपने अपने प्राणों की रक्षा करने के लिये जहाँ तहाँ भागने लगे, जलक्रीड़ा करती हुई बेगमों में से "रूपविचित्रा" नामक एक बेगम जो कि स्वरूप और गुण में सब बेगमों से श्रेष्ठ थी, भटककर एक ऐसे निर्जन प्रांत में जा पहुँची जहाँ हिंसक जंतुओं के भीषण नाद के सिवाय अन्य शब्द ही न सुन पड़ता था। जिस समय रूपविचित्रा भय एवं शीत के कारण थर थर काँपती हुई प्राणरक्षा के लिये ईश्वर का स्मरण कर रही थी उसी समय महिमा मीर वहाँ आ पहुँचा। जब उसे पूछने पर ज्ञात हुआ कि उक्त स्त्री बादशाह की बेगम है तब उसने उसे घोड़े पर बैठालकर शिविर में ले जाने का आग्रह किया। इसपर रूपविचित्रा ने मीर महिमाशाह को धन्यवाद देकर कहा कि इस समय मेरा शरीर शीत

से अधिक व्याकुल हो रहा है, इसलिये तू आलिंगन से मुझे संतुष्ट कर। इसपर महिमाशाह ने उत्तर दिया कि एक तो मैं किसी भी पराई स्त्री को अपनी भगिनीवत् मानता हूँ तिसपर आप मेरे स्वामी की स्त्री हैं इसलिये आप मेरी माता समान हैं अतएव मैं यह अकर्तव्य एवं पाप कर्म करने को कदापि सहमत नहीं हूँ। तब रूपविचित्रा ने पुनः उत्तर दिया कि क्या आप यह नहीं जानते कि अपने मुख से माँगती हुई स्त्री को रति-दान न देना भी तो एक ऐसा पाप है कि जिसका कोई प्रायश्चित्त है ही नहीं, और हे वीर युवक, तेरे रूप और गुणों की प्रशंसा पर मोहित हुआ मेरा मन तेरे लिये बहुत दिनों से व्याकुल है । भाग्यवश आज यह संयोग प्राप्त हुआ है। बेगम का ऐसा बातें सुनकर महिमाशाह का भी मन डोल उठा और तब उसने घोड़े को एक समीपवर्त्ती वृक्ष से बाँध दिया हथियार खोल-कर पास रख लिए और वहीं उस स्त्री की मनोकामना पूर्ण करने लगा। उसी समय एक गर्जता हुआ विकराल सिंह सामने आता देख पड़ा। उसे देखकर रूपविचित्रा थर थर काँपने लगी, किंतु महिमाशाह ने उसे धैर्य देकर कहा कि भय मत करो कोई डर नहीं, और कमान को उठाकर एक ही बाण से उसने सिंह को मार डाला।

उपर्युक्त प्राकृतिक उपद्रव के शांत होते ही सहस्रों मनुष्य बेगम की खोज में इधर-उधर फिरने लगे। उनमें से कोई कोई तो बेगम के पास तक आ पहुँचे और उसे शाही शिविर में लिवा ले गए। रूपविचित्रा को पाकर अलाउद्दीन अत्यंत प्रसन्न हुआ जब ग्रीष्म का अंत हो गया और पावस की घनघोर घटाएँ घिर घिरकर आने लगीं तब अलाउद्दीन ने लश्कर-सहित दिल्ली को कूच कर दिया।

दिल्ली के राजमहल में एक दिन आधीरात को जिस समय अलाउद्दीन रूपविचित्रा के पास बैठा था, उसी समय एक चूहा आ निकला। उसे देखते ही बादशाह का काम-ज्वर जीर्ण हो गया, किंतु उसने किसी प्रकार सम्हलकर उस चूहे को लक्ष्य करके एक ऐसा

बाण मारा कि वह वहीं मर गया। चूहे को मारकर अलाउद्दीन की प्रसन्नता का अंत न रहा, इसलिये उसने रूपविचित्रा से कहा कि मैं जानता हूँ कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही कायर होती हैं, इसलिये मैंने यह पुरुषार्थ प्रगट किया है। यह सुनकर रूपविचित्रा ने मुसकराकर कहा—पुरुषार्थी मनुष्य वे होते हैं जो इसी अवस्था में सिंह को सहज ही मारकर शेखी की बात नहीं करते। बेगम को ऐसी बातें सुनकर अलाउद्दीन आश्चर्य और क्रोध के समुद्र में गोते खाने लगा, किंतु उसने अपने को सम्हालकर कहा कि जो तू ऐसा पुरुष मुझे बतला दे तो मैं उससे बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक मिलूँ अथवा उसने मेरा कैसा ही अपराध क्यों न किया हो मैं सर्वथा उसे क्षमा करूँ। तब बेगम ने अपना और मीर महिमाशाह का भूत वृत्तांत कह सुनाया और कहा कि उस वीर पुरुष के ये चिह्न हैं कि न तो वह उकडूँ बैठकर भोजन करता है, न शरणागत को त्यागता है, और न बिना किसी विशेष कारण के झूठ बोलता है। यह सुनते ही बादशाह का क्रोध इस प्रकार बढ़ उठा जैसे सचिक्कन पदार्थ की आहुति से अग्नि का तेज बढ़ उठता है। अलाउद्दीन ने उसी समय महिमाशाह को बुलाए जाने की आज्ञा दी। इधर रूपविचित्रा भी अपनी मूर्खता पर पछताने लगी। अंत में उसने साहसपूर्वक बादशाह से कहा कि यदि आप उस वीर पुरुष को कुछ दंड देना चाहते हों तो प्रथम मुझे ही मरवा डालिए, क्योंकि इसमें वास्तव में मेरा ही दोष है, न कि उसका। जहाँपनाह क्या यह अन्याय न होगा कि एक निरपराधी पुरुष दंड पावे और अपराधी को आप गले से लगावें ? बेगम की ऐसी बातें सुनकर बादशाह ने महिमाशाह के आने पर उससे कहा कि "रे मूढ़ कुमार्गगामी अधम, अब मैं तेरा मुख नहीं देखना चाहता, बस अब यदि तुझे अपने प्राण प्यारे हैं तो इसी समय मेरे राज्य से चला जा।"

मीर महिमा और हम्मीर राव—क्रुद्ध अलाउद्दीन से तिरस्कृत होकर महिमाशाह ने घर आकर अपने सहोदर मीर गभरू से सारा

वृत्तांत कह सुनाया और उसी क्षण परिवार सहित वह दिल्ली से चल दिया। महिमाशाह जिस किसी राजा राव के पास जाता वह उसे शाह अलाउद्दीन का द्वेषी समझकर तुरंत ही अपने यहाँ से विदा कर देता। इसी प्रकार फिरते फिरते जब वह राव हम्मीर की ड्योढ़ी पर पहुँचा और उसने अपने आने की इत्तला कराई तो राव जी ने उसे बड़े ही संमानपूर्वक डेरा दिलवाया और दूसरे दिन अपने दरबार में बुलाया। दरबार में पहुँचकर महिमाशाह ने पाँच घोड़े, एक हाथी, दो मुलतानी कमान, एक तलवार, दो बाण, दो बहुमूल्य मोती और बहुत से ऊनी वस्त्र राव जी की नजर किए, जिनको राव जी ने सादर स्वीकार कर लिया। उसी समय मीर महिमाशाह ने अपनी बीती भी राव जी से निवेदन करके सविनय कहा—"मैं अलाउद्दीन के विरोधियों में से हूँ। यदि आपमें मेरी रक्षा करने की शक्ति हो तो शरण दीजिए अथवा मुझे भाग्य के भरोसे पर छोड़ दीजिए।" मीर के ऐसे वचन सुनकर हम्मीर ने कहा कि हे मीर मैं तुझे अभयदान देकर प्रण करता हूँ कि इस मेरे तनपिंजर में प्राण-पखेरू के रहते एक क्या सहस्रों बादशाह तेरा बाल बाँका नहीं कर सकते—यह रणथंभ का अभेद्य दुर्ग, ये अपने राजपूत वीर अथवा मैं स्वयं अपने को युद्धाग्नि में आहुति देने को प्रस्तुत हूँ परंतु तुझे न जाने दूँगा। इस प्रकार कहकर राव हम्मीर ने उसी समय मीर को पाँच लाख की जागीर का पट्टा कर दिया और तब से मीर आनंद-पूर्वक रणथंभौर के अभेद्य दुर्ग में रहने लगा।

इधर बादशाह के गुप्तचरों ने उसके संमुख यह समाचार जा सुनाया जिसके सुनते ही अलाउद्दीन पूँछ कुचले हुए काले सर्प की तरह क्रोधित हो उठा; किंतु वजीर बहराम खाँ ने आगत उपद्रव के टालने अथवा मीर महिमा के पक्षपात की इच्छा से दूत को डाँटकर कहा कि जिस मीर को सात समुद्र पार भी ठिकाना देनेवाला कोई नहीं है उसे हम्मीर क्या रखेगा। इसपर दूत ने पुनः कहा कि यदि मेरी बातों में कुछ भी असत्य हो तो मैं उचित दंड पाने के लिये

प्रस्तुत हूँ। दूत की ऐसी दृढ़ता देखकर अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि हम्मीर को एक पत्र इस आशय का लिखा जाय कि वह मेरे अपराधी को स्थान न देवे क्योंकि अब तक वह मेरा मित्र है, न कि शत्रु। यदि वह अपने हठ से न हटे तो उसे उचित है कि वह सम्हल जाय, मैं क्षण मात्र में उसके समस्त दर्प और हठ को धूल में मिला दूँगा। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही एक दूत को बहुत कुछ समझा बुझाकर रणथंभ की तरफ भेजा गया।

दूत ने रणथंभ जाकर बादशाह का पत्र राव हम्मीर जी को दिया और कहा कि आप बादशाह अलाउद्दीन के बल, पुरुषार्थ और पराक्रम एवं अपने भविष्य के विषय में भी खूब सोच-विचारकर उत्तर दीजिए। इस पत्र का उत्तर राव जी ने इस प्रकार मे लिखा कि मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि आप दिल्ली के बादशाह हैं; परंतु मैं जो प्रण कर चुका हूँ, उसे अपने जीवन पर्यंत छोड़ने का नहीं। इसलिये उचित यही है कि आप अब मुझसे महिमाशाह के विषय में बात भी न करें, और जो कुछ आपसे बन पड़े उसके करने में विलंब भी न कीजिए। इस पत्र को पाकर बादशाह का क्रोध और भी बढ़ उठा परंतु राजमंत्रियों के समझाने-बुझाने पर उसने एक बार फिर राव हम्मीर के पास दूत भेजकर उसके मन की थाह ली। परंतु उस वीर पुरुष ने बड़े धैर्य और साहस के साथ फिर भी वही उत्तर दिया। राव हम्मीर जी के हठ और साहस के सामने बादशाह की बुद्धि भी चक्कर में पड़ गई, उसे भी अपने आगे पीछे का सोच पड़ गया। उसने विचार किया कि जब राव हम्मीर में इतना साहस है तब उसका कुछ कारण भी होगा, यदि न भी हो तो प्राण की परवाह न करनेवाले के सामने विरले ही माई के लाल खड़े हो सकते हैं। सिंह हाथी से बहुत ही छोटा है किंतु वह अपने साहस और पुरुषार्थ ही से उसे मार डालता है। इसी प्रकार सोच विचार करते हुए बादशाह ने अपने सब दरबारियों को बुलाकर हम्मीर के हठ और अपने कर्तव्य की [illegible]

में 'हाँ' मिला दी, सिर्फ एक वृद्ध पुरुष ने कहा कि उस चहुआन के फेर में न पड़िए, रणथंभ पर चढ़ाई करना सहज नहीं है। परंतु वृद्ध की इस बात पर ध्यान भी न दिया गया। अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि यथासंभव शीघ्र ही फौज तय्यार की जाय। बादशाह की आज्ञा पाते ही जहाँ तहाँ पत्र भेजकर सोरठ. गिरनार और पहाड़ी देशों के अनेक राजपूत सरदार बुलाए गए। तब तक इधर शाही वैतनिक फौज भी तय्यार हो गई और फौज के लिये आवश्यक रसद बरदास भी इकट्ठी हो गई।

निदान इस प्रकार अरबी, काबुली, रूमी इत्यादि मुसलमान वीरों की सत्ताईस लाख जंगी फौज और अट्ठारह लाख परिकर कुल ४५ लाख मनुष्य, ५००० हाथी और पाँच लाख घोड़ों की भीड़ भाड़ लेकर अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ पर चढाई करने को चैत्र मास की द्वितीया सवत् ११३८ को कूच किया। जिस समय यह शाही दल बल राव हम्मीर जी की सरहद में पहुँचा उस समय वहाँ की प्रजा में कोलाहल मच गया। अलाउद्दीन के आज्ञानुसार सब सैनिक सिपाही प्रजा को नाना प्रकार के कष्ट देने लगे। इसलिये सब लोग भाग-भागकर रणथंभ के गढ़ में शरण के लिये पुकारने लगे। इसी प्रकार निरपराधी प्रजा का खून करते हुए जब यह दल बल "नल हारणी गढ़" के किले पर पहुँचा तब वहाँ के किलेदार ने तीन दिन पर्य्यंत शाही फौज का मुकाबिला किया। किंतु अंत में किले पर बादशाही दखल हो गया। इसलिये यहाँ का किलेदार भी रणथंभ को दौड़ गया और उसने बादशाह के अगनित दल बल का समाचार विधिवत् राव हम्मीर जी के समुख निवेदन किया। इस समाचार के पाते हम्मीर की बंक भृकुटी और भी टेढी हो गई, कमल समान नेत्र अग्नि-शिखा से लाल हो उठे, बाहु और ओठ फड़कने लगे। रावजी का ऐसा ढंग देखकर अभयसिंह प्रमार, भूरसिंह राठौर, हरिसिंह बघेला, रणदूला चहुआन और अजमतसिंह इन पाँच सर्दारों ने २०००० फौज लेकर शाही फौज को रास्ते में रोक लिया

और वे ऐसे पराक्रम से लड़े कि बादशाही सेना के पैर उखड़ गए और बड़े बड़े अमीर उमरा जहाँ तहाँ भागने लगे। उस समय अलाउद्दीन के वजीर महिरज खाँ ने कहा—"मैंने पहले ही अर्ज किया था कि एक तो राजपूत अपनी बात रखने के लिये जान देने की कभी परवाह नहीं करते, फिर भी उस पहाड़ी किले पर फतह पाना बहुत ही मुश्किल काम है"। किंतु बादशाह ने फिर भी उसकी बात यों ही टाल दी और आगे कूच करने की आज्ञा दी। इस युद्ध में अलाउद्दीन के ३०००० सिपाही, डेढ़ सो घोड़ और कई एक अमीर उमरा काम आए किंतु राव हम्मीर के १२५ सिपाही और १० सर्दार खेत रहे और अभयसिंह प्रमार के सीस में बहुत गहरे गहरे २१ घाव लगे।

अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ के पास पहुँचकर चारों तरफ से किले को घेरकर फौज का पड़ाव डाल दिया और फिर से एक दूत के हाथ पत्र भेजकर राव हम्मीर जी से कहला भेजा कि अब भी मेरे अपराधी मीर महिमाशाह को मेरे पास हाजिर करके मुझसे मिलो तो मैं तुम्हारे अपराध को क्षमा कर दूँगा। इस बार राव जी ने जो उत्तर दिया वह इस प्रकार था—"मैं जानता हूँ तू बादशाह है, परंतु मैं भी उस चहुआन कुल में से हूँ जिसने सदैव मुसलमानों के दाँत खट्टे किए हैं। ख्वाजा मीराँ पीर का एक लाख अस्सी हजार दल बल अजमेर में चहुआनों ने ही खपाया था। पुनः बीसलदेव जी ने सौनगरा का शाका किया, उसी वंश के पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन का सात बार पकड़कर छोड़ दिया। बस मैं उसी चहुआन कुल में हूँ और तू भी उसी पीर मर्द औलिया खानदान का मुसलमान है। देख अब किसकी टेक रहती है। हे यवनराज, तू निश्चय रख, मेरी टेक यह है कि सूर्य्य चाहे पूर्व से पश्चिम में उगने लगे, समुद्र मर्य्यादा छोड़ दे, शेष पृथ्वी को त्याग दे, अग्नि शीतल हो जाय, परंतु राव हम्मीर का अटल प्रण नहीं टल सकता। देव अलाउद्दीन, संसार में जो जन्म लेता है वह एक दिन मरता अवश्य है; अथवा जिसकी उत्पत्ति है उसका नाश होता ही है। फिर इस क्षणभंगुर शरीर के

क्षिये शरणागत को त्यागकर अपने कुल में मैं कलंक नहीं लगाना चाहता। तुझे कितना दर्प है जो अपने सामने दूसरे को वीर नहीं गिनता। इस पृथ्वी पर रावण, मेघनाद सरीखे अभिमानी और अतुल बलशाली वीर पानी के बबूले की तरह बिला गए। यवनराज! मनुष्य नहीं रहता, परन्तु उसके कर्तव्य की कहानियाँ अवश्य रहती हैं। अतएव अब तुझे जो सूझे सो कर। मैं भी सब तरह से तैयार हूँ।"

अलाउद्दीन के दूत को इस प्रकार उत्तर देकर राव हम्मीर जी शिवालय मे जाकर शिवार्चन करने लगे। धूप, दीप नैवेद्य संयुक्त विधिवत् पूजा करके जिस समय राव जी ध्यानमग्न थे उसी उसी समय शिवालय में आकाशवाणी हुई कि हे हम्मीर तुमसे और अलाउद्दीन से १२ वर्ष पर्य्यंत संग्राम होगा। तत्पश्चात् आषाढ़ सुदी ११ को तुम्हारा शाका पूर्ण होगा जिससे संसार म चिरकाल तक तुम्हारा यश बना रहेगा। शिव जी से इस प्रकार वरदान पाकर राव जी ने प्रसन्न होकर अपने समस्त शूर वीर सरदारों को युद्ध के लिय सन्नद्ध होने की आज्ञा दी। उसी समय हम्मीर के चाचा राव रणधीर ने, जो कि "छाड़गढ़" के किले के स्वामी थे, हम्मीर से कहा कि श्रीमान् क्षमा करें इस समय मेरे हाथ देखें।

इधर हम्मीर जी का पत्र पाते ही अलाउद्दीन लाल पीला सा हो उठा और उसने उसी समय रणथंभ के किले पर चारो ओर से गोले और बाणों की वर्षा करने की आज्ञा दी। बादशाह की आज्ञा पाते ही मुसलमान सेनानायक महम्मद अली रणथंभ के अजेय दुर्ग को पाने के लिये प्रयत्न करने लगा। इधर से राव रणधीर ने भी किले की बुर्जी पर से अग्निवर्षा करने की आज्ञा दी और आप कुछ सैनिकों सहित मुसलमानी सेना में वह इस प्रकार धँस पड़ा जैसे भेड़ों के समूह में भेड़िया धँसता है। निदान पहली वरणी राव रणधीर और मुहम्मद अली की हुई जिसे राव जी ने एक ही हाथ में दो कर दिया। यह देखकर उसका पीठि-नायक अजमत खाँ राव जी के

संमुख आया। किंतु राव रणधीर ने उसे भी मार गिराया। अजमत खाँ के गिरते ही मुसलमानी सेना के पैर उखड़ गए। इस युद्ध में मुसलमान सेना के अस्सी हजार अस्त्रधारी खेत रहे और राव रणधीर के केवल एक हजार जवान मारे गए। मुहम्मद मीर के मारे जाने पर जब मुसलमानी फौज भागने लगी तब अलाउद्दीन ने वादित खाँ को सेनानायक बनाया। वादित खाँ ने बड़े धैर्य्य और दृढ़ता से उत्तेजनाजनक वाक्य कहकर, बिखरी हुई फौज को बटोरकर, राजपूत वीर राव रणधीर का सामना किया किंतु अंत में उसे भी भूत सेनानायकों के भाग्य में भाग लेना पड़ा।

वादित खाँ के मरते ही सारी सेना में कुहराम मच गया। अलाउद्दीन स्वयं निस्तेज होकर पीर पैगंबरों को पुकारने लगा। तब वजीर महम्मद खाँ ने कहा कि इस प्रकार संमुख युद्ध करके जय पाना तो कठिन है। इसलिये कुछ सेना यहाँ छोड़कर छाड़गढ़ के किले पर चढ़ाई की जाय। उस किले में राव रणधीर के लोग रहते हैं। निदान अपने परिवार पर भीड़ पड़ी देखकर यदि राव रणधीर शरण में आ जाय तो फिर अपनी जय होने में कोई संदेह नहीं है। निदान वजीर की बात मानकर बादशाह ने वैसा ही किया; किंतु पाँच वर्ष व्यतीत हो गया और छाड़गढ़ का किला हाथ न आया। वरन् इसी में एक नवीन बात यह निकल पड़ी कि दिन भर तो हम्मीर जी युद्ध करते और रात को रणधीर का धावा पड़ता जिससे शाही सेना अत्यंत व्याकुल हो उठी। बड़े बड़े अमीर उमरा मिट्टी मोल मारे जाने लगे। अधिक क्या, आरंभ से अंत तक जितनी लड़ाइयाँ हुईं उन सब में राजपूत वीरों की ही जय हुई। निदान जब अलाउद्दीन की तरफ के अब्दुलकरीम, करम खाँ, यूसफ जंग इत्यादि बड़े बड़े बुद्धिमान् योद्धा सर्दार मारे गए और राव रणधीर जी तथा हम्मीर जी का बाल भी न बाँका हुआ, तब अलाउद्दीन घबरा उठा और फिर से अमीर उमरावों की सभा करके अपने उद्धार का उचित उपाय विचारने लगा।

इसी समय राव रणधीर जी ने हम्मीर जी से कहा कि यदि चित्तौर में दोनों कुमार बुला लिए जायँ तो अच्छा हो। इसपर राव जी ने भी "अच्छा" कह दिया। तब राव रणधीर ने रणथंभ का सब समाचार लिखकर चित्तौर भेज दिया। उक्त समाचार के पाते ही दोनों राजकुमार तीस हजार राठौर, आठ हजार चहुआन, और पाँच हजार प्रमार राजपूतों की सेना लेकर रणथंभ को चले आए। दोनों राजकुमारों को देखकर राव हम्मीर जी ने प्रसन्नता-पूर्वक उन्हें गले लगा लिया और मीर महिमा को शरण देने के कारण अलाउद्दीन से रार बढ़ जाने का हाल भी विधिवत् वर्णन कर सुनाया, जिसे सुनते ही दोनों राजकुमारों का मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने वीर रस में उन्मत्त होकर मदांध मृगराज की भाँति झूमते हुए राव जी से कहा कि अब तक आपने परिश्रम किया अब तनिक हमारा भी पराक्रम देख लीजिए। यों कहकर दोनों राजकुमार रनिवास में गए। राव हम्मीर की रानी आसुमती के चरण छूकर वे बोले कि हे माता आप कृपा कर हमारे मस्तक पर मौर बाँधकर हमें युद्ध करने का आशीर्वाद दीजिए। दोनों राजकुमारों के ऐसे वचन सुनकर आसुमती ने भी सुतस्नेह में सने हुए वाक्यों से संबोधन करते हुए उन्हें कलेजे से लगा लिया और अपने हाथों उनके शीश पर मौर बाँधा और केशरी बाना पहिनाकर उन्हें युद्ध में जाने को विदा किया।

जिस समय आसुमती कुमारों का शृंगार कर रही थी उस समय छाड़गढ़ के किले में इस प्रकार घनघोर रव हो रहा था कि जिससे दिशाओं के दिग्पाल चौंकन्ने हो रहे थे। यह खरभर देखकर अलाउद्दीन ने अपने मंत्री से पूछा कि आज छाड़गढ़ में यह उत्सव किसलिये हो रहा है। तब एक अमीर ने उत्तर दिया कि राव हम्मीर जी के छोटे भाई के पुत्रों ने स्वयं युद्ध के लिये सिर पर मौर बाँधा है। उसी के उत्सव में यह गान-वाद्य हो रहा है। यह सुनकर बादशाह ने जमाल खाँ को बुलाकर कहा कि तुमने ही पृथ्वीराज को कैद

किया था; आज भी अगर तुम दोनों राजकुमारों को पकड़ लोगे तो मेरी अत्यंत प्रसन्नता के पात्र होगे। इस प्रकार समझा-बुझाकर उस दिन के युद्ध के लिये अलाउद्दीन ने मीर जमाल को सेनानायक बनाया।

इधर से दोनों राजकुमार केसरिया बाना पहिने, सीस पर मुकुट, हाथों में रणकंकण बाँधे अपने अपने तेज तुरंगों पर सवार सोलह हजार राजपूतों की सेना के बीच में ऐसे भले मालूम देते थे मानों रणबाँकुरे देवताओं के दल में इंद्र और कुबेर सुशोभित हो रहे हों। दोनों वीर सेना सहित उज्ज्वल नेजे और खड्ग चमकाते हुए मुसलमान सेना में इस प्रकार धँस पड़े जैसे काले काले बादलों में बिजली विलीन हो जाती है। इधर अलाउद्दीन से उत्तेजित किए हुए यवन-दल ने उन राजकुमारों को घेर लिया और जमाल खाँ बड़े वेग से उन दोनों राजकुमारों पर टूटा। वे वीर राजकुमार भी बड़ी धीरता से उसका सामना करने लगे। यह देखकर राव हम्मीर जी ने वीर शंखोदर को कुमारों की सहायता के लिये भेजा। इसपर इधर से अरबी फौज का धावा हुआ। राजपूत और मुसलमान सेना में इस प्रकार विकट मार होने लगी कि किसी को अपना बिगाना न सूझता था। इसी समय जमाल खाँ ने अपना हाथी राजकुमारों के सामने बढ़ाया। तब कुमार ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि एक ही हाथ में लोहे का टोप कटते हुए मीर जमाल की खोपड़ी के दो टूक हो गए। जमाल खाँ को गिरता देखकर वालन्न खाँ ने धावा किया। इधर से वीर शंखोदर ने बढ़कर उसका मुख रोका। निदान सायंकाल तक बराबर लोहा झरता रहा। दोनों कुमार अपनी समस्त सेना के सहित स्वर्गगामी हुए। इस युद्ध में मुसलमानी फौज के ७५००० योधा खेत रहे।

इस प्रकार दोनों राजकुमारों के मारे जाने पर राव रणधीर ने क्रोधित होकर किले पर से आग बरसाना आरंभ कर दिया। तब बादशाह ने कहला भेजा कि आप क्यों जान-बूझकर जान देने पर उतारू हुए हैं, आपके लड़कर मर जाने से इस झगड़े का अंत न

होगा। यदि आप राव हम्मीर जी को समझाकर मीर महिमा को मेरे पास भेजवा दें तो आप या राव हम्मीर जी दोनों सुख से राज्य करें और हम दिल्ली चले जायँ। किंतु बादशाह के पत्र का राव रणधीर ने केवल यही उत्तर दिया कि क्षत्रियों का यह धर्म नहीं है कि विषय-सुख-भोग की लालसा अथवा मृत्यु के डर से वे अपने धारण किए हुए धर्म्म को त्याग दें। राव रणधीर की ओर से इस प्रकार कोरा उत्तर पाकर अलाउद्दीन ने अपनी फौज को भी छाड़ के किले पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही मुसलमानी फौज ने टिड्डी दल की तरह उमड़कर किले को चारों ओर से घेर लिया और वे किले पर से चलते हुए गोले, गोली, बाण बर्छों की विषम बौछार की कुछ भी परवाह न करके किले पर चढ़ दौड़े। मुसलमानी सेना जब किले में धस पड़ी तब राजपूत लोग सर्वथा प्राण का मोह छोड़कर तलवार से काम लेने लगे। दोनों में अस्त्रों का संचालन बिलकुल बंद हो गया। केवल तबल, तलवार, बरछा, कटार, सेल से काम लिया जाने लगा। इसी रेलापेल में बादशाह के निज पेशकार (नगली) ने राव हम्मीर की तलवार के सामने आने की हिम्मत की किंतु वीर रणधीर के एक ही वार में उसके जीवन का वारा न्यारा हो गया, इसलिये उसके सहकारी रूमी सर्दार ने अपने ५० बलवान् योद्धाओं सहित रणधीर जी को घेर लिया। राव रणधीर ने इन पचासों सिपाहियों को मारकर रूमी सरदार को भी दो टूक कर दिया। इसी प्रकार मार काट होते हुए राव रणधीर सहित जितने राजपूत वीर उस किले में थे सबके सब मारे गए और छाड़-गढ़ का किला बादशाह के हाथ आया। इस युद्ध में शाही फौज के दो बड़े बड़े सर्दार और एक लाख रूमी सैनिक खेत रहे और राव रणधीर के साथी ३०००० राजपूत काम आए। यह छाड़गढ़ का अंतिम युद्ध चैत्र सुदी ९ शनिवार को हुआ। बीस हजार केवल राजपूत मारे गए और एक हजार राजपूतनी स्त्रियाँ स्वयं जलकर भस्म हो गईं।

छाड़गढ़ का किला फतह करके अलाउद्दीन ने अपने लश्कर की बाग रणथंभ गढ़ की ओर मोड़ी और कुँवार सुदी ९ शनिवार को किले के चारों तरफ घेरा डालकर दूत के हाथ राव हम्मीर जी के पास कहला भेजा कि अब भी यदि महिमाशाह को मेरे पास भेज दो तो मैं बिना किसी रोक टोक के दिल्ली चला जाऊँ। दूत की ऐसी बातें सुनकर राव हम्मीर जी ने कहा—रे मूर्ख दूत, मैं तुमसे क्या कहूँ, तेरे स्वामी अलाउद्दीन का मुझसे बार बार ऐसा कहला भेजना उचित नहीं है। विग्रह का निरधारण किया जाता है तो केवल इसलिये कि जिसमें बंधु बांधवों का रक्तपात न हो किंतु अब मुझे इस बात का सोच बाकी न रहा। राव रणधीर सा चाचा और कुलदीपक दोनों कुमार भी जब इस युद्धाग्नि में अपने प्राण होम कर चुके तब मुझे अब सोच ही किस बात का है। जा तू अपने स्वामी से कह दे कि अब कभी मेरे पास संदेसा न भेजे। दूत ने वहाँ से आकर राव जी के वचन ज्यों के त्यों बादशाह से कह सुनाए। यह सुनकर अलाउद्दीन ने उसी समय गोलंदाजों को बुलाकर हुक्म दिया कि यहाँ से ऐसा गोला मारो कि किले के बुर्जों पर रखी हुई तोपें ठस होकर शांत हो जायँ। गोलंदाजों ने बादशाह की आज्ञा पालन करने के लिये यथासाध्य चेष्टा की किंतु वह निष्फल हुई। साथ ही किले पर से उतरे हुए गोलों की मार से लश्कर की बहुत सी तोपें ठस होकर चरख पर से गिर पड़ीं। यह देखकर बादशाह की बुद्धि किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। वह नाना प्रकार के तर्क वितर्क करता हुआ अपने कर्तव्य पर पछताने लगा। यह देखकर उसके वजीर ने उसे समझाया और रात्रि को किले की खाईं पर पुल बाँधकर किले पर चढ़ जाने का मत पक्का किया, किंतु पानी की बाढ़ अधिक होने के कारण मुसलमान सेना को उससे भी हारना पड़ा। तब तो बादशाह अखंड रूप से डटकर रह गया और किले पर आक्रमण करने के लिये उपयुक्त समय आने की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन राव हम्मीर जी ने किले के सबसे ऊँचे हिस्से पर सभामंडप सजाया। उस सभामंडप में सगे संबंधियों सहित बैठा हुआ राव हम्मीर ऐसा ज्ञात होता था जैसे देवताओं के बीच में इंद्र शोभित होता है। स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए राव हम्मीर जी के संमुख चंद्रकला नामक वेश्या नृत्य कर रही थी। चंद्रकला के प्रत्येक गीत से अलाउद्दीन को अपमानसूचक ध्वनि निकलती थी। साथ ही इसके बादशाह की ओर पदाघात करके उसने ऐसा विलक्षण कटाक्ष किया कि जिसे देखकर रावजी की सब सभा में आनंद सूचक एक बड़ी भारी ध्वनि हुई। यह देखकर अलाउद्दीन से न रहा गया। तब उसने कहा कि यदि कोई इस वेश्या को बाण से मारकर राव हम्मीर के रंग में भंग कर दे तो मैं उसे बहुत कुछ पारितोषिक दूँ। यह सुनकर मीर महिमा के भाई मीर गभरू ने कहा कि मैं श्रीमान् की आज्ञा का प्रतिपालन कर सकता हूँ। किंतु स्त्री पर शस्त्र चलाना वीरों का काम नहीं है। इसीलिये उस वेश्या को जीव से न मारकर केवल उसका अहित किए देता हूँ। यों कहकर मीर गभरू ने एक ऐसा बाण मारा कि जिससे उस वेश्या के पांव में ऐसी चोट लगी कि वह तुरत लोट पोट हो गई। वेश्या को गिरते देखकर राव जी आश्चर्य और क्रोध में आकर चारों ओर देखने लगे। तब मीर ने हाथ बाँधकर अर्ज किया कि यह बाण मेरे भाई मीर गभरू का चलाया हुआ है। श्रीमान् इस पर किसी प्रकार का खेद न करें और तनिक मेरा पराक्रम देखें। यह कहकर मीर महिमाशाह ने एक ऐसा बाण मारा कि अलाउद्दीन के सिर पर से उसका मुकुट उड़ गया।

यह देखकर वजीर महरमखाँ ने अलाउद्दीन से कहा कि अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। इस महिमा के संचालन किए हुए बाण से यदि आप बच गए तो यह उसने पहले निमक का निर्वाह किया है। यदि वह हम्मीर का हुक्म पाकर अब की जो लक्ष्य कर के बाण मारे तो आपके प्राण बचने

कठिन हैं, अतएव मेरा तो यही विचार है कि अब यहाँ से दिल्ली को कूच कर जाना ही भला है। वजीर महरमखाँ की बात मानकर बादशाह ने उसी समय कूच की तय्यारी करने की आज्ञा दी। इधर जिस समय सारे लश्कर में चलाचल का सामान हो रहा था उसी समय राव हम्मीर जी के सामान के कोषाध्यक्ष सुरजनसिंह ने आकर बादशाह के पैरों पर शिर धर दिया और कहा कि यदि श्रीमान् मुझे छाड़गढ़ का राज्य दे देना स्वीकार करें तो मैं सहज ही में रणथंभ के अजेय दुर्ग पर आपकी फतह करवा दूँ। इस पर अलाउद्दीन ने उसे बहुत कुछ ऊँची नीची दिखाकर कहा—सुरजनसिंह यदि मैं रणथंभ पर विजय पा जाऊँ तो छाड़ का राज्य तो दूँगा ही इसके अतिरिक्त तुम्हे इस प्रकार संतुष्ट करूँगा कि जिसमें तुम्हारा मन हर तरह से राजी हो जाय।

बादशाह की बातों में आकर कृतघ्न सुरजन ने रणथंभ को फतह करवाने का बीड़ा उठा लिया। उसने उसी समय राव हम्मीर जी के पास जाकर कहा कि "श्रीमान् रसद बरदास्त और गोली बारूद के खजाने चुक गए हैं, इसलिये किले में रहकर अपने हठ एवं मान मर्य्यादा की रक्षा होनी कठिन है, इसलिये वचन मानकर महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर उससे सलह कर लीजिए।" सुरजन की बात पर राव हम्मीर जी ने विश्वास न किया और आप स्वयं "जौरा भौंरा"[1] (खजाने) के पास जाकर जाँच की तो सुरजन का कहना वास्तव में सत्य पाया। तब तो राव जी को अत्यंत शोक और आश्चर्य

[1] किंतु "जौरा, भौंरा" (खजाने) वास्तव में खाली नहीं हुए थे। उनमें का सब माल सामान नीची तह में ज्यों का त्यों भरा पड़ा था। राव हम्मीर जी को धोखा देने के लिये सुरजन ने ऊपर से सूखा चमड़ा डलवा दिया था जो कि पत्थर डालने पर खड़क उठा।

ने दबा लिया। यह देखकर महिमाशाह ने कहा कि यदि श्रीमान् आज्ञा दें तो अब मैं स्वयं अलाउद्दीन से जा मिलूँ जिससे वह दिल्ली चला जाय। यह सुनते ही राव जी के नेत्रों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। उन्होंने कहा—महिमाशाह क्या फिर वह समय आवेगा? यदि मैं तुम्हें शाह के पास भेजकर रणथंभ का राज भोग करूँ तो संसार मुझे क्या कहेगा? क्या इस कायर कर्तव्य से मेरा क्षत्रिय कुल सदैव के लिए कलंकित न होगा? अब तो जो कुछ होना था हो चुका।

इधर सुरजन ने बादशाह के पास आकर कहा कि मैं एक ऐसा अद्भुत कुचक्र चला चुका हूँ कि इस समय आप जो कुछ कहेंगे राव जी तुरंत स्वीकार कर लेंगे। यह सुनकर अलाउद्दीन ने हम्मीर जी के यहाँ कहला भेजा कि वह अपनी देवल रानी की बेटी चंद्रकला को मुझे देकर मुझसे क्षमाप्रार्थी हों तो मैं उसपर दया कर सकता हूँ। यह सुनते ही राव हम्मीर जी के क्रोध और शोक का ठिकाना न रहा। उन्होंने इसके उत्तर में अलाउद्दीन के पास कहला भेजा कि यदि तुम्हें अपनी जान प्यारी है तो चार पीरों सहित अपनी प्यारी चिमना बेगम को मेरे पास भेजकर आप दिल्ली चले जावें अन्यथा मेरे हठ को हटाने की आशा न करें। हम्मीर जी के यहाँ से इस प्रकार कड़ाचूर उत्तर पाकर बादशाह ने कुपित होकर सुरजन से कहा—क्यों रे झूठे! तू यही कहता था कि राव हम्मीर अब आजिज आ जायगा। इस अपमान से उस दुष्ट ने कुपित होकर कहा कि अच्छा अब देखिए क्या होता है।

इधर राव जी बादशाह के दूत को उपर्युक्त उत्तर देकर तन क्षीण मन मलिन शोकातुर एवं व्यग्रचित्त अवस्था में रनवास में गए और रानी जी से उक्त बीतक की वार्ता करने लगे—"हे प्रिये! अब क्या करूँ? क्या महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर ही अपनी प्रजा की रक्षा करूँ?" रावजी के ऐसे वचन सुनकर रानी ने क्रोध, शोक, लज्जा एवं आश्चर्य से भरे कंठ कहा—"हे राजन्,

वीरकुल-शिरोमणि! आज आपको बादशाह से लड़ते लड़ते १२ वर्ष हो गए। आज आपको यह कुलधर्म के विरुद्ध सलाह देने वाला कौन है? हे प्राण प्यारे यह ससार सब झूठा है, अतएव इस संसार चक्र से संचालित दुःख और सुख भी अनित्य हैं, परंतु एक मात्र कीर्ति ही ऐसी वस्तु है कि जो इस संसार के अप्रतिहत चक्र से कुचली नहीं जा सकती। हे राजन्! अपने हाथ से शीश काढ़कर देनेवाले राजा जगदेव, विद्याविशारद राजा भोज, परदुःखभंजन राजा विक्रमादित्य, दानवीर कर्ण इत्यादि कोई भी इस संसार में अब नहीं हैं परंतु उनके यश की पताका अब तक अक्षय स्वरूप से उड़ रही है और सदा उड़ेगी। महाराज! धन यौवन सदैव नहीं रहता; मनुष्य ही क्या, आकाश में स्थित सूर्य और चंद्रमा भी एक-रस स्थिर नहीं रहते। जीवन, मरण, सुख, दुःख यह सब होनहार ही है तब अपने कर्तव्य से क्यों चूकिए। श्रीमान् आप इस समय अपने पूर्व्व पुरुष सोमेश्वर, पृथ्वीराज, जैतराव इत्यादि की वीरता और उनकी अक्षय कीर्ति का स्मरण कीजिए और तन धन सब कुछ जाय तो जाय परंतु शरणागत महिमाशाह और अपने धर्म हठ को न जाने दीजिए।"

रानी की इस प्रकार उच्च उत्तम शिक्षा सुनकर राव जी के मुखारविंद पर प्रसन्नता की झलक पड़ गई। उन्होंने कहा "धन्य प्रिये! बस मैं इतना ही चाहता था, अब मैं निश्चिततापूर्वक रण में प्राण दे सकता हूँ।" इस बात के सुनते ही रानी मूर्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी, फिर कुछ सम्हलकर मधुर स्वर से बोली—"स्वामी, आप युद्ध कीजिए मैं आपसे पहले ही शाका करूँगी।"

रानी जी से इस प्रकार बातें करके राव जी ने दरबार में आकर राज्य कोष को खोलवाकर याचकों को अयाची करने की आज्ञा दी और सब राजपूत सूर सामंतों के सामने "चतुरंग" से कहा कि अब मैं अपना कर्तव्य पालन करने पर उद्यत हूँ, रणथंभ की प्रजा और राजकुमार 'रतन' की रक्षा आप कीजिए। उत्तम होगा कि आप

रतन को लेकर चित्तौर चले जायँ। इसपर यद्यपि चतुरंग ने आनाकानी करके अपने को भी राव जी के साथ युद्ध में शामिल रखना चाहा किंतु रावजी के आग्रह करने पर उसे यही मानना पड़ा अर्थात् ५००० सैनिकों सहित 'रतन' को लेकर वह चित्तौर की तरफ गया।

जब चतुरंग अलहणपुर तक पहुँच गए तब राव हम्मीर जी ने अपने सब सर्दारों से कहा कि "अब धर्म्म के लिये प्राण न्यौछावर करने का समय निकट आ गया है अतएव जिनको मृत्यु प्यारी हो वे मेरे साथ रहें और जिन्हें जीवन प्यारा हो वे खुशी से घर चले जायँ। राव हम्मीर जी के इस प्रकार कह चुकने पर मीर महिमाशाह ने सब सूर वीर सर्दारों की तरफ से प्रतिनिधि स्वरूप हो अर्ज किया—हे राव जी! ऐसा कौन पुरुष कुलांगार होगा जो आपको इस समय रणथंभ में छोड़कर अपने जीवन का सुख चाहेगा। देवता, मनुष्य, शूरवीर पुरुष किसी का भी जीवन स्थिर नहीं है। एक दिन मरेंगे सब, तब फिर ऐसे सुअवसर को मृत्यु को कौन छोड़े? मरने से सब डरते हैं, संसार में केवल सती स्त्री और शूर वीर पुरुष ही ऐसे हैं जो मृत्यु को सदैव आलिंगन करने के लिये प्रस्तुत रहते हैं एवं उन्हें मृत्यु में ही आनंद आता है।

दूसरे दिन अरुणोदय होते ही राव जी ने शौचादि से निश्चिंत हो गंगाजल से स्नान कर शरीर में सुगंधित गंधादि लेपन कर केसर सने पीले वस्त्र धारण किए, माथे पर रत्नजटित मुकुट बाँधा और शूर वीरों के छत्तीसो बाने (हरबे) लगाकर प्रसन्नतापूर्वक वे ब्राह्मणों को संमान सहित दान देने लगे। इधर बात की बात में राठौड़, कूरम, गौड़, तोंवर, पड़िहार, पारैच, पुंडीर, चहुआन, यादव, गहिलोत, सेंगर, पँवार इत्यादि जाति के कुलीन शूर वीर राजपूत लोग अपने अपने बाने बाने से सजे हुए रणरंग में रत मदमाते गयंद की भाँति आकर राव जी के पास इकट्ठे होने लगे। उन आगत शूर वीर राजपूतों के माथे पर टेढ़ी पगड़ी, ललाट में केशर सोंधे गंध-त्रिपुंड, गले में तुलसी और रुद्राक्ष की माला, सिर पर

शरीर पर झिलम-बक्तर, हाथों में दस्ताने, और यथा अंग छत्तीसों बाने सजे हुए थे। ये वीर योद्धा लोग साक्षात् शिव के गण से सुशोभित होते थे। इधर तो इन सब शूर वीरों सहित राव जी गणेश, शिव, भगवती इत्यादि देवताओं का पूजन और परिक्रमा कर रहे थे उधर राजमहल के द्वार पर मेघ के समान बड़े दुरद दंतारे मतवारे हाथियों और वायु के वेग को उल्लंघन करनेवाले घोड़ों का घमासान जम रहा था। सूर्य्य निकलते निकलते राव हम्मीर जी अपने वीर योद्धाओं सहित इष्टदेव का स्मरण करते हुए राजमहल से बाहर हुए। राव जी के आते ही सब सेना व्यूहबद्ध हो गई। सबसे आगे फड़वाली साक्षात् काल की सी विकराल कालिका का अवतार तोपें, उनके पीछे हथनार ऊँटनार जंबूर, तिनके पीछे हाथी, तिनके पीछे ऊँट, घुड़सवार और फिर तुबकदार पैदल इत्यादि थे। उस समय बाल सूर्य्य की सुनहरी किरणों के पड़ने से सब साज बाज से सुसज्जित चंचल घोड़े और गंधमय गंडस्थलवाले मतवाले हाथी बड़े ही भले मालूम होते थे। जिस समय राव जी की सवारी संपूर्ण रूप से सुसज्जित हो गई तो नौबत, नगाड़े, शंख, सहनाई, रणतूर, शृंगी, डफ इत्यादि रण-वाद्य बजने लगे, कड़खैत उच्च स्वर से कड़खे गा-गाकर सहज कठोरहृदय शूर वीरों के चित्त को उत्कर्ष देने लगे। इधर ये शूर वीर लोग उमंग में भरे हुए आगे बढ़ते जाते थे उधर आकाश में अप्सराओं के वृंद इस समर में शत्रु के संमुख प्राण को परित्याग करनेवाले वीरों को अपने हृदय का हार बनाने के लिये आकाश मार्ग से आ रही थीं। जिस प्रकार ये वीर लोग इधर झिलम, टोप, बख्तर, दस्ताने, कलगी, तुर्रा, सरपेच, तीर, तुबक, तेगा, तलवार सबल, तोमर, तौरा तेत, बरछी, बिछुआ, बाँका, छुरी, पिस्तौल, पेशकब्ज, कटार, परिघ, फरसा, दाव इत्यादि अस्त्र शस्त्र से सजे हुए थे उसी प्रकार उस तरफ सर्वांगसुंदरी नवयौवना अप्सराएँ भी सीसफूल, दावनी, आड़, ताटंक, हार, बाजूबंद, जोसन, पहुँची, पाजेब इत्यादि गहने और नाना प्रकार की रंग बिरंगी कंचुकी, चोली, चौबंद

इत्यादि वस्त्रों को धारण किए हुए आकाश-मार्ग में स्थित थीं।

इस प्रकार जंग-रंगराते मदमाते राजपूत इधर से बढ़े और उधर से इसी तरह बाणों की बौछार करती हुई मुसलमान सेना भी पहाड़ों की कंदराओं में से टिड्डी सी निकल पड़ी। दोनों सेनाओं में प्रथम तो धुँआधार तोप, तुवक, फौका, पिस्तौल इत्यादि अग्न्यास्त्रों से वर्षा हुई, परंतु जब वीरत्व के उत्साह से प्रोत्साहित हुई दोनों सेनाएँ समुद्र की तरह उमड़कर एक दूसरे से खिल्लमिल्ल हो गई उस समय एकदम तेगा, तलवार, तबल, छुरी, बिछुआ, कटार, गुर्ज, फर्सा इत्यादि की मार होने लगी। क्षण मात्र में वह आमोदमय रणभूमि साक्षात् करुणा और बीभत्स रस का समुद्र हो गई। जहाँ तहाँ घायल और मृतक शूर वीर सिपाहियों के शवों के ढेर के ढेर नजर आते थे। मृतक हाथी, घोड़ों के शव जहाँ तहाँ चट्टानों से दीखते थे और बहुतेरे नर-देह-रक्त की नदी में जहाँ तहाँ बहे जाते थे। उन पर बैठकर मांस भक्षण करते हुए कौवे, चील्ह, गिद्ध, कुही, बाज, कुर्रा और शृगाल इत्यादि जंतु अत्यंत भयानक रव मचाते थे। इस प्रकार कठिन मार मचने पर मुसलमान सेना के पैर उखड़ पड़े। यह देखकर बादशाह ने अपनी सेना को ललकारते हुए वजीर से कहा कि अब क्या किया जाय। तब वजीर ने कहा कि इस समय अपनी सेना की चार अनी करके प्रत्येक का भार दीवान. बाँके बगसी, मैं और आप स्वयं लेकर चार तरफ से आक्रमण करें, तब ठीक होगा। बादशाह ने उसकी संमति मानकर वैसा ही किया। इस बार उपयुक्त व्यूहबद्ध होने के कारण मुसलमान सेना ने बड़ी वीरता दिखाई। बादशाह ने पुकारकर कहा कि मेरा जो उमराव हम्मीर को पकड़कर लावेगा उसको बारह हजार की जागीर और दरबार में सबसे बड़ा मंसब मिलेगा। यह सुनकर अब्दुल नामक एक उमराव अपनी सेना सहित बड़े वेग से आगे बढ़ा। इधर राजपूत सेना ने उसके रोकने का यथासाध्य प्रयत्न किया, इस होड़ हौस में बड़ी कड़ी मार हुई, दोनों ओर के कई कमंद खड़े हुए। जब राव जी की तरफ

के २०० सवार, तीस हाथी और ६०० वीर जोधा काम आ चुके तब शेख महिमाशाह ने राव हम्मीर को सिर नवाकर कहा कि श्रीमान् अब बहुत हुआ। अब जरा मेरा भी पराक्रम देखिए। यह कहता हुआ वह बीच समरभूमि में आ खड़ा हुआ और बादशाह को संबोधन करके बोला—मैं महिमाशाह जो आपका अपराधी हूँ यह खड़ा हूँ अब पकड़ते क्यों नहीं ! अथवा जो कुछ करना हो करते क्यों नहीं ? अब अपनी इच्छा को पूर्ण कीजिए।

महिमाशाह के ऐसे सगर्व वचन सुनकर अलाउद्दीन ने खुरासान खाँ की ओर देखकर कहा कि जो कोई इस शेख को जीवित पकड़ लावेगा उसे तीस हजार की जागीर, बारह हजारी मंसब, नौबत निशान और एक तलवार दूँगा। इस पर सदकी फौज के साथ इधर से खुरासान खाँ और राव हम्मीर की जय जयकार बोलते हुए उधर से महिमाशाह ने एक दूसरे पर आक्रमण किया। बादशाह ने अपनी सेना को उत्तेजित करने के लिये कहा इसको शीघ्र पकड़ो। शेख और खुरासान की सेना अनी तो एक दूसरे पर बाणों की वर्षा करने लगी और इधर ये दोनों वीर स्वयं आमने सामने जुटकर एक मात्र खड्ग के सहारे पर खेलने लगे। अंत में महिमाशाह ने खुरासान खाँ को मार गिराया और उसके निशान इत्यादि ले जाकर राव जी को नजर किए। महिमाशाह ने राव हम्मीर जी के संमुख खड़े होकर कहा—हे शरणागत प्रणरक्षक वीर चहुआन, आपको धन्य है। आप राज्य, परिवार, स्त्री और सब राजसी वैभवों को तिलांजलि देकर जो एक मात्र मेरी रक्षा करने के लिये अपने हठ से न हटे यह अचल कीर्ति आपकी इस संसार में सनातन स्थिर रहेगी। उसने आँसू भर कहा--"हाय ! अब वह समय कब आवेगा कि मैं पुनः अपनी माता के गर्भ से जन्म धारण कर आपसे फिर मिलूँ।" यह सुनकर राव जी ने कहा हे वीर मीर, अधीर मत हो। जीवन मरण यह संसार का काम ही है इस विषय का पश्चात्ताप ही क्या ? फिर हम तुम तो एक ही अंश के अवतार हैं तो हम आप अवश्य एक ही

में लीन होंगे अतएव इन निःसार बातों का विचार करना तो वृथा ही है परंतु यह अवश्य है कि मनुष्य देह धारण कर इस प्रकार कीर्ति संपादन करने का समय कठिनता से प्राप्त होता है।

राव हम्मीर जी के उपर्युक्त वक्तव्य का अंत होते ही वीरोचित उत्कर्ष से भरा हुआ मीर महिमाशाह रणक्षेत्र के मध्य में आ उपस्थित हुआ। उसको बरनी पर इधर से उसका छोटा भाई मीर गभरू उसके सामने जा जुटा। जिस समय ये दोनों वीर बांधव एक दूसरे पर प्रहार करने को थे कि अलाउद्दीन ने हँसकर कहा "मीर महिमाशाह मैं सच्चे दिल से तेरी तारीफ करता हूँ। जिस वक्त से तूने दिल्ली छोड़ी उस वक्त से आज तक मुझको सिर न झुकाया, बस अब तुम खुशी से मेरे पास चले आओ मैं तुम्हारा कुसूर माफ करता हूँ और यह बेगम भी तुमको देना कबूल करता हूँ। साथ ही इसके गोरखपुर का परगना जागीर में दूँगा।" इस पर महिमाशाह ने मुस्कराते हुए सहज स्वभाव से उत्तर दिया कि अब आपका यह कहना वृथा है, आप जरा उन बातों का ख्याल भी तो कीजिए जो आपने उस समय कही थीं। यदि अब फिर से भी उसी माता की कुक्षि से जन्म लूँ तब भी राव जी को नहीं छोड़नेवाला हूँ।

मीर महिमाशाह को बादशाह से बातें करते देखकर राव जी ने कुमक भेजी। इधर मीर गभरू ने भी कहा कि हे भाई, अब वृथा की इन कथाओं के क्रंदन करने से क्या लाभ है, आओ इस सुअवसर पर हम और आप दोनों अपने अपने धर्म को पालन करते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर देवें। यह कहते हुए दोनों भाई अपने अपने स्वामियों की जयकार मनाते हुए एक दूसरे से जुट पड़े। मीर गभरू ने अपने बड़े भाई महिमाशाह के पैर छूकर कहा "अब मुझे आज्ञा हो।" इसके उत्तर में महिमाशाह ने कहा कि "स्वामिधर्म्म पालन में दोष ही क्या है ?" पहले तो दोनों भाई परस्पर खड्ग से लड़ते रहे किंतु जब बहुत देर हो गई तब दोनों अपने अपने घोड़ों पर से उतरकर परस्पर द्वंद्व युद्ध में प्रवृत्त हुए, और दोनों सेनाओं के देखते

ही दोनों वीर भाई स्वर्ग को सिधारे।

जब महिमाशाह मारा जा चुका तब अलाउद्दीन ने राव हम्मीर जी से कहा कि अब आप युद्ध न कीजिए; मैं आपकी अक्षय वीरता से अत्यंत प्रसन्न होकर आपको अपनी तरफ से पाँच परगने और देना स्वीकार करता हूँ और यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मेरे रहते आप स्वच्छंदतापूर्वक रणथंभ का राज्य कीजिए। इसके उत्तर में हम्मीर जी ने कहा कि अब आपका यह विचार केवल विडंबना है। अब जो कुछ भविष्य में होगा वही होगा, मैं इस क्षणभंगुर जीवन की अभिलाषा वा राज्यसुख के लोभ से अक्षय कीर्ति को त्यागनेवाला नहीं हूँ। रावण, दुर्योधन आदि वीरों ने कीर्ति के लिये ही तन को तिनका सा त्याग दिया, हम तुम दोनों एक ही पद्म ऋषि के अंश से उत्पन्न हैं, अतएव अब यही उचित है कि इस सुअवसर पर समर भूमि में अनित्य शरीर को विसर्जन करके हम आप स्वर्ग में सदैव के लिये सहवास करें।

राव जी के ऐसे वचन सुनकर अलाउद्दीन ने अपनी सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दी। उधर से राजपूत सेना भी प्राण का मोह छोड़कर मदोन्मत्त मातंग की तरह मुसलमानों से जंग करने को वीरत्व के उमंग में भरी हुई उमड़ पड़ी। जिस समय दसों दिग्गजों के हृदय को कंपायमान करनेवाले रणवाद्यों को बजाती हुई दोनों सेनाएँ परस्पर मिल रही थीं उसी समय भोज नामक भीलों के सर्दार ने राव जी से अपने हरावल में होने की आज्ञा माँगी। रावजी ने कहा कि तुम चित्तौर की रक्षा करो। इसपर उसने उत्तर दिया कि मुझे श्रीमान् की आज्ञा मानने में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है, परंतु मैंने जो आजन्म श्रीमान् की चरण-सेवा की है वह इसी अवसर के लिये; अतएव अब मुझे आज्ञा हो क्योंकि मैं अपने कर्त्तव्य के ऋण से उऋण होऊँ। यों कहकर भोजराज अपनी भील सेना सहित आगे बढ़ा। उधर से मीर सिकंदर हरावल में हुआ। मुसलमान सेना से तोप की गुरायें छुटती थीं और भील तीरों की वर्षा

करते थे। इसी समय भोजराज और सिकंदर का मुकाबला हुआ। इधर से भोजराज ने सिकंदर पर कटार का वार किया और उसने तलवार चलाई, निदान दोनों वीर एक ही समय धराशायी हुए। इस युद्ध में भोजराज के साथवाले दो हजार भील और सिकंदर की तरफ के बीस हजार कधारी योद्धा काम आए और शाही सेना भाग उठी।

उसी समय राव हम्मीर जी ने भोजराज की लाश के पास हाथी जा डटाया और उस वीर के मृतक शव को देखकर राव जी ने आँसुओं से नेत्र डबडबाई हुई अवस्था में कहा—धन्य हो वीरवर! तुमने स्वामिसेवा में प्राण देकर अतुलित कीर्ति को संपादन किया। राव जी को रणक्षेत्र के बीच अचल भाव से स्थित देखकर अला-उद्दीन ने अपने भागते हुए वीरों से कहा—"रे मूर्ख मनुष्यो, तुमने जिस मेरे कारण आजन्म आनंद से जीविका निर्वाह की, अहर्निश आनंद आमोद में व्यतीत किए, आज तुम्हें लड़ाई का मैदान छोड़कर भागते हुए शरम नहीं आती।" इतना सुनते ही मुसलमान सेना भूखे नाग या फुफकारते हुए सर्प की तरह लौट पड़ी। यहाँ राजपूत तो सदैव प्राण हथेली पर रखे हुए थे, दोनों में इस तरह रूंडाचूर मार पड़ी कि रणभूमि में रक्त की नदी बह निकली, उस वेग से बहती हुई शोणित सरिता में जहाँ तहाँ पड़े हुए हाथियों के शव वास्तविक चट्टानों से भासित होते थे, वीरों के हाथ पाँव जंघा इत्यादि कटे हुए अवयव जलचर जीव से तैरते ज्ञात होते थे, वीरों के सचिक्कन केश सिवार और ढाल कच्छप सा प्रतीत होती थी, नव युवा वीरों के कटे हुए मस्तक कमल से और उनके आरक्त बड़े बड़े नेत्र खंजन से खिलते हुए नजर आते थे। इस पसर में ७५ हाथी, सवा लाख घोड़े, ७०० निशानवाले और अगनित योधा काम आए। सिकंदर शाह, शेर खाँ, मरहम खाँ, मोहब्बत खाँ, मुदफ्फर या मुजफ्फर खाँ, नूर खाँ, निजाम खाँ इत्यादि मुसलमान वीर मारे गए और राव जी की तरफ के भी नामा नामा चार सौ योद्धा खेत रहे।

इसी मारामार में राव हम्मीर जी ने अपने हाथी को अलाउद्दीन के संमुख हटाए जाने की आज्ञा दी और कहला भेजा कि अबतक वृथा ही रक्त प्रवाह हुआ है अब आइए हमारा आपका द्वंद्व युद्ध हो और सब द्वंद्व समाप्त हो। राव जी का यह सँदेसा सुनकर अलाउद्दीन ने मंत्री से पूछा कि अब क्या करें। तब मंत्री ने उत्तर दिया कि इस चहुआन के बल प्रताप एवं पराक्रम से आप अपरिचित नहीं हैं अतएव मेरे विचार में तो यही आता है कि अब आप संधि कर लें तो सर्वथा भला है। निदान अलाउद्दीन ने वजीर की बात मानकर हम्मीर जी के पास संधि का प्रस्ताव भेजा परंतु उस वीर हम्मीर ने उत्तर दिया कि युद्धस्थल में उपस्थित होकर मित्रता का प्रस्ताव करना भला कौन सी नीति और बुद्धिमत्ता का काम है। शत्रु के संमुख विनती करना नितांत कातरता अथवा दंभमय चतुरता का पता देता है।

बादशाह के दूत को इस प्रकार नीतियुक्त उत्तर देकर राव जी ने अपने राजपूत वीरों को आज्ञा दी कि "हे वीरवर योद्धाओ, अब मेरी यही इच्छा है कि आप तोप, बाण, हथनार, चादर, जंबूर, बंदूक, तमंचा, बरछा, सेल, साँग इत्यादि हथियारों को त्यागकर केवल तलवार, छुरी, कटारी और विषाण से काम लो अथवा मल्लयुद्ध द्वारा ही अपने पराक्रम का परिचय देते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर दो। साथ ही मेरी यह भी आज्ञा है कि बादशाह को न मारना।"

राव जी के इतना कहते ही राजपूत रावत, महावत से हकारे हुए हाथी की तरह अपने अपने उज्ज्वल शस्त्रों को चमकाते हुए चल पड़े। क्षुधित मृगराज की भाँति रणबाँकुरे राजपूतों का वेग मुसलमानी सेना क्षण भर न सह सकी और बड़े बड़े सैनिक अमीर उमरा भेड़ की भाँति भाग उठे। राजपूत सेना ने अलाउद्दीन के हाथी को घेर लिया और उसे रावहम्मीर जी के संमुख ले आए। राव जी ने विवश हुए बादशाह को देखकर अपने सर्दारों से कहा कि यह पृथ्वी-

पति बादशाह है। अदंड्य है। इसलिये आप लोग इसे यों ही छोड़ दीजिए। निदान राजपूत सर्दारों ने राव जी की आज्ञा मानकर अलाउद्दीन को उसकी सेना में पहुँचा दिया और वह भी उसी समय वहाँ से कूचकर दिल्ली को चला आया।

इधर राव हम्मीर जी ने अपने घायलों को उठवाकर और बादशाही सेना से छीने हुए निशान लिवाकर निज दुर्ग की तरफ फेरा किया।

राव जी ने भूलवश, अथवा विजय के उत्साहवश, शाही निशानों को आगे चलने की आज्ञा दी, यह देखकर रानी जी ने समझा कि रावजी खेत हार गए और यह किले पर शाही सेना आ रही है। ऐसा विचार कर रानीजी ने अन्यान्य सब परिवार की वीर महिलाओं सहित प्रज्वलित अग्नि में शरीर होम कर शाका किया। जब राव जी ने किले में आकर यह दृश्य देखा तो सब सर्दारों और सैनिकों को आज्ञा दी कि वे चित्तौर में जाकर कुँअर रतनसेन की रक्षा करें और आप शिव के मंदिर में जाकर नाना प्रकार के पूजन अर्चन करके यह वरदान माँगा कि अब जो मैं पुनः जन्म धारण करूँ तो इसी प्रकार वीर क्षत्रिय कुल में। और खड्ग खींचकर अपने ही हाथों से कमल के पुष्प के समान अपना माथा उतार शिव जी को चढ़ा दिया।

जब यह समाचार अलाउद्दीन के कर्णगोचर हुआ तो राव जी के कर्तव्य पर पश्चात्ताप करता हुआ वह फौरन फिर आया और राव जी के संमुख खड़ा होकर अदब से प्रणाम करता हुआ बोला कि अब मुझे क्या आज्ञा है। यह सुनकर राव जी के मस्तक ने उत्तर दिया कि तुम जाकर समुद्र में शरीर छोड़ो तब हम तुम मिलेंगे। राव जी के शीश के वचन मानकर अलाउद्दीन ने वजीर महरम खाँ को आज्ञा दी कि वह सब लश्कर सहित दिल्ली जाकर "शाहजादा" अलावृत्त को तख्त पर बिठावे और वह आप उसी क्षण रामेश्वर को चला गया। वहाँ पर उसने रामेश्वर जी की पूजा की और उन्हीं का

ध्यान और स्मरण करते हुए समुद्र में वह कूद पड़ा।

इस प्रकार बादशाह के तन त्यागने पर राव हम्मीर जी और अलाउद्दीन और मीर महिमाशाह परस्पर स्वर्ग में गले मिले और अप्सराओं और देवताओं ने पुष्पवृष्टि की।

इस प्रकार राव हम्मीर जी का यश-कीर्तन सुनकर राव चंद्रभान जी ने कवि जोधराज को बहुत सा दान दिया, और सब भाँति से प्रसन्न किया।

चैत्र सुदी तृतीया बृहस्पतिवार संवत् १८८५ को ग्रंथ पूर्ण हुआ।

यह जोधराज कृत हम्मीररासो का सारांश हुआ। इसमें दी हु ऐतिहासिक बातों पर विचार करने के पहले मैं एक दूसरे कवि की लिखी हुई हम्मीर राव की कथा का सारांश देना चाहता हूँ। नयन-चंद्र सूरि नामक एक जैन कवि ने हम्मीर महाकाव्य नाम का एक ग्रंथ संस्कृत में लिखा है। नयनचंद्र जयसिंह सूरि का पौत्र था यह ग्रंथ पंद्रहवीं शताब्दी का लिखा हुआ जान पड़ता है। सन् १८७८ में पंडित् नीलकंठ जनार्दन ने इस काव्य का एक संस्कर छपाया जिसकी भूमिका में उन्होंने काव्य का सारांश दिया है उससे नीचे लिखा वृत्तांत मैं हिंदी में उद्धृत करता हूँ। यहाँ पर इस ग्रंथ में दिया हुआ हम्मीरदेव के वंश का कुछ वृत्तांत दे देना उचित जान पड़ता है।

चौहान वंश में दीक्षित वासुदेव नाम का एक पराक्रमी राजा हुआ। इसका पुत्र नरदेव था। इसके अनंतर हम्मीर तक वंशक्र इस प्रकार है—

चमराज
हरिराज
सिंहराज—इसने हेतिम नाम के मुसलमान सर्दार को मारा।
भीम—सिंह का भतीजा और उसका दत्तक पुत्र।
विग्रहराज—गुजरात के मूलराज को मारा।
गंगदेव
वल्लभराज
राम
चामुंडराज—हेजम्मुद्दीन को मारा।
दुर्लभराज—शहाबुद्दीन को जीता।
दुशल—कर्णदेव का मारा।
वीसलदेव—शहाबुद्दीन को मारा।
पृथ्वीराज—प्रथम
अल्हण
अनल—अजमेर में तालाब खुदवाया।
जगदेव
वीशल
जयपाल
गंगपाल
सोमेश्वर—कर्पूरादेवी से विवाह किया।
पृथ्वीराज—द्वितीय
हरिराज
गोविंद
वाल्हण—प्रल्हाद और वाग्भट्ट दो पुत्र हुए।
प्रह्लाद
वीरनारायण—प्रह्लाद का पुत्र।
वाग्भट्ट—वाल्हण का पुत्र।
वाग्भट्ट के उत्तराधिकारी उनके पुत्र जैत्रसिंह हुए। उनकी रानी

का नाम हीरादेवी था जो बहुत रूपवती और सर्वथा अपने उच्च पद के योग्य थी। कुछ काल में हीरादेवी गर्भवती हुई। उसकी इस अवस्था की वासनाओं से गर्भस्थित जीव की प्रवृत्ति और उसके महत्त्व का आभास मिलता था। कभी कभी उन्हें मुसलमानों के रक्त से स्नान करने की इच्छा होती। उसके पति उसकी अभिलाषाओं को पूरा करते; अंत में, शुभ घड़ी में, उसको एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पृथ्वी की चारों दिशाओं ने सुंदर शोभा धारण की; सुखद समीर बहने लगा; आकाश निर्मल हो गया; सूर्य मृदुलता से चमकने लगा; राजा ने अपना आनंद ब्राह्मणों पर सुवर्ण बरसाकर और देवताओं की वंदना करके प्रगट किया। ज्योतिषियों ने बालक के मुहूर्त्तस्थान में पड़े हुए नक्षत्रों के शुभ योग का विचार करके भविष्यद्वाणी की कि कुमार समस्त पृथ्वी को अपने देश के शत्रु मुसलमानों के रक्त से आर्द्र करेगा। बालक का नाम हम्मीर रखा गया। हम्मीर बढ़कर एक सुंदर और बलिष्ठ बालक हुआ। उसने सब कलाओं को सीख लिया और शीघ्र ही वह युद्ध-विद्या में भी निपुण हो गया!

जैत्रसिंह के सुरत्राण और विराम दो और पुत्र थे, जो बड़े योद्धा थे। यह देखकर कि उनके पुत्र अब उनको राज्य के भार से मुक्त करने योग्य हो गए, जैत्रसिंह ने एक दिन हम्मीर से इस विषय में बातचीत की, और उन्हें किस रीति से चलना चाहिए इस विषय में उत्तम उपदेश देने के उपरांत, राज्य उनके (हम्मीर के) हवाले कर दिया, और वे आप वनवास करने चले गए। यह बात संवत् १३३६ (१२८३ ई०) में हुई।[1]

छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न होकर हम्मीर ने युद्ध के

१—तनश्च सवन्नववह्नि वह्निभूहायने माघवल्क्षपक्षे।
पौष्यां तिथो हेलिदिने सपुष्ये दैवज्ञनिर्दिष्टवरेऽल्लिग्ने॥
—सर्ग ८, श्लोक ५६।

हेतु प्रस्थान करने का संकल्प किया। पहले वह राजा अर्जुन की राजधानी सरसपुर में गया। यहाँ एक युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन पराजित होकर अधीन हुआ। इसके अनंतर राजा ने गढ़मंडले पर चढ़ाई की, जिसने कर देकर अपनी रक्षा की। गढ़मंडले से हम्मीर धार की ओर बढ़ा। यहाँ एक राजा भोज राज्य करता था जो स्वनामधारी विख्यात राजा भोज के समान ही कवियों का मित्र था। भोज को पराजित करके सेना उज्जैन में आई जहाँ हाथी, घोड़े और मनुष्य क्षिप्रा के निर्मल जल में नहाए। राजा ने भी नदी में स्नान किया और महाकाल के मंदिर में जाकर पूजा की। बड़े समारोह के साथ वे इस प्राचीन नगरी के प्रधान मार्गों से होकर निकले। उज्जैन से हम्मीर चित्रकोट (चित्तोर) की ओर बढ़ा और मेदवार (मेवाड़) का उजाड़ करता हुआ आबू पर्वत पर गया।

वेद के अनुयायी होकर भी यहाँ हम्मीर ने मंदिर में ऋषभदेव की पूजा की, क्योंकि बड़े लोग विरोधसूचक भेदभाव नहीं रखते। वस्तुपाल क स्तुति-पाठ के समय भी राजा प्रस्तुत थे। वे कई दिन तक वशिष्ठ की कुटी में रहे, और मंदाकिनी में स्नान करके उन्होंने अचलेश्वर की आराधना की। यहाँ अर्जुन की कृतियों को देखकर वे बहुत ही आश्चर्यित हुए।

आबू का राजा एक प्रसिद्ध योद्धा था, किंतु उसके बल ने इस अवसरपर कुछ काम न किया और उसे हम्मीर के अधीन होना पड़ा।

आबू छोड़कर राजा वर्द्धनपुर आए और उस नगर को उन्होंने लूटा तथा नष्ट किया। चंगा की भी यही दशा हुई। यहाँ से अजमेर की राह स हम्मीर पुष्कर को गए जहाँ उन्होंने आदिवाराह की आराधना की। पुष्कर से राजा शाकंभरी को गए। मार्ग में मरहटा[1], खंडिल्ला, चमदा और कॉकरौली लूटे गए। कॉकरौली में

१-इस नाम का एक स्थान जोधपुर राज्य में है। जोधपुर राज्य में नाडोल नाम का एक गाँव है जहाँ आशापुरा देवी का स्थान है। रणथंभ से यदि नाडोल जाया जाय तो मेड़ता बीच में पड़ेगा।

त्रिभुवनेंद्र उनसे मिलने आए और अपने साथ बहुत सी अमूल्य भेंट लाए।

इन विशाद कार्य्यों को पूरा करके हम्मीर अपनी राजधानी को लौट आए। राजा के आगमन से वहाँ बड़ी धूम हुई। राज्य के सब से बड़े कर्म्मचारी धर्मसिंह के साथ दल बाँधकर अपने विजयी राजा की अगवानी के लिये बाहर आए। मार्ग के दोनों ओर प्रेमी प्रजा अपने राजा के दर्शन के हेतु उत्सुक खड़ी थी।

इसके कुछ दिन पीछे हम्मीर ने अपने गुरु विश्वरूप से कोटियज्ञ का फल पूछा और उनसे यह उत्तर पाकर कि इस यज्ञ के पूरा करने से स्वर्ग लोक प्राप्त होता है राजा ने आज्ञा दी कि कोटियज्ञ की तय्यारी की जाय। चट देश के सब भागों से विद्वान ब्राह्मण बुलाए गए, और यज्ञ पवित्र शास्त्रों में लिखे विधानों के अनुसार समाप्त किया गया। ब्राह्मणों को खूब भोजन कराकर उन्हे भरपूर दक्षिणा दी गई। इसके उपरांत राजा ने एक महीने तक के लिये मुनिव्रत ठाना।

जब कि रणथंभौर में ये सब बातें हो रही थीं, दिल्ली में, जहाँ अलाउद्दीन राज्य करता था, कई परिवर्त्तन हुए। रणथंभौर में जो कुछ हो रहा था उसका समाचार पाकर उसने अपने छोटे भाई उलुगखाँ [1] को सेना लेकर चौहान प्रदेश पर चढ़ाई करने और उसको उजाड़ देने की आज्ञा दी। उसने कहा "जैत्रसिंह हम लोगों को कर देता था; पर यह उसका बेटा न कि केवल कर ही नहीं देता, वरन् हम लोगों के प्रति अपनी घृणा दिखाने के लिये प्रत्येक अवसर ताकता रहता है। यह उसकी शक्ति को नष्ट करने का अच्छा अवसर है।" ऐसी आज्ञा पाकर उलुगखाँ ने ८०००० सवार लेकर रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की। जब यह सेना वर्णनाशा नदी पर पहुँची तब उसने देखा कि सड़कें, जो शत्रु के प्रदेश को गई हैं, सवारों के चलने योग्य नहीं हैं। इससे वह कई दिन वहाँ टिका रहा; इस बीच में उसने आस पास के गाँवों को जलाया और नष्ट किया।

१—मालिक मुईजुद्दीन उलुगखाँ। ब्रिग्स ने अपने फिरिश्ता के अनुवाद में इसको "अलफखाँ" लिखा है।

यहाँ रणथंभौर में मुनिव्रत पूरा न होने के कारण राजा स्वयं युद्धक्षेत्र में न जा सकते थे। अतएव उन्होंने भीमसिंह और धर्म्मसिंह अपने सेनापतियों को आक्रमणकारियों को भगाने के लिये भेजा। राजा की सेना वर्णनाशानदी के किनारे एक स्थान पर आक्रमण-कारियों पर टूट पड़ी और उसने शत्रुओं को, जिनके बहुत से लोग मारे गए, परास्त किया। इस जयलाभ से संतुष्ट होकर भीमसिंह रणथंभौर की ओर लौटने लगा, और उलुगखाँ अपनी सेना का प्रधान अंग साथ लिए छिपकर उसके पीछे पीछे बढ़ने लगा। अब यह हुआ कि भीमसिंह के सिपाही, जिन्होंने लूट में बहुत सा धन पाया था, उसको रक्षापूर्वक अपने अपने घर ले जाने को व्यग्र थे, और इसी व्यग्रता में उन्होंने अपने नायक को पीछे छोड़ दिया जिसके साथ केवल अनुचरों की एक छोटी सी मंडली रह गई। जब इस प्रकार भीमसिंह हिंदावत घाटी के बीचोबीच पहुँचा तब उसने विजय के अभिमान में उन नगाड़ों और बाजों को जोर से बजाने की आज्ञा दी जिनको उसने शत्रु से छीना था। इस कार्य्य का फल अचिंत्यपूर्व और आपत्तिजनक हुआ। उलुगखाँ ने अपनी सेना को छोटे छोटे दलों में भीमसिंह का पीछा करने की आज्ञा दे रखी थी और बाजा बजाते ही उसे शत्रु के ऊपर जयलाभ की सूचना समझ, उसपर टूट पड़ने का आदेश दे रखा था। अतः जब मुसल्मानों के पृथक् पृथक् दलों ने नगाड़ों का शब्द सुना तब वे चारों ओर से घाटी में आ पहुँचे, और उलुगखाँ भी एक ओर से आकर भीमसिंह से युद्ध करने लगा। हिंदू सेनापति कुछ काल तक यह बेजोड़ की लड़ाई लड़ता रहा, पर अंत में घायल हुआ और मारा गया। शत्रु के ऊपर यह जयलाभ पाकर उलुगखाँ दिल्ली लौट गया।

यज्ञ पूरा होने के उपरांत हम्मीर ने युद्ध का वृत्तांत और अपने सेनापति भीमसिंह की मृत्यु का समाचार सुना। उन्होंने धर्म्मसिंह को भीमसिंह का साथ छोड़ने के लिये धिक्कारा, उसको अंधा कहा क्योंकि वह यह न देख सका कि उलुगखाँ सेना के पीछे पीछे था।

उन्होंने उसको क्लीव भी कहा क्योंकि, वह भीमसिंह की रक्षा के लिये नहीं दौड़ा। इस प्रकार धर्म्मसिंह को धिक्कारकर ही संतुष्ट न होकर राजा ने उस दोषी सेनापति को अधा करने और उसको क्लीव करने की आज्ञा दी। सेनानायक के पद पर भी धर्म्मसिंह के स्थान पर भोजदेव हुए, जो राजा के एक प्रकार से भाई होते थे और धर्म्मसिंह को देश निकालने का दण्ड भी सुनाया जा चुका था, पर भोजदेव के बीच में पड़ने से उसका बर्त्ताव नहीं हुआ।

धर्म्मसिंह इस प्रकार अवयवभग्न और अपमानित होकर राजा के इस व्यवहार से अत्यत दु:खित हुआ, और उसने बदला लेने का संकल्प किया। अपने संकल्पसाधन के हेतु उसने राधादेवी नाम की एक वेश्या से, जिसका दरबार में बहुत मान था, गहरी मित्रता की। राधादेवी नित्य प्रति जो कुछ दरबार में होता उसकी रत्ती रत्ती सूचना अपने अंधे मित्र को देती। एक दिन ऐसा हुआ कि राधादेवी बिलकुल उदास और मलिन घर लौटी, और जब उसके अधे मित्र ने उसकी उदासी का कारण पूछा तब उसने उत्तर दिया कि आज राजा के बहुत से घोड़े वैधरोग से मर गए इससे उन्होंने मेरे नाचने और गाने की ओर बहुत थोड़ा ध्यान दिया, और जान पड़ता है कि बहुत दिन तक यही दशा रहेगी। अधे पुरुष ने उसे प्रसन्न होने को कहा क्योंकि थोड़े ही दिनों में सब फिर ठीक हो जायगा। उसे केवल राजा से यह जताने का अवसर देखते रहना चाहिए कि यदि धर्म्मसिंह अपने पहले पद पर फिर हो जाय तो वह राजा को जितने घोड़े हाल में मरे हैं उनसे दूने भेंट करे। राधादेवी ने अपना काम सफाई से किया, और राजा ने लोभ के वश में होकर धर्म्मसिंह को उसके पहले पद पर फिर आरूढ़ कर दिया।

धर्मसिंह इस प्रकार फिर से नियुक्त होकर बदले ही का विचार करने लगा। राजा का लोभ बढ़ाता गया और उसने अपने अत्याचार और लूट से प्रजा की ऐसी हीन दशा कर दी कि वह राजा से घृणा करने लगी। वह किसी को, जिससे कुछ—घोड़ा, रुपया, कोई भी रखने

योग्य पदार्थ—मिल सकता था, न छोड़ता। राजा, जिसका कोप वह भरता था, अपने इधे मंत्री से बहुत प्रसन्न रहता जिसने, सफलता से फूलकर भोजदेव से उसके विभाग का लेखा माँगा। भोज जानता था कि वह उसके पद से कुढ़ता है, अतः उसने राजा के पास जाकर धर्म्मसिंह के समस्त षड्यन्त्र की बात कही और मन्त्री के अत्याचार से रक्षा पाने के लिये उनसे प्रार्थना की। किंतु हम्मीर ने भोज की बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और कहा कि धर्म्मसिंह को पूरा अधिकार सौंपा गया है, वह जो उचित समझे कर सकता है, इसलिये यह आवश्यक है कि और लोग उसकी आज्ञा मानें। भोज ने जब देखा कि राजा का चित्त उसकी ओर से फिर गया है तब उसने अपनी संपत्ति जब्त होने दी और धर्म्मसिंह के आज्ञानुसार उसे लाकर राजा के भंडार में रखा। पर कर्त्तव्य के अनुरोध से वह अपने नायक के साथ अब भी जहाँ कहीं वे जाते जाता रहता था एक दिन राजा वैजनाथ के मंदिर में पूजन के हेतु गए और भोज को अपने दल में देखकर उन्होंने एक सभासद से, जो पास खड़ा था, व्यंग्यपूर्वक कहा कि 'पृथ्वी अधम जनों से भरी है, किंतु पृथ्वी पर सबसे अधम जीव कौआ है, जो क्रुद्ध उल्लू से अपने पर नोचवाकर भी अपने पुराने पेड़ों पर के घोसले में पड़ा रहता है।' भोज ने इस व्यंग्य का अर्थ समझा और यह भी जाना कि यह उसी पर छोड़ा गया है। अत्यंत दुखी होकर वह घर लौट गया और उसने अपने अपमान की बात अपने छोटे भाई पीतम से कहा। दोनों भाइयों ने अब देश छोड़ने का संकल्प किया, और दूसरे दिन भोज हम्मीर के पास गया और उसने बड़ी नम्रता से तीर्थाटन के हेतु काशी जाने की अनुमति माँगी। राजा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और कहा कि 'काशी क्या जी चाहे तो तुम और आगे जा सकते हो—तुम्हारे कारण नगर उजड़ जाने का भय नहीं है।' इस अविनीत वचन का उत्तर भोज ने कुछ न दिया। वह प्रणाम करके चला गया और उसने तुरत काशी के हेतु प्रस्थान कर दिया। राजा भोजदेव के चले जाने से प्रसन्न हुआ और उसने

कोतवाल का पद, जो (उसके जाने से) खाली हुआ, रतिपाल को प्रदान किया।

जब भोज शिरसा पहुँचा तब उसने अपने दिन के फेर पर विचार किया और संकल्प किया कि इन अपमानों का बिना बदला लिए न रहना चाहिए। चित्त की इसी अवस्था में वह अपने भाई पीतम के साथ योगिनीपुर गया और वहाँ अलाउद्दीन से मिला। मुसलमान सरदार अपने दरबार में भोज के आ जाने से बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बड़े आदर से उसके साथ व्यवहार किया और जगरा का नगर तथा इलाका उसे जागीर में दिया। अब से पीतम तथा भोज के परिवार के और लोग यहाँ रहने लगे और वह आप (भोज) दरबार में रहने लगा। अलाउद्दीन का अभिप्राय हम्मीर का वृत्त जानने का था इस लिये भेंट और पुरस्कार से दिन दिन भोज की प्रतिष्ठा बढ़ाने लगा और वह भी धीरे धीरे अपने नए स्वामी के हित-साधन में तत्पर हुआ।

भोज को अपने पक्ष में समझ अलाउद्दीन ने एक दिन उससे अकेले में पूछा कि हम्मीर को दबाने का कोई सुगम उपाय है। भोज ने उत्तर दिया कि हम्मीर ऐसे राजा पर विजय पाना कोई सहज काम नहीं है। जिससे कुंतल, मध्यदेश, अंग और कांची तक के राजा भयभीत रहते हैं, जो छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न, एक विशाल और प्रबल सेना का नायक है, जिसकी और समस्त राजा शंका करते और आज्ञा मानते हैं, कई राजाओं को दमन करनेवाला पराक्रमी विराम जिसका भाई है, जिसकी सेवा में महिमासाह तथा और दूसरे निःशंक मोगल सर्दार रहते हैं, जिसने उसके भाई को हराकर स्वयं अलाउद्दीन को छकाया। भोज ने कहा कि न केवल हम्मीर के पास योग्य सेनापति ही हैं वरन् वे सबके सब उससे स्नेह रखते हैं। एक ओर के सिवाय और कहीं लोभ दिखाना असंभव है। हम्मीर की सभा में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा है जो अपने को बेच सकता है। जैसे दीपक के लिये वायु का झोंका, कमल के लिये मेघ, सूर्य्य

ने लिये रात्रि, यती के लिये स्त्रियों का संग, दूसरे गुणों के लिये लोभ वैसे ही हम्मीर के लिये अप्रतिष्ठा और नाश का कारण यह एक व्यक्ति है। भोज ने कहा कि यह समय भी हम्मीर के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिये अनुपयुक्त नहीं है। इस वर्ष चौहान प्रदेश में खूब अन्न हुआ है। यदि किसी प्रकार अलाउद्दीन उसे रखने के पहले ही किसानों से छीन सके तो वे जो कि अधे व्यक्ति के अत्याचार से पहले ही से पीडित हैं, हम्मीर का पक्ष छोड़ने पर सम्मत हो सकते हैं।

अलाउद्दीन को भोज का विचार पसंद आया और उसने तुरंत उलुगखाँ को एक लाख सवारों का सेना लेकर हम्मीर के देश पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उलुगखाँ की सेना एक प्रबल धारा के समान जिन प्रदेशों से होकर निकलती उनके अधिपतियों को नरकट के समान नवाती चली जाती। सेना इसी ढंग से हिंदावत पहुँच गई। तब इसके आने का समाचार हम्मीर तक पहुँचाया गया। इस पर उस हिंदू राजा ने एक सभा की और विचार किया कि किन उपायों का अवलंबन करना अच्छा होगा। यह निश्चय हुआ कि वीरम और राज्य का शेष आठ बड़े पदाधिकारी शत्रु से युद्ध करने जायें। तुरंत राजा के सेनानायकों ने सेना को आठ भागों में विभक्त किया और आठों दिशाओं से आकर वे मुसलमानों पर टूट पड़े। वीरम पूर्व से आया और महिमासाह पश्चिम से। जाजदेव दक्षिण से और गर्भारुक उत्तर की ओर से बढ़ा। रतिपाल अग्निकोण से आया और तिचर मोगल ने वायुकोण से आक्रमण किया। रणमल ईशानकोण से आया और वैचर ने नैऋत्य की ओर से आकर आक्रमण किया। राजपूत लोग बड़े पराक्रम के साथ अपने कार्य्य में तत्पर हुए। उनमें से कई एक ने शत्रु की खाइँयों को मिट्टी और कूड़े करकट से भर दिया, कई एक ने मुसलमानों के लकडी के घेरों में आग लगा दी। कुछ लोगों ने उनके डेरों (खेमों) की रस्सियों को काट डाला। मुसलमान लोग शस्त्र

लेकर खड़े थे और डींग हाँककर कहते थे कि हम राजपूतों को घास के समान काट डालेंगे। दोनों दल साहसपूर्वक जी खोलकर लड़े, किंतु राजपूतों के लगातार आक्रमण के आगे मुसल्मानों को हटना पड़ा। अतएव उनमें से बहुतों ने रणक्षेत्र त्याग दिया और वे अपना प्राण लेकर भागे। कुछ काल पीछे समस्त मुसल्मानी सेना ने इसी रीति का अनुसरण किया और वह कायरता से युद्धक्षेत्र से भागी; राजपूतों की पूरी विजय हुई।

जब युद्ध समाप्त हो गया तब सीधे सादे राजपूत लोग युद्धस्थल में अपने मरे और घायल लोगों को उठाने आए। इस खोज में उन्होंने बहुत सा धन, शस्त्र, हाथी और घोड़े पाए। शत्रु की बहुत सी स्त्रियाँ उनके हाथ आईं। रतिपाल ने आते हुए प्रत्येक नगर में उनसे मट्ठा बेचवाया।

हम्मीर शत्रु के ऊपर अपने सेनापतियों की इस विजयप्राप्ति से अत्यंत प्रसन्न हुए। इस घटना के उपलक्ष में उन्होंने एक बड़ा दरबार किया। दरबार में राजा ने रतिपाल को सोने का सिकरी पहनाई, और उसकी तुलना युद्ध के हाथी से की जो सुवर्ण के पट्ट का अधिकारी होता है। दूसरे सरदार और सिपाही लोग भी अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पुरस्कृत किए गए और अनुग्रहपूर्वक उन्हें अपने अपने घर जाने की आज्ञा मिली।

मोगल सरदारों के सिवाय और सब लोग चले गए। हम्मीर ने यह बात देखी और कृपापूर्वक उनसे रह जाने का कारण पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि कृतघ्न भोज को, जो जगरा में जागीर भोग रहा है, दंड देने के पहले हम तलवार म्यान में करना और अपने घर जाना बुरा समझते हैं। उन्होंने कहा कि राजा के संबंध के कारण ही हम लोगों ने उसे अब तक जीता छोड़ा है; किंतु अब वह इस सहनशीलता के योग्य नहीं रहा क्योंकि उसी की प्रेरणा से शत्रु ने रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की थी। अतएव उन्होंने जगरा पर चढ़ाई करके भोज पर आक्रमण करने की अनुमति माँगी। राजा ने

प्रार्थना स्वीकार की और दोनों मोगलों ने तुरंत जगरा की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने नगर को घेरकर ले लिया और पीतम को कई और मनुष्यों के साथ बंदी बनाकर वे उसे फिर रणथंभौर ले आए।

उलुगखाँ पराजय के पीछे तुरंत दिल्ली लौट गया और जो कुछ हुआ था अपने भाई से उसने सब कह सुनाया। उसके भाई ने उस पर कायरता का दोष लगाया; अपने भागने का दोष उसने यह कहकर मिटाया कि उस अवस्था में मेरे लिये केवल एक यही उपाय था जिससे इस संसार में एक बेर फिर मैं आपका दर्शन करता और चौहान से लड़ने के लिये दूसरा अवसर पाता। उलुगखाँ ने बात गढ़ कर छुट्टी भी न पाई थी कि क्रोध से लाल भोज भीतर आया। उसने अपने उपवस्त्र को पृथ्वी पर बिछा दिया और उसपर इस प्रकार लोटने और अंडबंड बकने लगा जैसे उस पर प्रेत चढ़ा हो। अलाउद्दीन को उसका यह विलक्षण आचरण कुछ कम बुरा नहीं लगा; उसने उसका कारण पूछा। भोज ने उत्तर दिया कि मेरे लिये इस विपत्ति को कभी भूलना कठिन है जो आज मुझपर पड़ी है; क्योंकि महिमासाह ने जगरा में आकर मुझ पर आक्रमण किया और मेरे भाई पीतम को बंदी करके हम्मीर के पास ले गया। भोज ने कहा—लोग घृणा से मेरी ओर उँगली दिखाकर अब यही कहेंगे कि यह एक ऐसा मनुष्य है जिसने अधिक पाने के लालच से अपना सर्वस्व खो दिया। असहाय और अनाथ होकर मैं पृथ्वी पर अब भी बेखटके नहीं लेट सकता क्योंकि वह समस्त पृथ्वी हम्मीर की है, इसीलिये मैंने अपना वस्त्र बिछा दिया है जिसमें उसी पर मैं उस शोक में छटपटाऊँ जिसने मुझमें खड़े रहने की शक्ति भी नहीं रहने दी है।

अपने भाई की सहायता की कथा से अलाउद्दीन के हृदय में क्रोध की अग्नि पहले ही से जल उठी थी अब भोज की ये बातें उस अग्नि में आहुति के समान हुईं। हृदय के आवेग में अपनी पगड़ी को पृथ्वी पर पटककर उसने कहा कि हम्मीर की मूर्खता उस मनुष्य

की सी है जो समझता है कि मैं सिंह के कपाल पर पैर रख सकता हूँ, और प्रतिज्ञा की कि मैं चौहानों की समस्त जाति ही को नष्ट कर डालूँगा। उसने तुरत अनेक देशों के राजाओं के पास पत्र भेजे और हम्मीर के विरुद्ध लड़ाई में योग देने के लिये उन्हें बुलाया। अंग, तैलंग, मगध, मैसूर, कलिंग, वंग, भोट, मेड़पाट, पचाल, बगाल, थमिम, भिल्ल, नेपाल तथा दाहल के राजा और कुछ हिमालय के सरदार अपना अपना दल आक्रमणकारी सेना में भरने को लाए। इस बहुरंगिनी सेना में कुछ लोग ऐसे थे जो युद्ध की देवी के प्रेम से आए थे, और कुछ ऐसे थे जो लूट की चाह से आक्रमणकारियों के दल में भरती हुए थे। कुछ लोग केवल उस घमासान युद्ध के दर्शक ही होने के हेतु आए थे जो होनेवाला था। हाथी, घोड़ों, रथों और मनुष्यों की इतनी कसामस थी कि भीड़ में कहीं तिल रखने की जगह नहीं थी। इस भारी समारोह के साथ दोनों भाई नसरतखाँ और उलुगखाँ रणथंभौर प्रदेश की ओर चले।

अलाउद्दीन छोटे से दल के साथ इस अभिप्राय से पीछे रह गया जिसमें राजपूतों को यह भय बना रहे कि अभी बादशाह के पास सेना बची है।

सेना की संख्या इतनी अधिक थी कि मार्ग में नदियों का जल चुक जाता था इससे यह आवश्यक हुआ कि सेना किसी एक स्थान पर कुछ घंटों से अधिक न ठहरे। कूच पर कूच बोलते दोनों सेनापति रणथंभौर प्रदेश की सीमा पर पहुँच गए। इससे आक्रमणकारियों के हृदयों में भिन्न भिन्न भाव उत्पन्न हुए। वे लोग जो पहली लड़ाई में सम्मिलित नहीं हुए थे कहते थे कि विजय पाना निश्चित है क्योंकि राजपूतों के लिये ऐसी सेना का सामना करना असंभव है। किंतु पहली लड़ाई के योद्धा लोग ऐसा नहीं समझते थे और अपने साथियों से कहते थे कि याद रखना हम्मीर की सेना से सामना करना है अतएव युद्ध के अंत तक डींग हाँकना बंद रखना चाहिए।

जब सेना उस घाटी में पहुँची जहाँ उलुगखाँ की पराजय और

दुर्गति हुई थी तब उसने अपने भाई को शिक्षा दी कि अपनी शक्ति ही पर बहुत भरोसा न करना चाहिए, वरन, चूंकि स्थान विकट और हम्मीर की सेना बली और निपुण है, इससे यह चाल चलनी चाहिए कि किसी को हम्मीर की सभा में भेज दें जो दो चार दिन तक संधि की बातचीत में उन्हें बहलाए रहे; और इस बीच में सेना कुशलपूर्वक पर्वतों को पार करे और अपनी स्थिति दृढ़ कर ले। नसरतखाँ ने अपने भाई की इस अनुभवपूर्ण बात को माना, और मोल्हणदेव उन बातों का प्रस्ताव करने के लिये भेजा गया जिनसे मुसल्मान लोग हम्मीर के साथ संधि कर सकते थे। बातचीत होने तक हम्मीर के लोगों ने आक्रमणकारी सेना को उस भयानक घाटी को बे-रोक टोक पार करने दिया। अब खाँ ने अपने भाई को तो उस मार्ग के एक पार्श्व में स्थित किया जो 'मंडी पथ कहलाता था और उसने स्वयं श्रीमंडप के दुर्ग को छेंका। साथी राजाओं के दल जैत्रसागर के चारों ओर टिकाए गए।'

" दोनों पक्ष अपनी अपनी घात में थे। मुसलमानों ने समझा कि हम आक्रमण आरंभ करने के लिये धूर्त्तता से उत्तम स्थिति पा गए हैं; उधर राजपूतों ने विचारा कि शत्रु अंतर्भाग में इतनी दूर बढ़ आए हैं कि वे अब हमसे किसी प्रकार भाग नहीं सकते।

रणथंभौर में खाँ के दूत ने राजा की आज्ञा से दुर्ग में प्रवेश पाया; जो कुछ उसने वहाँ देखा उससे उसपर राजा के प्रताप का आतंक छा गया। उसके हेतु जो दरबार हुआ उसमें वह गया, और आवश्यक शिष्टाचार के उपरांत उसने साहसपूर्वक उस संदेसे को कहा जो लेकर वह आया था। उसने कहा 'मैं विख्यात अलाउद्दीन के भाई उलुगखाँ और नसतरखाँ का दूत होकर राजा के दरबार में आया हूँ; मैं राजा के हृदय में, यदि संभव हो, तो यह बात जमाने के लिये आया हूँ कि अलाउद्दीन ऐसे महाविजयी का सामना करना कैसा निष्फल है और उन्हें अपने सरदार से संधि कर लेने की संमति देने आया हूँ।' उसने हम्मीर से संधि के लिये — — —

बतलाईं—"चाहे आप मेरे सरदार को एक लाख मोहर, चार हाथी और तीन सौ घोड़े भेंट करें और अपनी बेटी अलाउद्दीन को व्याह दें, अथवा उन चार विद्रोही मोगल सरदारों को मेरे हवाले कर दें जो अपने स्वामी के कोपभाजन होकर अब आप की शरण में रहते हैं।" दूत ने फिर कहा "यदि आप अपने राज्य और प्रताप को शांतिपूर्वक भोगना चाहते हों तो इन दो में से किसी शर्त को मानकर अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपको अच्छा अवसर मिला है; इससे आपको शत्रुओं का नाश करनेवाले बादशाह अलाउद्दीन की कृपा और सहायता प्राप्त होगी जिसके पास असंख्य दृढ़ दुर्ग, सुसज्जित शस्त्रागार और मेगजीन हैं, जिसने देवगढ़ ऐसे ऐसे अगणित अजेय दुर्गों पर अधिकार करके महादेव को भी लज्जित किया क्योंकि उनकी (महादेव की) ख्याति तो अकेले त्रिपुर के गढ़ को सफलतापूर्वक अधिकृत करने से हुई है।"

हम्मीर जो दूत के वचन अधीर होकर सुनता रहा इस अपमानकारी सँदेसे से बहुत ही क्रुद्ध हुआ और उसने श्री मोल्हणदेव से कहा कि यदि तुम भेजे हुए दूत न होते तो जिस जीभ से तुमने ये अपमान-सूचक बातें कही हैं वह काट ली गई होती। हम्मीर ने न केवल इन शर्तों में से किसी को मानना अस्वीकार ही किया वरन् अपनी ओर से उतने खडग के आघात स्वीकार करने के लिये अलाउद्दीन से प्रस्ताव किया जितनी मुहर हाथी और घोडे माँगने का उसने साहस किया, और दूत से यह भी कहा कि मुसलमान सरदार का इस रणभिक्षा को अस्वीकार करना सूअर खाने के बराबर होगा। बिना और किसी शिष्टाचार के दूत सामने से हटा दिया गया।

रणथंभोर की सेना युद्ध के लिये सुसज्जित होने लगी। बड़ी योग्यता और पराक्रम के सेनापति भिन्न भिन्न स्थानों की रक्षा के हेतु नियुक्त हुए। दुर्ग की दीवारों पर रक्षकों को धूप से बचाने के लिये इधर उधर डेरे गाड़े गए। कई स्थानों पर उबलता हुआ तेल

और राल रखी गई कि यदि आक्रमणकारियों में से कोई निकट आने का साहस करे तो उसके शरीर पर वह छोड़ दी जाय, उपयुक्त स्थानों पर तोपें चढ़ा दी गईं। अंत में मुसलमानी सेना भी रणथंभौर दुर्ग के सामने आई। कई दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। नसरतखाँ अचानक एक गोली के लगने से मर गया और बरसात के आ जाने पर उलुगखाँ को लड़ाई बंद करनी पड़ी। वह दुर्ग से कुछ दूर हट गया और उसने अलाउद्दीन के पास अपनी भयानक स्थिति का समाचार भेजा। उसने नसरत खाँ का शव भी समाधिस्थ करने के निमित्त उसके पास भेज दिया। अलाउद्दीन ने यह समाचार पाकर तुरत रणथंभौर की ओर प्रस्थान किया। यहाँ पहुँचकर उसने तुरत अपनी सेना को दुर्ग के द्वार की ओर बढ़ाया और उसे छेंक लिया।

हम्मीर ने इन कार्य्यों की तुच्छता सूचित करने के लिये दुर्ग की दीवारों पर कई जगह सूप के झंडे गड़वा दिए। इससे यह अभिप्राय झलकता था कि दुर्ग के समुख अलाउद्दीन के आगमन से राजपूतों को कुछ भी बोझ वा कष्ट नहीं मालूम होता था। मुसलमान सरदार ने देखा कि उसमें साधारण धैर्य और साहस के मनुष्यों से पाला नहीं पड़ा है, और उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजकर यह कहलाया कि मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ, और ऐसा पराक्रमी शत्रु चाहे जिस बात की प्रार्थना करे उसे मानने में मैं प्रसन्न हूँ। हम्मीर ने उत्तर दिया कि यदि अलाउद्दीन जो मैं चाहूँ उसे देने में प्रसन्न है तो मेरे लिये इससे बढ़कर संतोष की बात और कोई नहीं होगी कि वह दो दिन मेरे साथ युद्ध करे, और मुझे आशा है कि मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत होगी। मुसलमान सरदार ने इस उत्तर की यह कहकर बड़ी प्रशंसा की कि यह सर्वथा उसके प्रतिद्वंद्वी के साहस के योग्य है और उससे दूसरे दिन युद्ध रोपने का वचन दिया। इसके अनंतर अत्यंत भीषण और कराल युद्ध हुआ। इन दो दिनों में मुसलमानों के कम से कम ८५००० आदमी मारे गए। दोनों योद्धाओं के बीच कुछ दिन विश्राम

करना निश्चित होने पर लड़ाई कुछ काल के लिये बंद हुई।

इस बीच में एक दिन राजा ने दुर्ग के प्राचीर पर राधादेवी का नाच कराया; उनके चारों ओर बड़ा जमाव था। यह स्त्री क्रम से क्षण क्षण पर घूमती हुई, जिसे संगीत जाननेवाले ही अच्छी तरह समझ सकते थे, जान-बूझकर अपनी पीठ अलाउद्दीन की ओर फेर लेती थी जो किले से थोड़ी दूर नीचे अपने डेरे में बैठा यह देख रहा था। कोई अश्चर्य नहीं कि वह इस आचरण से रुष्ट हुआ, और कोप करके अपने पास के लोगों से उनसे कहा कि क्या मेरे असंख्य साथियों में कोई ऐसा है जो इस स्त्री को इतनी दूर से एक तीर से मारकर गिरा सकता है। एक सरदार ने उत्तर दिया कि मैं केवल एक आदमी को जानता हूँ जो यह काम कर सकता है, वह उड्डानसिंह है जिसे बादशाह ने कैद कर रखा है। कैदी तुरंत छोड़ दिया गया और अलाउद्दीन के पास लाया गया जिसने उसे उस सुंदर लक्ष्य पर अपना कौशल दिखाने की आज्ञा दी। उड्डानसिंह ने आज्ञानुसार वैसा ही किया, और एक क्षण में उस वीरांगना की सुंदर देह वाण से विधकर दुर्ग की दीवार पर से सिर के बल नीचे गिरी।

इस घटना से महिमासाह को बहुत क्रोध हुआ और उसने राजा से अलाउद्दीन के साथ भी वही व्यवहार करने की अनुमति माँगी जो उसने बेचारी राधादेवी के साथ किया था। राजा ने उत्तर दिया कि मुझे तुम्हारी धनुर्विद्या का असाधारण कौशल विदित है, किं मैं नहीं चाहता कि अलाउद्दीन इस रीति से मारा जाय क्योंकि उसकी मृत्यु से मेरे साथ शस्त्र ग्रहण करनेवाला कोई पराक्रमी शत्रु न रह जायगा। महिमासाह ने तब प्रत्यंचा चढ़े हुए वाण को उड्डानसिंह पर छोड़ा और उसे मार गिराया। महिमासाह के इस कौशल ने अलाउद्दीन को इतना सशंकित कर दिया कि वह तुरंत अपने डेरे को झील के पूर्वीय पार्श्व से हटाकर पश्चिम की ओर ले गया जहाँ ऐसे आक्रमणों से अधिक रक्षा हो सकती थी। जब डेरा हटाया गया तब राजपूतों ने देखा कि शत्रु ने नीचे नीचे सुरंग तैयार कर ली है, और

खाई के एक भाग पर मिट्टी से ढका हुआ लकड़ी और घास का पुल बाँधने का यत्न किया है। राजपूतों ने इस पुल को तोपों से नष्ट कर दिया, और सुरंग में खौलता हुआ तेल डालकर उन लोगों को मार डाला जो भीतर काम कर रहे थे। इस प्रकार अलाउद्दीन का गढ़ लेने का सब यत्न निष्फल हुआ। उसी समय वर्षा से भी उसे बहुत कष्ट होने लगा जो मूसलाधार होती थी। अतएव उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजा कि कृपा करके रतिपाल को मेरे डेरे में भेज दीजिए क्योंकि मुझे उनसे इस अभिप्राय से बातचीत करने की इच्छा है कि जिसमें हमारे और आपके बीच का झगड़ा शांतिपूर्वक तै हो जाय।

राजा ने रतिपाल को जाकर अलाउद्दीन की बात सुनने की आज्ञा दी। रणमल रतिपाल के प्रभाव से कुढ़ता था और नहीं चाहता था कि वह इस काम के लिये चुना जाय।

अलाउद्दीन रतिपाल से बड़े ही आदर के साथ मिला। उसके दरबार के डेरे में प्रवेश करने पर मुसलमान सरदार अपने स्थान पर से उठा और उसे आलिंगन करके उसने अपनी गद्दी पर बैठाया और वह आप उसके बगल में बैठ गया। उसने अमूल्य भेंट उसके सामने रखवाई तथा और भी पुरस्कार देने का वचन दिया। रतिपाल इस सुंदर व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। उस धूर्त मुसलमान ने यह देखकर और लोगों को वहाँ से हट जाने की आज्ञा दी। जब वे सब चले गए तब उसने रतिपाल से बातचीत आरंभ की। उसने कहा— "मैं अलाउद्दीन मुसलमानों का बादशाह हूँ, और मैंने अब तक सैकड़ों दुर्ग ढहाए और लिए हैं। किंतु शस्त्र के बल से रणथंभौर को लेना मेरे लिये असंभव है। इस दुर्ग को घेरने से मेरा अभिप्राय केवल उसके अधिकार की ख्याति पाना है। मैं आशा करता हूँ (जब कि आपने मुझसे मिलना स्वीकार किया है) कि मैं अपना मनोरथ सिद्ध करूँगा और अपनी इच्छा पूरी करने में मुझे आपसे कुछ सहायता पाने का भरोसा है। मैं अपने लिये और अधिक राज्य और किले नहीं चाहता। जब मैं इस गढ़ को लूँगा तब इसके सिवाय और क्या

कर सकता हूँ कि उसे आप ऐसे मित्र को दे दूँ ? मुझे तो उसके प्राप्त करने की ख्याति ही से प्रसन्नता होगी।" ऐसी ऐसी फुसलाहटों से रतिपाल का मन फिर गया और उसने इस बात का अलाउद्दीन को निश्चय भी करा दिया। इस पर, अलाउद्दीन अपने लक्ष्य को और भी दृढ़ करने के लिये रतिपाल को अपने हरम में ले गया और वहाँ उसने उसे अपनी सब से छोटी बहिन के साथ खान पान करने के लिये एकांत में छोड दिया। यह हो चुकने पर रतिपाल मुसलमानों के डेरे से निकलकर दुर्ग को लौट आया।

रतिपाल इस प्रकार अलाउद्दीन के पक्ष में हो गया। अतएव जब वह राजा के पास आया तब उसने जो कुछ मुसलमानों के डेरे में देखा था और जो कुछ अलाउद्दीन ने उससे कहा था, उसका सच्चा वृत्तांत नहीं कहा। यह न कहकर कि अलाउद्दीन का बल राजपूतों के लगातार आक्रमण से बिलकुल टूट गया है और वह गढ़ लेने का नाम मात्र करके लौटना चाहता है, उसने कहा कि वह न केवल राजा से दीनतापूर्वक अधीनता स्वीकार कराने ही पर उतारू है वरंच उसमें अपनी धमकियों को सच्चा कर दिखाने की सामर्थ्य है। रतिपाल ने कहा कि अलाउद्दीन इस बात को मानता है कि राजपूतों ने उसके कुछ सिपाहियों को मारा है किंतु इसकी उसे कुछ परवा नहीं, "गोजर की एक टाँग टूटने से वह लँगडा नहीं कहा जा सकता।" उसने हम्मीर को संमति दी कि ऐसी दशा में आपको स्वयं इसी रात को रणमल से मिलना चाहिए और उसे आक्रमणकारियों को हटाने पर उद्यत करना चाहिए, देश-द्रोही रतिपाल ने कहा कि रणमल एक असाधारण योद्धा है किंतु वह शत्रुओं को हटाने का पूरा पूरा उद्योग नहीं करता है क्योंकि वह राजा से किसी न किसी बात के लिये दुखी है। रतिपाल बोला कि राजा के मिलने से सब बातें ठीक हो जायँगी।

राजा से मिलने के उपरांत रतिपाल रणमल से मिलने गया और वहाँ जाकर मानों अपने पुराने मित्र को सर्वनाश से बचाने के निमित्त उसने कहा कि न जाने क्यों राजा का चित्त तुम्हारी ओर से

फिर गया है। इनसे युद्ध के पहले ही हल्ले में तुम शत्रु की ओर हो जाना। उनसे कहा कि हम्मीर इसी रात को तुम्हें बंदी बनाना चाहता है। उसने उससे वह घड़ी भी बतलाई जब राजा उसके पास इस अभिप्राय से आवेंगे। यह सब करके रतिपाल चुपचाप अपनी इस शठता का परिणाम देखने की प्रतीक्षा करने लगा।

जब रतिपाल हम्मीर से मिलने गया था तब उनके पास उनका भाई वीरम भी था। उसने अपने भाई से यह विश्वास प्रगट किया कि रतिपाल ने जो कुछ कहा है वह सत्य नहीं है। शत्रुओं ने उसे अपनी ओर मिला लिया है। उसने कहा कि बोलते समय रतिपाल के मुँह से मद्य की गंध आती थी, और मद्यप का विश्वास करना उचित नहीं। कुल का अभिमान, शील, विवेक, लज्जा, स्वामिभक्ति, सत्य और शौच ये ऐसे गुण हैं जो मद्यपों में नहीं पाए जा सकते। अपनी प्रजा में राजद्रोह का प्रचार रोकने के लिये वीरम ने अपने भाई को रतिपाल के वध की संमति दी। किंतु राजा ने इस प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार किया कि मेरा दुर्ग इतना दृढ़ है कि वह शत्रु को किसी दशा में भी रोक सकता है; किंतु यदि कहीं संयोगवश रतिपाल के वध के अनंतर यह गढ़ शत्रुओं के हाथ में पड़ जायगा तो लोगों को यह कहने को हो जायगा कि एक निर्दोष मनुष्य के वध के दुष्कर्म के कारण उनका पतन हुआ।

इस बीच में रतिपाल ने राजा के रनिवास में यह खबर फैलाई कि अलाउद्दीन केवल राजा की कन्या से विवाह करना चाहता है और यदि उसकी यह इच्छा पूरी हो जाय तो वह संधि करने के लिये प्रस्तुत है, क्योंकि वह और कुछ नहीं चाहता। इस पर रानियों ने राजकन्या से राजा के पास जाकर यह कहने को कहा कि मैं अलाउद्दीन से विवाह करने में सहमत हूँ। वह कन्या वहाँ गई जहाँ उसके पिता बैठे थे और उसने उनसे अपने राज्य और शरीर की रक्षा के हेतु अपने को मुसलमान को दे डालने की प्रार्थना की। उस (कन्या) ने कहा "हे पिता मैं एक व्यर्थ काँच के टुकड़े के समान

हूँ और आपका राज्य और प्राण चितामणि वा पारस पत्थर के समान है; मैं विनती करती हूँ कि आप उनको रखने के लिये मुझको फेंक दीजिए।"

जब वह भोली भाली लड़की इस प्रकार हाथ जोड़कर बोली तब राजा का जी भर आया। उन्होंने उससे कहा, "तुम अभी बालिका हो इससे जो कुछ तुम्हें सिखाया गया है उसके कहने में तुम्हारा कोई दोष नहीं। किंतु मैं नहीं कह सकता कि उनको क्या दंड मिलना चाहिए जिन्होंने तुम्हारे हृदय में ऐसे ख्याल भर दिए हैं। स्त्रियों का अंग भंग करना राजपूतों का काम नहीं, नहीं तो उनकी जीभ काट ली जाती जिन्होंने ऐसी कुत्सित बात मेरी कन्या के कान में कही।" हम्मीर ने फिर कहा "पुत्री! तुम अभी इन बातों को समझने के लिये बहुत छोटी हो इससे तुम्हें बतलाना व्यर्थ है। किंतु तुम्हें म्लेच्छ मुसलमान को देकर सुख भोगना मेरे लिये ऐसा ही है जैसा अपना ही मांस खाकर जीवन काटना। ऐसे संबंध से मेरे कुल में कलंक लगेगा, मुक्ति की आशा नष्ट होगी, इस संसार में हमारे अंतिम दिन कड़ुए हो जायँगे। मैं ऐसे कलंकित जीवन की अपेक्षा दस हजार बार मरना अच्छा समझता हूँ।" अब वे चुप हुए और दृढ़ता तथा स्नेह-पूर्वक अपनी कन्या को चले जाने को उन्होंने कहा।

राजा, रतिपाल की संमति के अनुसार संध्या के समय अपनी शंकाओं को मिटाने के लिये रणमल के डेरे पर जाने को तैयार हुए, साथ में उन्होंने बहुत थोड़े आदमी लिए। जब वे रणमल के डेरे के निकट पहुँचे तब उसको (रणमल को) रतिपाल की बात याद आई। वह यह समझकर कि यदि मैं यहाँ ठहरूँगा तो मेरा बंदी होना निश्चय है, अपने दल के साहित गढ़ से भाग निकला और अलाउद्दीन की ओर जा मिला; यह देखकर रतिपाल ने भी वैसा ही किया।

राजा इस प्रकार ठगे और घबड़ाए हुए कोट में लौट आए उन्होंने भंडारी को बुलाकर भंडार की दशा पूछी कि कितने दिन तक सामान चल सकता है। भंडारी ने सच्ची बात कहने में अपने प्रभाव की

हानि समझ कहा कि सामान बहुत दिन तक के लिये काफी है। किंतु ज्योंही यह कहकर वह फिरा त्योंही विदित हुआ कि राजभाडार में कुछ भी अन्न नहीं है। राजा ने यह समाचार पाकर वीरम को उसके मारने और उसकी समस्त सपत्ति पद्मसागर में फेंक देने की आज्ञा दी।

उस दिन की अनेक आपत्तियों को झेलकर, राजा शिथिलता से अपनी शय्या पर जा पडे। किंतु उनकी आँखों में इस भयानक रात को नींद नहीं आई। जिन लोगों के साथ वे भाई से बढ़कर स्नेह का व्यवहार करते थे उनका उन्हें ऐसी दशा में अकेले छोड़कर एक एक करके चल खड़े होना उनको असह्य जान पडता था। जब सवेरा हुआ तब उन्होंने नित्य-क्रिया की और दरबार में बैठकर वे उस समय का दशा पर विचार करने लगे। उन्होंने सोचा कि जब हमारे राजपूतों ही ने हमें छोड़ दिया तब महिमासाह का क्या विश्वास, जो मुसलमान और विजातीय है। इसी दशा में उन्होंने महिमासाह को बुला भेजा और उससे कहा "सच्चा राजपूत होकर मेरा यह धर्म्म है कि देश की रक्षा में मैं अपना प्राण त्याग दूँ, किंतु मेरे विचार में यह अनुचित है कि वे लोग जो मेरी जाति के नहीं, मेरे हेतु युद्ध में अपने प्राण खोवें, इससे मेरी इच्छा है कि तुम कोई रक्षा का ऐसा स्थान बतलाओ जहाँ कि तुम सपरिवार जा सकते हो जिससे मैं तुम्हें कुशलपूर्वक वहाँ पहुँचवा दूँ।"

राजा के इस शील से संकुचित होकर, महिमासाह बिना कुछ उत्तर दिए, अपने घर लौट गया, और वहाँ तलवार लेकर उसने अपने जनाने के सब लोगों को काट डाला और हम्मीर के पास आकर कहा कि मेरी स्त्री और मेरे लडके जाने को तैयार हैं किंतु मेरी स्त्री एक बेर अपने राजा का मुँह देखना चाहती है जिसकी कृपा से उसने इतने दिनों तक सुख किया। राजा ने यह प्रार्थना अंगीकार की और अपने भाई वीरम के साथ वे महिमासाह के घर गए। किंतु वहाँ जाने पर यह हत्याकांड देख उनके आश्चर्य और शोक का ठिकाना न रहा। राजा, महिमासाह को हृदय से लगाकर

बच्चे के समान रोने लगे। उन्होंने उनसे चले जाने को कहने के कारण अपने को दोषी ठहराया और कहा कि ऐसी अलौकिक स्वामिभक्ति का बदला नहीं हो सकता। अतः धीरे धीरे, वे कोट में लौट आए और प्रत्येक वस्तु को गई हुई समझ, उन्होंने अपने लोगों से कहा कि तुम लोग जो उचित समझो वह करो, मैं तो शत्रु के बीच लड़कर प्राण देने को उद्यत हूँ। इसकी तैयारी में, उनके परिवार की स्त्रियाँ रंगदेवी के साथ चिता पर जलकर भस्म हो गई। जब राजा की कन्या चिता पर चढ़ने लगी तब राजा शोक के वशीभूत हुए। वे उसे हृदय से लगाकर छोड़ते ही न थे। किंतु उसने अपने को पिता की गोद से छुड़ाकर अग्नि में विसर्जन कर दिया। जब चौहानों की सती साध्वी ललनाओं की राख के ढेर के अतिरिक्त और कुछ न रह गया तब हम्मीर ने मृतक संस्कार किया और तिलांजलि देकर उनकी आत्माओं को शांत किया। इसके अनंतर वे अपनी बची हुई स्वामिभक्त सेना को लेकर गढ़ के बाहर निकले और शत्रुओं पर टूट पड़े। भीषण संमुख युद्ध उपस्थित हुआ। पहले वीरम युद्ध की कसामस के बीच लड़ते हुए गिरे, फिर महिमासाह के हृदय में गोली लगी। इसके पीछे जाज, गंगाधर, ताक और क्षेत्रसिंह परमार ने उनका साथ दिया। सबके अंत में महापराक्रमी हम्मीर सैकड़ों भालों से विधे हुए गिरे। प्राण का लेश रहते भी शत्रु के हाथ में पड़ना बुरा समझ उन्होंने एक ही वार में अपने हाथों से सिर को धड़ से जुदा कर दिया और इस प्रकार अपने जीवन को शेष किया। इस प्रकार चौहानों के अंतिम राजा हम्मीर का पतन हुआ! यह शोचनीय घटना उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में श्रावण के महीने में हुई।

यहाँ पर यह कथा समाप्त होती है। दोनों के मिलान करने पर मुख्य मुख्य बातों में आकाश-पाताल का अंतर जान पड़ता है। किस में कहाँ तक सत्यता है इसका निर्णय करना बड़ा कठिन है। दोनों कथाओं में हम्मीर के पिता का नाम जैत्रसिंह लिखा है अतएव इस संबंध में कोई संदेह की बात नहीं जान पड़ती। हम्मीररासो

में लिखा है कि कि हम्मीर का जन्म विक्रम संवत् ११४१ शाके १००८ में हुआ। साथ ही यह भी लिखा है कि अलाउद्दीन का जन्म भी इसी दिन हुआ। इस हिसाब से हम्मीर और अलाउद्दीन का जन्म १०८४ ई० में हुआ। पर अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों से यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर के गद्दी पर बैठने का संवत् १३३० (सन् १२८३ ई०) दिया है। यह ठीक जान पड़ता है। फिर हम्मीर महाकाव्य में लिखा है कि चौहानराज की मृत्यु उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में अर्थात् संवत् १३४८ (सन् १३०१ ई०) में हुई। अमीर खुशरू की तारीख अलाई में यह तिथि तीसरी जीलकद: ७०० हिजरी (जुलाई १३०१ ई०) दी है। मुसलमानी इतिहासों से विदित है कि सन् १२९६ में सुलतान अलाउद्दीन मुहम्मदशाह अपने चाचा जलालुद्दीन फीरोज-शाह को मारकर गद्दी पर बैठा, और सन् १३१६ ई० तक राज्य करता रहा। इस अवस्था में हम्मीररासो में दिए हुए संवत् ठीक नहीं हो सकते। कदाचित् यहाँ यह कह देना भी अनुचित न होगा कि हम्मीररासो में हम्मीर की जो जन्म कुंडली दी है वह भी ठीक नहीं है।

दूसरी बात जो इस काव्य के संबंध में विचार करने की है वह यह है कि हम्मीर की अलाउद्दीन से लड़ाई क्यों हुई। हम्मीररासो तथा ऐसे ही अन्य हिंदी काव्यों में मीर महिमाशाह की रक्षा के लिये युद्ध का होना लिखा गया है और इसमें कोई संदेह नहीं कि इस अद्भुत कथा से हम्मीर का गौरव बहुत कुछ बढ़ जाता है और कथा में भी एक अद्भुत रस का संचार हो आता है। पर हम्मीर महाकाव्य में इसका कहीं नाम भी नहीं है और न कहीं किसी पुराने इतिहास में इसका वर्णन मिलता है। पर महिमाशाह का हम्मीर के यहाँ रहना निश्चित है तथा उसके अपने बाल बच्चों को मारकर लड़ाई में हम्मीर का साथ देने की बात भी ठीक है। यह अवस्था तभी हो सकती है जब महिमाशाह अपने को हम्मीर का किसी बड़े उपकार के लिये ऋणी मानता हो। अलाउद्दीन का साथ न देकर हम्मीर का

साथ देना एक मुसलमान सर्दार के लिये निस्संदेह बडे आश्चर्य की बात है। हिंदी काव्यों में जिन घटनाओं का उल्लेख है उनका होना तो कोई असंभव बात है ही नहीं। भारतवर्ष में जितने बड़े युद्ध हुए हैं सब स्त्रियों के ही कारण हुए हैं। पृथ्वीराज के समय में तो मानों इसकी पराकाष्ठा हो गई थी। पर मुसलमानों के लिये यह निन्दा की बात थी। इस-लिये मुसलमान इतिहासकारों का इस घटना को छोड़कर युद्ध का कुछ दूसरा ही कारण बताना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पर नयनचंद्र सूरि का कुछ न कहना अवश्य संदेह उत्पन्न करता है। अलाउद्दीन ने जिस नीचता से रतिपाल को मिला लिया इसका तो यह कवि पूरा पूरा वर्णन करता है। यहाँ के कुछ श्लोक उद्धृत कर देना उचित जान पड़ता है—

अंतरतःपुरं नीत्वा शकेशस्तमभोजयत्।
अपीप्यत्तद्भगिन्या च प्रतीत्यै मदिरामपि॥ ८१॥
प्रतिश्रुत्य शकेशोक्तं ततः सर्वं स दुर्मतिः।
विरोधोद्बोधिनीर्वाचो गत्वा राज्ञे न्यरूपयत्॥ ८२॥

[सर्ग १३]

इनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि नयनचंद्र कुछ मुसलमानों का पक्षपाती नहीं था। कुछ लोग कह सकते हैं कि जैनी होने से उसका विरोधी होना असंभव नहीं है। मेरा अनुमान तो यह है कि उसने मुसलमानी इतिहासों के आधार पर अपना काव्य लिखा है क्योंकि उसमें कथित घटनाएँ और सन्-संवत् सब मुसलमानी इतिहासों से मिलते हैं। जो कुछ हो, इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐतिहासिक दृष्टि से नयनचंद्र सूरि का काव्य जोधराज के रासो से अधिक प्रामाणिक है।

तीसरी घटना, जिसपर विचार करना आवश्यक है, वह हम्मीर की मृत्यु है। दोनों काव्यों से यह सिद्ध होता है कि हम्मीर ने आत्म-हत्या की। हम्मीररासो में इसका कारण कुछ और ही लिखा है और हम्मीर महाकाव्य में कुछ और है। जोधराज के अनुसार हम्मीर को

विजय प्राप्त हुई और विजय के उत्साह में उसने मुसलमानी झंडे निशानों को आगे करके अपने गढ़ की ओर पयान किया जिसपर रानियों और रनिवास की अन्य महिलाओं ने यह समझा कि हम्मीर की हार हुई और मुसलमानी सेना गढ़ को लेने के लिये आ रही है। इसपर अपने सतीत्व की रक्षा के निमित्त उन्होंने अग्नि में अपने प्राण दे दिए। इस पर हम्मीर को ऐसी ग्लानि हुई कि उसने भी अपने प्राण देकर अपने संताप को शांत किया। नयनचंद्र के अनुसार रणमल और रतिपाल के विश्वासघात पर विजय की सब आशा जाती रही और हम्मीर ने पहले राजमहिलाओं को अग्निदेव के अर्पण कर रण में वीरोचित मृत्यु से मरना विचारा। अंत में जब उसका शरीर रणक्षेत्र में विधकर गिर पड़ा तो उसे आशंका हुई कि कहीं मुसलमानों के हाथ से मेरे प्राण न जायँ। इसलिये वहीं उसने अपने मस्तक को अपने हाथ से काटकर इस आशंकित अपमान से अपनी रक्षा की। दोनों बातों में राजमहिलाओं का अग्नि में आत्मसमर्पण करना और हम्मीर का आत्महत्या करना मिलता है और इन घटनाओं के संघटित होने में भी कोई संदेह या आश्चर्य की बात नहीं है। जो कथा इस संबंध में दोनों काव्यों में दी है वह युक्तिसंगत जान पड़ती है। कौन कहाँ तक सत्य है, इसका निर्णय करना तो बड़ा कठिन है, विशेष करके ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में तो इस संबंध में कुछ करना व्यर्थ है। जोधराज का यह लिखना कि अलाउद्दीन ने समुद्र में कूदकर अपने प्राण दे दिए, निस्संदेह असत्य जान पड़ता है। इस युद्ध के १५ वर्ष पीछे तक वह जीता रहा, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

जो कुछ हो, ऐतिहासिक अंश में गड़बड़ रहने पर भी हम्मीर की कथा बड़ी अद्भुत है और भारतवर्ष के गौरव को बढ़ानेवाली है। कौन ऐसा स्वदेशाभिमानी होगा जो राजमहिलाओं के जौहर और हम्मीर की वीरता तथा उसके साहस का वृत्तांत पढ़कर अपने को धन्य न मानता हो और जिसका हृदय देशगौरव से न भर जाता हो। धन्य

घोड़े की टाँग में ऐसे जोर से लगा कि उसका पैर टूट गया। बहुत ही छोटे से पत्थर के टुकड़े से घोड़े का पैर टूटा हुआ देख खोजा गया तो उसकी मारनेवाली भी वही खेत की रखवालिन कन्या निकली। पक्षियों के उड़ाने को उसने गोफन में रख कर गिल्ला फेंका था परंतु दैवयोग से यह घोड़े को आ लगा। जब उसने यह सुना कि घोड़े को चोट लग गई है तो अरसी जी के पास जाकर अपने बिना जाने अपराध की क्षमा बड़ी नम्रता से माँगी। संध्या को लौटते समय अरसी जी को फिर वही कन्या अपने घर को जाती हुई राह में मिली। यह लड़की माथे पर दूध का मटका रखे और दोनों हाथों में दो पड़रे (भैंस के बच्चे) लिए हुए जा रही थी, उस समय अरसी जी के साथियों में से एक ने हँसी में उसके दूध को गिरा देने का विचार किया और वह मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास होकर निकला। इससे यह लड़की कुछ भी न घबड़ाई और अपने हाथ में का एक पड़रा घोड़े के पिछले पैरों में ऐसा मारा कि घोड़ा और सवार दोनों धरती पर गिर पड़े और हँसी के बदले उलटी अपनी हानि कर ली। अरसी जी ने घर जाकर निश्चय कराया तो वह कन्या चंदाना वंश (चहुवानों की एक शाखा है) के एक राजपूत की पुत्री निकली। अरसी जी ने उसके बाप को बुलवाकर उससे अपने विवाह करने के लिये वह लड़की माँगी, परंतु उस राजपूत ने निषेध कर दिया। घर पहुँचकर जब अपनी स्त्री से उसने सब वृत्तांत कहा तो वह पति के इस कार्य्य से बहुत अप्रसन्न हुई और लग्न स्वीकार करने के लिये अपने पति को फिर अरसी जी के पास उसने लौटाया। अंत में अरसी जी का उस कन्या के साथ विवाह हुआ, जिसके पेट से अति पराक्रमी हम्मीरसिंह ने जन्म लिया। सिंहनी के पेट में तो सिंह ही जन्म लेता है। हम्मीरसिंह जी बचपन में अपनी ननसाल में रहकर बड़े हुए थे।

"हम्मीरसिंह के काका अजयसिंह जब केलवाड़े में रहते थे तो उनकी मुसलमानों के सिवाय पहाड़ियों में रहनेवाले राजपूत सर्दारों

के साथ भी यही लड़ाई रही। इन पहाड़ियों का मुखिया बालेछा जाति का मूंजा नामी एक राजपूत था जिसके साथ लड़ाई करने में एक बार अजयसिंह बहुत घायल हुए। इस समय अजयसिंह के दो पुत्र सजनसी और अजीतसी भी थे जिनकी आयु अनुमान १५ वर्ष की थी परंतु ये कुछ भी वीरता लड़ाई में न दिखा सके। इससे उन्होंने अपने भतीजे हम्मीरसिंह को बुला लिया और उनको सब वृत्तांत कह सुनाया। हम्मीरसिंह अपने दोनों चचेरे भाइयों से बड़े न थे परंतु तो भी उन्होंने मूँजा बालेछा का सिर काट लाना ऐसा विचार निश्चय करके वे निकले। थोड़े दिनों में उन्होंने मूंजा का सिर काट लाकर अपने काका को भेंट किया। अजयसिंह इस बात से बहुत प्रसन्न हुए, और मूँजा के ही रुधिर से तिलक करके अपने पीछे हम्मीरसिंह को राज्य का अधिकारी ठहराया। जब अजयसिंह मरे तो उनसे पहले ही अजमाल मर चुके थे। सजनसी गद्दी के लिये हम्मीरसिंह को अधिकारी नियत हुआ देख दक्षिण में चले गए, जिनके वंश में एक ऐसा वीर पुरुष जन्मा कि जिसने मुसलमानों से पूरा बदला ही न लिया किंतु अपने असामान्य पराक्रम और साहस से मुसलमानी राज्य का मूलोच्छेदन ही कर दिया। यह पुरुष मरहठों के राज्य की नींव जमानेवाला सितारे का राजा शिव जी था जो समस्त भारतवर्ष में विख्यात है। सजनसी से बारहवीं पीढ़ी में यह हिंदू धर्मरक्षक और अतुलित पराक्रमी वीर पुरुष शिव जी हुआ है। सजनसी जी से पीछे दुलीपजी, सीओजी, भोराजी, देवराज, उग्रसेन, माहुल जी, खेलुजी जनकोजी, संतोजी, शाहजी और शिव जी हुए। अजयसिंह के पीछे हम्मीरसिंह सं० १३०१ ई० में मेवाड़ की गद्दी पर बैठे। उस समय मेवाड़ की गिरती दशा होने से आस-पास के राजा लोगों ने मेवाड़ के राणाओं को अपना शिरोमणि मानना छोड़ दिया था। हम्मीरसिंह ने अपने पहाड़ी साथियों को इकट्ठा करके जिन जिन राजाओं ने इनको अधिष्ठाता मानना छोड़ दिया था उन सभों को परास्त करके अपने अधीन किया। इस प्रकार

थोड़े दिनों में ही हम्मीरसिंह ने अपना गौरव आस पास के राजाओं पर जमा लिया। अब चित्तौर को किस विधि लूँ इस विचार में हम्मीरसिह पड़े।

"हम्मीरसिंह ने चित्तौर के आस-पास का सारा देश लूटकर उजाड़ डाला, अकेला चित्तौर ही मुसलमानों के अधीन रह गया था। किसी प्रकार उसे लूँ, यही हम्मीरसिंह का दृढ़ विचार था। एक दिन उन्होंने अपने सब मनुष्यों को बुलाकर कहा कि "भाइयो! जिसे जीने की इच्छा हो, जिसे ससार के इन क्षणिक सुखों के बदले स्वर्ग का सुख छोड़ देना हो, जिसे अपनी प्रतिष्ठा की अपेक्षा प्राण प्यारे हों, जिसे अपने उम वैरी मुसलमानों का डर हो, जिसे अपनी गई हुई भूमाता को तुर्कों के हाथ में से निकाल लेने की हौस न हो और जिसको इस अवलो पर्वत की झाड़ा जंगलों में सदा पड़े रहने की इच्छा हो वह भले ही सुख से इस अर्वली की विकट गुहा गुफाओं में रहे, यह मेरी आज्ञा है। जो मेरी भुजा मे बल होगा तो तुम्हारे चले जाने पर भी अपने कुलदेवता की सहायता स अकेला भी चित्तौर को लूँगा। तुम लोग सुख से जाओ और जो ईश्वर-इच्छा से मैं चित्तोर को जल्दी ले सका ता तुमको पाछे बुला लूँगा, उस समय आ जाना।" हम्मीरसिंह के मनुष्यों में राजपूत भी थे परंतु अधिक तो आसपास के भील लोग थे। उन लोगों ने बालकपन से ही हम्मीरसिंह का पराक्रम देख रखा था और निरतर उनके साथ रहने से वे भी राजपूतों के समान ही साहसी और पराक्रमी हो गए थे और हम्मीरसिंह के चाल-चलन तथा व्यवहार से ही वे लोग ऐसे प्रसन्न थे कि यदि वे कहते तो प्राण देने को वे लोग उद्यत हो जाते। हम्मीरसिंह के उपरोक्त वचनों का उत्तर उन लोगों ने इस प्रकार दिया—"हम मरेंगे अथवा शत्रुओं को मारेंगे परंतु अपने राजा को छोड़कर कभी पीछे न हटेंगे, हम अपने कुल को कलंकित न करेंगे, हम अपने शत्रुओं के हाथ में से अपनी भूमाता को छुड़ाने के लिये अपने प्राण देंगे और इस जगत् के क्षणस्थायी सुखों को छोड़ स्वर्ग

का सदैव सुख भोगेंगे।" इस प्रकार वे एक स्वर होकर बोले कि मानो एक साथ मेघ की गर्जना हुई। हम्मीरसिंह ने इन वीर राजपूतों के ऊपर पुष्पों की वृष्टि करके कहा "धन्य हो मेरे प्यारे! धन्य हो! धन्य हो क्षत्रिय पुत्रो! धन्य हो! ऐसे ही उत्तर की मैं आशा रखता था और सोही अंत को मिला। तुम लोगों की शुभचिंतकता से मैं अपनी भूमाता को छुडा सकूँगा। तुम्हारी राजभक्ति और तुम्हारी एकता देख, तुम्हारा साहस और पराक्रम देख हमारे कुलदेवता हमारे सहायक होंगे। और मुझे निश्चय है कि हमारा मनोरथ सिद्ध होगा; इसलिये प्यारे वीर पुरुषो, तैयार हो जाओ। अपने बाल-बच्चों को इस पहाड़ की सुरक्षित गुफा में छोड आओ और उनकी सब प्रकार रक्षा होती रहे इसके लिये पाँच सहस्र वीर भीलों को नियत कर चलो।" हम्मीरसिंह के इन वाक्यों को सुनकर सर्वत्र जय जयकार होने लगी। उक्त प्रकार के प्रबंध करके ये सब चित्तौर के लिये पहाड़ों से उतर पडे।

"इस समय हम्मीरसिंह के पास पाँच हजार से कुछ अधिक मनुष्य थे तथापि, 'एक मराऊ सौ को मारे' इस कहावत के अनुसार वे पाँच लाख के समान थे। उन्होंने चित्तौर के चारों ओर का देश लूट लिया, ग्राम जला दिए, मुसलमानों को पकड़ लिया। चारों ओर अशांति रहने से व्यापारी व्यापार से और किसान खेती करने से रुक गए। मुसलमान लोग अपनी प्रजा का रक्षण न कर सके। इससे प्रजा का समूह हम्मीरसिंह के अधीन हो बसने लगा। इस समय हम्मीरसिंह की रहन सहन अर्वली पर्वत का चोटियों पर केलवाड़े में थी। वहाँ जाने का मार्ग बड़ा बेड़ा था। शत्रुओं के अधिकार कर लेने योग्य कदापि न था। अर्वली पर्वत के भीतरी गुप्त स्थलों को वहाँ से भाग जाने का मार्ग पृथक् था। ये गुप्त स्थल पहाड़ों की घनी झाड़ियों में होने से बड़े विकट थे। वहाँ इतने फलादि खाने योग्य पदार्थ उत्पन्न होते थे कि वर्षों तक सहस्रों मनुष्यों का निर्वाह हो सकता था। केलवाड़े से पश्चिम ओर का मार्ग खुला था जहाँ

होकर गुजरात और मारवाड़ का माल व्यापारी लाते थे तथा मित्रता रखनेवाले भीलों से भोजन की बड़ी सहायता मिलती थी। बाल बच्चों की रक्षा के लिये जो पाँच सहस्र भील नियत थे वे आवश्यकतानुसार रसद पहुँचा जाते थे। अच्छी तरह सोच समझ के और चतुराई से हम्मीरसिंह ने अपने लिये निर्भय स्थान ढूँढ़ा था। परंतु हम्मीरसिंह की बुद्धि को भला उनका दुर्दांत शत्रु अलाउद्दीन कैसे सह सकता था। वह सैन्य लेकर स्वयं आया और उसने अर्वली का पूर्व भाग जीत लिया। परंतु इससे हम्मीर की कुछ भी हानि न हुई। बादशाह ने अर्वली का पूर्वी भाग जीत लिया तो वे दक्षिण भाग में धूम मचाने लगे। अंत में अलाउद्दीन थक गया और हम्मीरसिंह को अधीन करने का काम चित्तौर के सूबेदार मालदेव को सौंप आप दिल्ली को लौट गया।

मालदेव अपने बल से तो हम्मीरसिंह को वश में कर न सका, छल से उनको वश में लाने तथा उनके अपमान करने का विचार कर अपनी पुत्री के विवाह कर देने के बहाने से उसने हम्मीरसिंह के पास नारियल भेजा। हम्मीरसिंह ने अपने संपूर्ण राजपूत लोगों तथा साथियों से इस विषय में संमति ली तो उन सभों ने इस संबंध के स्वीकार करने का निषेध किया, परंतु हम्मीरसिंह ने कहा कि "भाइयो मेरी समझ में तो यही आता है कि तुम सब भूल रहे हो। तुम लोग जो भय बतलाते हो उससे मैं अजान नहीं हूँ परंतु राजपूत होकर किसी के डर से अपना निश्चय किया हुआ कार्य्य छोड़ देना यह बड़ी कायरता है। यह राजपूत का नहीं किंतु दासीपुत्र का काम है। राजपूतों को तो सदा दुःख के समय के लिये कटिबद्ध रहना चाहिए। राजपूतों को तो एक बार घायल होकर घर भी छोड़ना पड़ता है, और एक बार बाजे गाजे के साथ गद्दी पर भी बैठना पड़ता है। जो भेजा हुआ यह टीका न स्वीकार करूँ तो मेरी माँ की कोख कलंकित होवे। मेरे शूर वीर भाइयो! मैं यह जानता हूँ कि तुम लोग अपने प्राणों की अपेक्षा मेरे प्राणों की अधिक चिंता

रखते हो परंतु इसमें तुम्हारी भूल है। घर में बैठे बैठे सवा मन रुई के गद्दे पर सोते सोते और बातें करते करते सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं, यह हम सभों से छिपा नहीं है। क्या यह तुम समझते हो कि जो इस संसार का मारने वा जिलानेवाला है वह हमको जो डर-कर घर में छिप जावेंगे तो न मारेगा। और जो उसे जीवित रखना होगा तो हमारा नाम मिटानेवाला कौन है? इसलिये घर में निकम्मे पड़े पड़े मर जाने से तो शत्रु को मारते मारते मरना ही श्रेष्ठ है, नहीं तो जीना भी किस काम का है। भला इस बहाने से जिन स्थानों में मेरे बाप दादे रहते थे, जिन किलों के ऊपर मेरे बाप दादों के झंडे फहराते थे, जिन जगलों में मेरे बाप दादों के शरीर का रुधिर बह चुका है, वे स्थल, वे गढ़ और राजमहल तो देखने को मिलेंगे। मेरे बाप दादे जिन स्थानों में मरे हैं वहीं मैं भी मरूँगा, उनके साथ मैं भी स्वर्गधाम पाऊँगा। कहीं हमारे कुल देवताओं ने ही अथवा हमारी भूमाता ने ही इस बहाने से मुझे वहाँ बुलवाया हो। कदाचित् उनकी इच्छा यही हो कि मैं वहाँ जाऊँ, इसलिये वहाँ जाने से वे भी हमारी सहायता अवश्य करेंगी। भाइयो! मेरी इच्छा है कि नारियल को स्वीकार करना चाहिए। उनके वचन सुनते ही सब लोगों में वीर-रस उमड़ आया और यह बात सबने स्वीकार कर ली और हम्मीरसिंह ने पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर जाने का विचार कर लिया। हम्मीरसिंह अपने छँटे छँटाए पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर के निकट पहुँचे, उस समय मालदेव के पाँच लड़के उनकी अगवानी को आए। द्वार पर तोरण बँधा हुआ न देखा, तथा नगर में कोई धूमधाम और विवाह की तैयारी न देखी, इससे उन्होंने मालदेव के पुत्रों से पूछा कि क्यों क्या बात है, विवाह की कुछ धूमधाम नहीं दीखती। वे कुछ उत्तर न दे सके। इससे हम्मीरसिंह क्रोध में भरे हुए चित्तौर में जाकर दर्बार में बैठ गए। हम्मीरसिंह का कोप और उनके मनुष्यों के लाल मुख देख मालदेव के देवता कूँच कर गए। उनके पकड़ लेने की तो सामर्थ्य कहाँ थी। पाँच सौ

वीर नंगी तलवारें लिए अडिग जमे हुए थे, वहाँ किसकी सामर्थ्य थी जो हम्मीरसिंह की ओर देख सके। हम्मीरसिंह अकेले भी मालदेव और उसके पाँच पुत्र के लिये काफी थे। मालदेव ने डरकर अपनी पुत्री के साथ हम्मीरसिंह का पाणिग्रहण कर दिया। उस लड़की ने हम्मीरसिंह को चित्तौर लेने की यह युक्ति बतलाई कि आपको जिस समय दहेज दिया जाय, उस समय आप उस वृद्ध महता को जो मेरे पिता का बड़ा चतुर सेवक है अपने लिये माँग लेना। निदान यही हुआ। इस भाँति विवाह करके हम्मीरसिंह अपने घर को लौटे। केलवाड़े में लोग बड़े अधीर हो रहे थे परंतु हम्मीरसिंह को कुशलपूर्वक लौट आया देख लोग आनंद में मग्न हो गए।

"इस रानी से हम्मीरसिंह के खेतसी नामक पुत्र जन्मा। जब खेतसी एक वर्ष का हुआ तो उसकी माता ने अपने बाप को लिखा कि मुझे अपने क्षेत्रपाल देवता के पगों लगना है, इसलिये मुझे वहाँ बुला लो। मालदेव उस समय मेर लोगों के साथ लड़ने को गया हुआ था इससे उसके भाइयों ने अपनी बहिन को बुला लिया। इस प्रकार हम्मीरसिंह की स्त्री, उनका पुत्र और कुछ मनुष्य चित्तौर में प्रविष्ट हुए। उसी बूढ़े महता के यत्न से जो कि मालदेव के यहाँ सेना का अध्यक्ष रह चुका था, और अब हम्मीरसिंह के यहाँ रहता था यह परिणाम निकला कि चित्तौर की सम्पूर्ण राजपूत सेना हम्मीरसिंह के पक्ष में हो गई। हम्मीरसिंह को गद्दी पर बिठाने के समाचार भेजे गए। हम्मीरसिंह आगे से ही सावधान होकर आस पास फिरते रहते थे। यह समाचार पाते ही आ निकले, परंतु इतने ही में शत्रु की सेना भी लड़ने को आ गई। इस समय हम्मीरसिंह के पास थोड़े और शत्रु के पास बहुत से मनुष्य थे परंतु बड़े पराक्रम के साथ अपनी तलवार का स्वाद चखाते हुए हम्मीरसिंह सबको परास्त करके विजय प्राप्तकर चित्तौर में आ गद्दी पर बैठ गए।

"अलाउद्दीन उस समय मर गया था और मुहम्मद तुगलक उस समय बादशाह था। मालदेव यह देखकर कि चित्तौर छिन गया

और बिना बादशाही मदद के फिर मिलना कठिन है, दिल्ली को भाग गया।

"चित्तौर के गढ़ पर राणा जी का झंडा फहराता हुआ देख पहाड़ों में से आसपास के ग्रामों में से तथा गुप्त स्थानों में से निकल निकलकर टिड्डी दल की भाँति लोग चित्तौर में घुसने लगे। चित्तौर में से मुसलमानों का राज्य उठ गया और राजपूतों का आ गया, यह सुनकर लोग आनंद मग्न हो गए और दूर दूर से वहाँ आने लगे। छोटे और बड़े सब ही लोग मुसलमानों से बदला लेने की उमंग के साथ आ एकत्रित हुए। जो इस समय मुसलमानों की सेना चित्तौर लेने को आवे तो उसे कुचल डालो ऐसा वचन सबके मुख से निकलने लगा। हम्मीरसिंह को सेना की कमी न रही। मुसलमानों से युद्ध करने की उमंग में चित्तौर में झुंड के झुंड सहस्रों मनुष्य फिरने लगे। सब कहने लगे कि जो मुसलमानी सेना ऐसे समय में लड़ने को आ जावे तो उसकी अच्छी दुर्गति हो और वे जो कह रहे थे सो ही हुआ। मुहम्मद अपने छिने हुए राज्य को लौटाने को आया। हम्मीरसिंह के पास बिना बुलाए सहस्रों मनुष्य मुसलमानों के प्राण लेने को आ उपस्थित हुए और उनके उत्साह को देख राणाजी तत्काल चित्तौर से बाहर लड़ने के लिये निकले। सिंगोली स्थान के निकट बड़ा संग्राम हुआ। सारांश यह है कि राजपूतों ने इस उत्कटता से युद्ध किया कि मुसलमानों का एक भी मनुष्य दिल्ली को लौटकर न जाने दिया।

"इस लड़ाई में स्वयं मुहम्मद पकड़ा गया। मालदेव का पुत्र हरीसिंह हम्मीरसिंह के साथ द्वंद्व युद्ध करता हुआ मारा गया। मुहम्मद को तीन महीने तक हम्मीरसिंह ने बँधुआ बनाकर रखा। पीछे मुहम्मद ने अजमेर, रणथंभौर, नागौर आदि परगने, सौ हाथी और पचास लाख रुपया देकर छुटकारा पाया।

"हम्मीरसिंह का बड़ा साला बनवीरसिंह उनके पास नौकरी के लिये आया। राणा जी ने उसे सत्कारपूर्वक अपने पास रखा और

उसके निर्वाह के लिये नीमच, जीरण, रतनपुर और कीरार ये परगने जागीर में दिए। जागीर देते समय राणा जी ने उससे कहा कि 'यह जागीर भोगो और प्रामाणिक रीति से चाकरी देते रहो। तुम एक समय तुर्कों के पादसेवी थे परतु अब तो अपनी ही जाति के, स्वधर्मवाले के तथा अपने सगे संबधी के नौकर हो। जिस भूमि के लिये मेरे बाप दादों तथा सहस्रों शुभचिंतक पुरुषों ने अपना रुधिर बहाया था उस भूमि को फिर लौटा लेने का मेरे ऊपर ऋण था सो मैंने कुलदेवताओं की कृपा से लौटा लिया। तुम अब से तुर्क के नौकर न रहकर राजपूत के हुए सो ईमानदारी से काम करना।' बनबीर भी वैसा ही ईमानदार निकला। उसने मरते समय तक शुद्ध चित्त से सेवा की और चंबल नदी के ऊपर का भीनौर ग्राम जीतकर मेवाड़ में मिलाया।

"जब से चित्तौर को मुसलमानों ने ले लिया था तभी से मेवाड़ के राणाओं की प्रतिष्ठा घट गई थी। भरतखड के समस्त देशी राज्यों में मेवाड़ के राणा शिरोमणि गिने जाते थे परंतु चित्तौर के निकल जाते ही इसमें बाधा पड़ गई थी। जो राजा कर देनेवाले थे उन्होंने कर तथा गद्दी पर बैठते समय भेंट, और आवश्यकता के समय पर सेना द्वारा सहायता करना आदि सब बंद कर दिया था। उस समय संपूर्ण क्षत्रिय राज्य निर्बल थे। उनको किसी के आश्रय की आवश्यकता थी। जब तक चित्तौर में राणा रहे वे लोग उनके आश्रय में रहे परतु चित्तौर निकल जाने से वे दिल्ली के बादशाहों के अधीन हो गये, परन्तु राणा हम्मीर सिंह जी ने फिर से इस प्रवाह को फेरा। उन्होंने चित्तौर को मुसलमानों से छीनकर उन फेरफारों को फिर ज्यों का त्यों कर दिया जिन्हें कि मुसलमानों ने अपने राज्य समय में कर डाला था। देश के संपूर्ण क्षत्रिय राजा मुसलमानों की अपेक्षा चित्तौर के राणाओं के अधीन रहने से प्रसन्न हुए। ज्यों ही हम्मीरसिंह जी ने चित्तौर ले लिया और मुहम्मद को हराया कि संपूर्ण आर्य वंश के राजा एक के पाछे एक भेंट ले लेकर आए,

इन हम्मीर के विषय में विशेष कुछ लिखना अथवा इनके संबंध की घटनाओं पर विचार करना मैं आवश्यक नहीं समझता। एक तो इनका इस रासो काव्य से कोई संबंध नहीं है, दूसरे यह भूमिका योंही इतनी बड़ी हो गई है कि अब इसे और बढ़ाना अनुचित जान पड़ता है। केवल कथाभाग मैंने इसलिये दे दिया है कि जिसमें पाठकों को इसके जानने का यहीं अवसर प्राप्त हो जाय और वे स्वयं इसके विषय में और जानने का उद्योग करें। जिन महाशयों को हम्मीर के विषय में कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हो उन्हें उचित है कि वे दोनों हम्मीरों को अलग अलग मानकर उनके संबंध का घटनाओं का उल्लेख करें।

बस अब मुझे हिंदी के प्रेमियों से क्षमा माँगनी है कि एक तो इस भूमिका के लिखने में इतना विलंब हो गया, दूसरे यह भूमिका इतनी बड़ी हो गई। आशा है कि पहले अपराध का मार्जन दूसरे से हो जाय।

इस भूमिका को समाप्त करने के पहले मैं कुंअर कन्हैया जू और पंडित रामचंद्र शुक्ल को अनेक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इसके कई अंशों के लिखने में मुझे बड़ी सहायता दी। साथ ही मैं कुँअर कृष्णसिंह वर्म्मा को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। उन्हीं के द्वारा मुझे यह काव्य प्राप्त हुआ। ठाकुर विजयसिंह जी ने इस काव्य को प्राप्त करने और कुँवर कृष्णसिंह जी की सहायता करने में जो कष्ट उठाया उसके लिये मैं उनका भी उपकार मानता हूँ। आशा है कि ये सब महाशय इसी प्रकार मुझपर कृपा बनाए रहेंगे जिससे मैं अन्य अन्य ऐसे काव्यों के संपादन करने में समर्थ होऊँ।

काशी,
६ फरवरी १६०८ } श्यामसुंदर दास

दने लगे और यथासमय सेना द्वारा युद्ध में सहायता करने लगे। इस भाँति मारवाड, जयपुर, बूँदी, ग्वालियर, चंदेरी, राजौड़ रायसेन, सीकरी, कालपी और आबू आदि ठिकानों के राजा हम्मीरसिंह जी के आज्ञाकारी हुए। हम्मीरसिंह जी भरतखंड के समस्त राजपूत राज्यों में महाराजाधिराज बन गए। मुसलमानों के आने से पहले इस देश में मेवाड के राजाओं की शक्ति अधिक थी, मुसलमानों के आते ही वह दिन दिन घटने लगी। हम्मीरसिंह जी ने इस अवनति को केवल रोका ही नहीं किंतु मुसलमानों के आने से पहले मेवाड की जो उत्तम दशा थी फिर उसी पर उसे पहुँचा दिया। मुहम्मद के पीछे किसी भी बादशाह ने चित्तौर के लेने का साहस न किया, इसका एकमात्र हेतु हम्मीरसिंह जी के पराक्रम का भय था। इसी से हम्मीरसिंह के राज्यशासन के पिछले पचास वर्षों में मेवाड में अटल शांति रही और इस दीर्घकाल की शांति ने मेवाड देश को व्यापार, धन, विद्या, सभ्यता, तथा शूर पुरुषों से परिपूर्ण कर दिया। हम्मीरसिंह जी जैसे बलवान् थे वैसे ही राज्य चलाने में, न्याय करने में, कलाकौशल की उन्नति देने में प्रवीण थे। उनके राज्य में यह कहावत पूर्णतया चरितार्थ हो गई थी कि "बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं", शांति बढ़ने से सपूर्ण व्यापारी, किसान और कारीगर अपने अपने धंधों में लग गए, इससे देश में संपत्ति बढ़ी जिससे राज्य की आय में अधिकता हुई। इन्होंने उत्तम उत्तम स्थान बनाकर कारीगरी की उन्नति की और प्रजा का न्याय यथोचित करके तथा पुत्रवत् पालन करके सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया इस भाँति चौंसठ वर्ष राज्य भोगकर अति वृद्धावस्था में सन् १३६४ ई० में हम्मीरसिंह जी ने वैकुंठधाम का मार्ग लिया। परम बुद्धिमान् और पराक्रमी महाराणा हम्मीरसिंह जी अपने पुत्र खेतसी जी के लिये शांति-संपन्न और विस्तीर्ण राज्य छोड गए। मेवाड़पति महाराणा हम्मीरसिंह जी अपनी अक्षय कीर्ति छोड़कर मरे। वहाँ के लोग उन्हें अब तक सराहते हैं।"

इन हम्मीर के विषय में विशेष कुछ लिखना अथवा इनके संबंध की घटनाओं पर विचार करना मै आवश्यक नहीं समझता। एक तो इनका इस रासो काव्य से कोई संबंध नहीं है, दूसरे यह भूमिका योंही इतनी बड़ी हो गई है कि अब इसे और बढ़ाना अनुचित जान पड़ता है। केवल कथाभाग मैंने इसलिये दे दिया है कि जिसमें पाठकों को इसके जानने का यहीं अवसर प्राप्त हो जाय और वे स्वयं इसके विषय में और जानने का उद्योग करें। जिन महाशयों को हम्मीर के विषय में कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हो उन्हें उचित है कि वे दोनों हम्मीरो को अलग अलग मानकर उनके संबंध का घटनाओं का उल्लेख करें।

बस अब मुझे हिंदी के प्रेमियों से क्षमा माँगनी है कि एक तो इस भूमिका के लिखने में इतना विलंब हो गया, दूसरे यह भूमिका इतनी बड़ी हो गई। आशा है कि पहले अपराध का मार्जन दूसरे से हो जाय।

इस भूमिका को समाप्त करने के पहले मैं कुँवर कन्हैया जू और पंडित रामचंद्र शुक्ल को अनेक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इसके कई अंशों के लिखने में मुझे बड़ी सहायता दी। साथ ही मैं कुँअर कृष्णसिंह वर्म्मा को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। उन्हीं के द्वारा मुझे यह काव्य प्राप्त हुआ। ठाकुर विजयसिंह जी ने इस काव्य को प्राप्त करने और कुँवर कृष्णसिंह जी की सहायता करने में जो कष्ट उठाया उसके लिये मैं उनका भी उपकार मानता हूँ। आशा है कि ये सब महाशय इसी प्रकार मुझपर कृपा बनाए रहेंगे जिससे मैं अन्य अन्य ऐसे काव्यों के संपादन करने में समर्थ होऊँ।

काशी,
९ फरवरी १९०८ } श्यामसुंदर दास

हम्मीररासो

दोहा

सिंधुर बदन अमंद दुति, बुद्धि सिद्धि वरदाय।
सुमिरत पद-पंकज तुरत, विघ्न अनेक बिलाय ॥ १ ॥

छप्पय

दुरद* बदन बुधि-सदन चद्र लल्लाट बिराजै।
भुजा च्यारि आयुद्ध तेज फरसो+ कर राजै[1] ॥
इक दंत छवि-धाँम अरुण सिंदुरमय सोहै।
मनो प्रात रवि उदित कहन उपमा कवि को है ॥
कर-कमल माल मोदक लिये उर उदार उपवीत वर।
सिव सिवा सुवन गणराज तुम देहु सदा वरदॉन वर[2] ॥२॥
पुंडरीक सुत सुता तासु पद-कमल मनाऊँ ॥
बिसद– बरण[3] वर बसन बिसद भूषन हिय ध्याऊँ ॥
बिसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुंबरजुत सोहै।
बिसद ताल इक भुजा द्वितिय पुस्तक मन मोहै ॥
गति राजहंस हंसह चढ़ी रटी सुरन कीरति बिमल।
जय मात बिमल[4] वरदायित्ती देहु सदा वरदॉन बल ॥३॥

---

१ वर साजै। २ नन्दायक वरदान वर। ३ वसन। ४ सदा।

* दुरद=द्विरद। + फरसी=परशु। – बिसद=निर्मल, सुंदर।

छंद पद्धरी

जय विघ्नराज गणईसदेव ।
जय जगदव जननी सएव[1] * ।
गुरु - पाद - पद्म बंदन सुकीन ।
सब सज्जन पद मन[2] लीन कीन ॥ ४ ॥
प्रथिराज राज जग भौ प्रसिद्ध ।
भृगु वंस मध्य प्रगटे सुसिद्ध ॥
नृप चंद्रभॉन तिहिं वंस मध्य ।
किरवॉन+ दॉन दोऊ प्रसिद्ध ॥ ५ ॥
पिच निंवराण जग ग्रॉम नॉम ।
जुत वर्णास्रम निज धर्म्म धॉम ॥
जय कीरति भुवमंडल उदार ।
अरु तेज प्रतापी बल अपार ॥ ६ ॥
सब कहैं राठ कौ पातस्याह ।
जस स्रवन सुनन को सदा चाह ॥
द्विजराज गौड़कुल जग - प्रसिद्ध ।
विद्या - विनीत हरि - धर्म्म - वृद्ध ॥ ७ ॥
सब दया दॉन उद्दार वीर ।
गुण - सागर नागर परम धीर ॥
कुल पंच वृत्त कै मूल जॉन ।
द्विज आदि गौड़[3] जानत जहॉन[4] ॥ ८ ॥
सौ चौदह सै चालीस च्यार ।
जन - सासन-सागर अति उदार ॥
अब सब 'को किंकर मोहिं जानि ।

---

१ सदेन । २ हुलसन । ३ सोइ आदि गोर । ४ जानि ।

+ सएव (सदेव)=स्वामिनी । * किरवॉन (किरपान)=कृपाण ।

रिषि अत्रि गोत्र मैं जन्म मानि ॥ ६ ॥
डिडवरिया राव कहि बिरद ताहि ।
सुभ राठ देस मैं उदित आहि ॥
तिहिं नाँम ग्राँम भल बीजवार ।
सब प्रजा सुखी जुत बरण च्यार ॥ १० ॥
जहँ बालकृष्ण सुत जोधराज ।
गुन जोतिष पंडित कवि समाज[१] ॥
नृप करी कृपा तिहिं पर अपार ।
धन धरा बाजि[२] गृह बसन सार ॥११॥
बाहन अनेक सतकार भूरि ।
सब भाँति अजाची कियौ मूरि ॥
नृप एक[३] समय दरबार माहिं ।
रासो हमीर कहि[४] सुन्यौ नाहिं ॥१२॥
नृप प्रस्न[५] करिय यह उभै बात ।
सब कहो बंस उत्पति सुतात ॥
अरु कहो साहि हम्मीर वैर ।
किहिं भाँति[६] कंक* बढ्यौ सु फेर ॥१३॥
तब कही प्रथम यह कल्प आदि ।
जल सेप सैन जब है अनादि ॥
नहिं धरणि चंद्र सूरज अकास ।
नहि देव दनुज नर बर प्रकास ॥१४॥
सब बीज वृच्छ[७] हरि संग मेलि ।
करि आप जोग निद्रा सकेलि ॥
करि सैन अंत निज सक्ति जानि ।

१ उदार । २ बास । ३ इक । ४ कह्यौ । ५ प्रश्न । ६ बत्त । ७ वृक्ष ।
*कंक=क्षत्रिय ।

ऊरण* सु तंत्र करि सूत्र मानि ॥१५॥
ह्व माया ईस्वर उभै नॉम।
करि महततत्व† गुण– प्रगट जाँम+ ॥
यह धरि चरित्र[1] लीला अपार।
हरि नाभिकोस पंकज प्रचार[2] ॥१६॥
तिहिं प्रगट भए ब्रह्मा सु आदि।
वाराहकल्प यह कहि अनादि ॥
वहु काल ब्रह्म-चिंता सु कीन।
मैं कौन, करों का, कर्म कीन[3] ॥१७॥
अध उद्ध० भ्रम्यौ वहु कमलिन्नाल।
नहिं पार लह्यौ तदपि मुहाल[4] ॥
करि ध्यॉन स्वयंभू लख्यौ आप।
तप कर्‌यौ सृष्टि उपजै अमाप ॥१८॥
तप कर्‌यौ स्वयंभू अति प्रचंड।
तव भयउ प्रजापति विधि अखंड ॥
मानसी सृष्टि कीनी उदार।
सव वृक्ष वीज किन्ने अपार ॥१९॥
जल गगन तेज भुव बायु मानि।

---

१ घरी चित्त। २ नद्यो पनज अपार प्रसार। ३ कर्मचीन, कर्महीन। ४ मुग्राय।

* ऊरण (ऊर्ण)=ऊन। † महततत्व (महत्तत्व)—साख्य के मतानुसार प्रकृति का प्रथम विकार, बुद्धि। –गुण—साख्य के मतानुसार सत्त्व, रज तथा तम गुण। इस शास्त्र में इन गुणों की साम्यावस्था को प्रकृति कहा गया है। इसी प्रकृति मे सृष्टि का विकास होता है। + जाम=प्रहर, काल। ० उद्ध (ऊर्ध्व)=ऊपर।

सनकादि भए सुत च्यारि आनि[1] ॥
तप-पुंज भये नहिं सृष्टि भोग।
तहाँ मध्य भए तव रुद्र जोग ॥२०॥
मन-तैं मरीचि भय तव सु आय।
उपजे पुलस्त ऋषि स्रवण पाय ॥
इमि भए नाभि तैं पुलह और।
क्रत भए ब्रह्म कर तैं जु मौर ॥२१॥
भृगु भए स्वयंभू त्वचा थॉन।
भय प्राण नात वासिष्ट मॉन ॥
अंगुष्ट दक्ष उपजे सु ब्रह्म।
नारद जु भए उतसग* अब्रह्म ॥२२॥
भय छाया तैं करदम ऋषीस।
अरु भए प्रष्टि+ अद्धरम ईस ॥
अरु हृदय भए कामा उदार।
करदन तैं भौ धरमावतार ॥२३॥
भय लोम अधर[2] तैं अति वलिष्ट।
बानी जु विमल मुख तैं प्रतिष्ठ ॥
पद निरत मिंड[3]† तैं सिंधु जानि।
यहि विधि जु प्रजापति ब्रह्म मानि ॥२४॥
अथ सुनहु वंस तिनके अपार।
यह भइय सृष्टि चहुँ दॉ (चहुँधा?) निवार ॥
सिव कै जु सती त्रिय विन प्रसूत।
दिय दक्ष श्राप तातैं न पूत ॥२५॥
इक कला नाम त्रिय घर मरीच।

---

१ मानि। २ अधुर। ३ मींट, मिड्डु।

*उतसग (उत्सग)=गोद। +प्रष्टि (पृष्ठ)=पीठ। †मिंड (मींढ़)=मूत्र।

तिनकै रिचीक भए पुत्र आय।
जमदग्नि भए तिनकै सुभाय ॥३२॥
ऋषि जामदग्नि सुत परसराँम।
हनि छत्रि सकल द्विज तेजधाँम ॥३३॥

दोहरा छंद

ब्रह्मा कै सुत भृगु भए, भार्गव भृगु कै गेह।
ऋषि रिच्चिक ताकै भए, तेज-पुंज तप-देह ॥३४॥
जामदग्नि तिनकै भए, परसराँम सुत जाहिं।
छत्रि मेटि विप्रन दइय, भुमि किती वर ताहि ॥३५॥
कमलासन कुल मैं प्रकट, परसराँम रणधीर।
सहस्रारजुन वैर तैं, हने जु छत्री वीर ॥३६॥
वार इकीस जुद्धि जिन, दिन्नौ[1] उर्वीराज।
रह्यौ न क्षत्रा जगत तब, आए तप कै काज[2] ॥३७॥

छंद मुक्तादाम

हने क्षिति कै सब बीर अपार।
भरे बहु कुंड जु स्रोणित धार॥
करे तिहिं पितृन तरपन नीर।
भए सब हरषित पित्र सधीर ॥३८॥
दए तव आसिष प्रेम समेत।
चले ऋषिराज तपःक्रत हेत॥
रह्यौ नहिं क्षत्रिय जाति विसेष।
भए निरमूल जु छत्रि असेष[3] ॥३९॥
बचे कछु दीन मलीन सुवेस।
कहूँ तिनकै अब रूप असेस॥

---

१ दीनौ। २ आप (आप) गए तप काज। ३ निसेष।

घरे तृणदंत[1] कि दीन वयन्न[2]।
किये नियरूप लखे जु नयन्न ॥४०॥
नपुंसक बालक वृद्ध सु दीन।
धरे मुख नक्ख सुबैन सहीन॥
तजे तिन आयुध पिट्ठि दिखाय।
गहे तिन आय सुभाय सुपाय ॥४१॥
मिले सब पित्र सु[3] दीन असीष।
भए सुत्र निरभय पित्र जगीस॥
तज्यो अब उग्ग[5] असेष सुभाव।
करो सब[6] उप्पर छोभ सु चाव ॥४२॥
तजे तब क्रोध भए सु दयाल।
चले पद वंदि पिता पद[7] हाल॥
भई कछु काल क्षत्री बिन भुंमि।
नहीं जग रत्त रह्यौ मोइ पुंमि[8] ॥४३॥
वढ़े[9] रजनीचर वृंद अनेक।
मिटे जप तप्प जु वेद विवेक॥
करे उतपात सुघात अपार।
•तजे कुल-धर्म सु आस्रम च्यार[10] ॥४४॥
मिटी मरजाद रहे सब भीत।
तबै ऋषिराजन बढ्ढत[11] चीत॥
जुरे ऋषि-वृंद सु अरवुद आय।
जहाँ ऋषि चाय वसैं सत भाय ॥४५॥
सुर नर नाग मिले सह आय।

१ तनदत। २ नयन। ३ जु। ४ अनिरिय। ५ उग्र। ६ वन। ७ पदु,पद्दु। ८ नहीं जग रच्छिक यो जग पूमि। ९ नचे। १० चार। ११ [illegible] ढन।

रचे रजनीचर मेटि उपाय[1] ॥
मिले कमलासन और वसिष्ठ।
कियौ[2] सुचि कुंड अनल्ल[3] सुइष्ट ॥४६॥

दोहरा छंद

चाय आय अरबुद सुनग[4], मिलिय[5] सकल ऋषिराय।
तब आराधिय संभु तिन, दिन्नौ दरसन आय[6] ॥४७॥
जटा मुकट विभ्भूति अँग, सीस गंग अहि अंग[7]।
भूत संग अनभंग मन, हरषित अधिक उमंग ॥४८॥
ऋषिसमूह अस्तुति करत[8], करव (करो)[9] अचल नग[10] आय।
वास करो तिहि पर अचल, यज्ञ करें तव पाय ॥४९॥

छप्पय छंद

तव भव भये[11] प्रसन्न वास अरबुद सिर किन्निव।
कियव यज्ञ आरंभ विप्र सम्मूह[12] सुलिन्निव ॥
द्वैपायन, वासिष्ठ, लोम, दालिभ,[13] सब आए।
जैमिनि हरपन, धौम्य, भृगू, घटयोनि[14], सुभाए ॥
कौसिकह +, वत्स, मुद्गल मिलिउ, उद्दालीक, मातंग, भनि।
स्वर मिलिय स्वयंभुव संभुजुत लगे करन मख मुदित मन ॥५०॥
पुलह, अत्रि, गौतम्म, गरग, संडियलि महामुनि।
भरद्वाज, जाबालि, मारकंडेय, इप्ट गुनि ॥

---

१ मेटन पाय। २ किये। ३ अनिल्ल। ४ गन। ५ मिले। ६ धाय। ७ संग। ८ करिव, करयव। ९ करत। १० मन। ११ भयउ। १२ सम्मुहँ सुइ लिंचिव। १३ दालिभ सु। १४ जोनि।

+ पुलह अत्रि गौतमहिं गरग साडियल्ल महामुनि। भरद्वाज जाबालि मारकंडेय उध्म (उद्‌म) गुनि। ये दो चरण एक प्रति में अधिक हैं सो दूसरी प्रति में दूसरे छप्पय मे आए हैं।

जरतकार जाजुल्लिय परासुर परम पुनीतय।
चिमन[1] चाइ सुर आइ, पिप्पलायनहिं, सुरचि[2] सब ॥
बोटा अनेक बरनूं किते, पंचसिखा पिक्खिय प्रगट।
तप तेज पुंज झलहलत तहँ, दरसन तैं पातक सुघट ॥४१॥
सिद्धि औषधिय सकल, सकल[3] तीरथ जल आनिय।
जिते यज्ञ के योग्य तिते, द्रव[4] सब मन मानिय॥
जजन[5] जानि[6] अध्याय होम ध्वनि होम सु उट्ठे।
सकल वेद के मंत्र विप्र मुख सुर जुत जुठ्ठे[7] ॥
ध्वनि सुनत असुर आए तुरत करन यज्ञ उच्छिष्ट थल।
उत्पात अमित किन्ने[8] तवे तहाँ वृष्टि किन्निय[9] सवल ॥४२॥
पवन चलत परचंड घोर घन वारि सु वु(उ)ठ्ठे।
रुहिर[10] माँस अरु पत्र अग्गि[11] रज देखत उठठे॥
गए तहाँ वासिष्ट यज्ञ बहु विघ्न सुनायौ।
करे[12] प्रथम बध असुर होय तब यज्ञ सुभायौ॥
वासिष्ट कुंड किन्नौ सुरुचि करन असुर निंमूल तब।
धरि ध्याँन होम वेदी विमल वेद मंत्र आहूति जब ॥४३॥

दोहरा छंद

ऋषि वसीष्ठ वेदिय विमल, साम वेद स्वर साधि।
प्रगट कियउ क्षत्रिय पहुमि, वेदमंत्र आराधि ॥४४॥
तीन पुरुष उपजे तहाँ, चालुक प्रथम पँवार।
दूजै तीजै ऊपजे, क्षत्र[13] जाति पड़िहार[14] ॥ ४५ ॥
कियउ[15] जुद्ध अतुलित तिनहिं, नहिं खल जीते मूरि।

१ च्यवन। २ सुरच्यिय। ३ सकल तीर्थनु जल आन्यौं, तित्थोदक आन्यौ। ४ द्रव्य तितने मत मानिव, दर्व्य जितनै मन मान्यौं। ५ यजन। ६ जाप। ७ वुठ्ठे। ८ कीने। ९ कीनी। १० रुधिर। ११ अग्नि। १२ करो। १३ चतुरजाति १४ पारिहार। १५ कियौ।

सब चतुरानन जज्ञ थल, कियौ तुरत वह दूरि ॥ ५६ ॥
आबू गिरि अग्नेय दिसि, चायस्थल सब आय।
आराधे तिहिं फरस धरि, आए सीघ्र सुभाय ॥ ५७ ॥
कमलासन ब्रह्मा भए, होता भृगु मुनि कीन।
आचारज बासिष्ट भौ, ऋत्वज वत्स प्रवीन ॥ ५८ ॥
परसराँम जजमाँन करि, होम करन मुनि लाग।
महासक्ति आराधि करि, अनलकुंड पटि[1] जाग ॥ ५९ ॥

छंद पद्धरी

विधि करी[2] परसधर, बोलि ठौर।
जजमाँन कियउ भृगुकुल सुमौर॥
वरदेव सक्ति आराधि ताँम।
चहुँ वेद वदन उचार जाँम ॥ ६० ॥
निज वारि कमंडल अग्नि सींच।
रज संख पानि होमे म बीच॥
चहुँ[3] वेद मंत्र-बल सक्ति पाय।
तब अग्नि रूप प्रगटे सुभाय ॥ ६१ ॥
उत्तंग अंग सुचि तेज-धाँम।
झलहलत कांति तन प्रभा काँम॥
झलहलत मुकट भृकुटी करूर*।
पलहलत नेत्र आरक्त नूर ॥ ६२ ॥
हलहलत दनुज वह त्रास मानि।
भुज च्यारि दिग्घ[4] आयुध सजानि[5]॥
जम जज्ञ पुरुष प्रगटे अजोनि।

---

१ पटि। २ करे फरसधर। ३ चउ। ४ दीर्घ। ५ मान जान—अंत्यानुप्रास।

*करूर (सं० कुरुल)—मस्तक पर बिखरी बाल की लट।

कर खग्ग[1] धनुप कटि लसै तोनि ॥ ६३ ॥
कर जोरि ब्रह्म सों कह्यौ धाय।
मैं करूँ कहा लोकेस आय ॥
जब कह्यौ कमलभू सुनहु तात।
भृगुनाथ कहैं सुइ करो बात ॥ ६४ ॥
भृगुनाथ कही खल हनूँ धाय।
सँग सक्ति दइय नृप कै सहाय ॥
दसबाहु उग्र आयुध बिसाल।
आरुहु सिंह उर[2] कमल माल ॥ ६५ ॥
मुनिदेव मिले अभिसेप कीन।
नृप अनल नाँम वह तासु दीन ॥
नृप कियौ जुद्ध तिनतैं अखंड।
हनि जग्यकेत करि खंड खंड ॥ ६६ ॥
हनि धूम्रकेतु जो सक्ति आय।
नृप हरप सहित परसे सुपाय ॥
बहु दैत्य नृपति मारे अपार।
उठि चली खेत तैं रुहिर[3] धार ॥ ६७ ॥
उबरे सु गए पाताललोक।
भय दनुजहीन सब मृत्युलोक[4] ॥ ६८ ॥

दोहरा छंद

आसा पूरण सबन की, करी सक्ति तिहिं बार।
याही तैं आसापुरा, धरचौ नॉम निरधार ॥ ६९ ॥
चहुवाँनन[5] कै बंस मैं, परम इष्ट कुलदेवि।
सकल मनोरथ सिधि तहाँ, पूजत पावैं सेवि[6] ॥ ७० ॥

---

१ खड्ग। २ गला। ३ रुधिर धार। ४ मर्त्यलोक। ५ चाहुव्वॉन। ६ देवं, सेव—अत्यानुप्रास।

परसरॉम अवतार भौ[1], हरन सकल भुव-भार ।
जैत राव तिहिं वंस मैं, जन्म्यौ परम उदार ॥ ७१ ॥

छप्पय छंद

जैत राव चहुवाँन सकल विद्याजुत सोहै ।
दाँन कृपॉन विधाँन अखिल भूपति मन मोहै ॥
अमित थाट रजपूत वंस छत्तीस अमानो ।
सूर वीर उद्दार[2] विरद वंदी जु वखानो ॥
दिन प्रति तेज वढ्ढिय[3] नृपति, सत्रु संक निसि दिन रहैं ।
चिरखलह[4] भूप अवतंस भुव, अरथिन् मिलि दारिद दहैं ॥७२॥
इक्क समय आखेट, राव खेलन वन आए[5] ।
सकल सुभट थट संग, धीर वाने जु वनाए ॥
लखच[6] इक्क वाराह, वाजि पिच्छै नृप दिन्निव ।
रहे[7] संग तैं दूरि, सथ्थ विन राव सु किन्निव ॥
वन विषम वंक भूधर विरह, सुथल पदम भव तप करत ।
मृग त्यागि भागि मिल्ले सुऋषि, वंदि चरण सवा धरत ॥७३॥

छंद लघुनाराच

करे प्रणाम रावयं, सुदिन्न पद्म पाययं ।
उभै सुपाणि जोरि कै, विनै सु कीन कोरि कै ॥ ७४ ॥
खुले सुभाग्य मोरयं, लह्यौ दरस्स तोरयं ।
अखंड जोग भूपयं, नमः सजीव मोखयं* ॥ ७५ ॥
त्रिकाल ज्ञान धाँमयं, रटंत नॉम राँमयं ।
समस्त योग धाँमयं, त्रिलोक पूर कॉमयं ॥ ७६ ॥

---

१ भयौ । २ उदार । ३ बढ़तौ, वड्ढिग । ४ वीसलह । ५ आयउ, बनायउ । ६ लखिव । ७ रहउ ।

* मोखयं—मोक्ष ।

समीप स्वामि संकरं, गणेसयं सुधं करं ।
धरौ सुसीस हथ्थयं, प्रभू[1] सदा समथ्थयं ॥ ७७ ॥

दोहरा छंद

प्रसन भए ऋषि पद्म तब, अस्तुति सुनत प्रमाँन[2] ।
जैत राज यहिँ थल करो, राव राखि सिव ध्याँन ॥ ७८ ॥
हर प्रसन्न भय राव पहँ, मुनिवर पद्म प्रसाद ।
मिले भील-कुल सकल तहँ, हरपित मिटे बिपाद ॥ ७९ ॥

छंद पद्धरी

ऋषिराज पद्म आज्ञा सुपाय ।
नृप जैत मित्र मंत्रिय बुलाय ॥
बड़ वणिक गणक कोविद सुजाँन ।
तिन पुच्छि मंत्र वास्तव प्रमाँन ॥ ८० ॥
सुभ दिए मुहूरत नींव हेत ।
रणथंभ नाँम औ गढ़ समेत ॥
नव ग्यारह सै दस वरप और ।
सुइ संवत बिक्रम कहत मौर ॥ ८१ ॥
इपु अर्द्ध अरंगा को प्रसिद्ध ।
रवि अयन सोम्य.जान्यौ प्रसिद्ध ॥
, सब कला पाँच जानो सुइष्ट ।
त्रिय पुरुप लग्न गढ़ कीन इष्ट ॥ ८२ ॥
गत इक्क अंस बृपभाँनु जानि ।
ससि बेद सार्द्ध मिथुनेस मानि ॥
तृन अंस वृश्चिक कै इलानंद ।
ससि बीस[3] नंद अज अंस मद ॥ ८३ ॥

---

१ प्रभु सदा सर्थयं । २ अमाँन । ३ अंश ।

जष* रासि जानि नव अंस सुद्ध।
तम तीन अंस मूरति समुद्ध × ॥
त्रिय धूमकेतु गुण अंस जानि।
भृगु सप्त गुरू[1] सत्रा सु मानि ॥ ८४ ॥
तन लग्न उभै जानो सु जानि।
फल कह्यौ वरष सत आयु मानि ॥
पय भाव भाँन तिहिं भवनहीन।
कछु घटे वरष दिन मैं प्रवीन ॥ ८५ ॥
तिहिं समय अटल थूणी सथप्प।
गणनाथ पूजि सुभ मंत्र जप्प ॥
करि होम देव पुज्जे अपार।
गो भुंमि रत्न हाटक सुढार ॥ ८६ ॥
दिय दाँन द्विजिन वहु विधि अनेक।
नृप जैत सकल पुज्जे विवेक ॥
तिय करत गाँन मगल सरूप।
धुनि दुंदभि वज्जन अति अनूप ॥ ८७ ॥
सव करहिं हरष नर नारि वृंद।
यहि भाँति नींम रचना सुछंद ॥ ८८ ॥

दूहरा छंद

ग्यारा सइ दस अग्गरो, संवत माधव मास।
सुक्क तीज शनिवार कै, चंद्र रक्ष अनयास ।८६॥
थूणीगढ़ रणथंभ को, रोपी पदम् प्रताप।
सुमरि गणेस गिरीस को, नगर वसायौ आप[2] ॥९०॥

---

१ सतम गुरु। २ आव।

* जष (झष)=मीन (राशि) × समुद्ध=समृद्ध।

वार्ता (वचनिका)

राव जैत पदम ऋषि की आज्ञा तें गढ़ रणथंभ की नीम दिवाई। ताही समय सहर बसावन को मन में आई। (रणथंभ की नीम का लग्न) ग्यारा सै दसात्तरा को संवत् बैसाख की आपै तीज (अक्षय त्रितिया) में सनिश्चर में घड़ी पाँच दिन चढ़े मिथुन लग्न में नीम दीनी। गणेस पूजकर सिवजी की और पद्म ऋषि की आज्ञा पाय अनेक उछाह करि धन दीनों।

चौपाई

जैत राव थिर थूणी रुथ्थिय× । भूसुर बृंद वदि पद उथ्थिय ॥
ध्वजा पताक कलस अरु तोरन । मंगलरूप सुरूप निचोरन ॥९१॥

इष्ट लग्न सू० ५ ॥ २ । ८ ॥ १ । ०२ च० ३ । ४ । मं० ७ । ३०० । २० । वृ० ८ । १७ । शु० २ । ७ श० ११ । ६ । रा० २ । ६ के ८ । ३

छंद भुजंगप्रयात

पुरं मंदिरं चौहटं औ गवाप्यं+ ।
भुजंगप्रयातं सुदरं प्रबंधं सुभाप्यं ॥
पुरी इंद्र की सीस वै सुभ्र देखी ।
सबै मंदिरं सुंदरं उच्च लेखी । ९२ ॥
पट्टा जरी वाफतं * कै बनाए ।

× रुथ्थिय=रुँधा, स्थिर किया । + गवाप्य (गवाक्ष)=झरोखा ।

* वाफत (वाफता)=एक प्रकार का रेशमी वस्त्र जिसपर कलाबत्तू और रेशमी बूटियाँ होती हैं ।

ध्वजा तोरणं सर्व के गेह छाए ॥
कपाटं सिरीखंड हाटक ∸ सोहैं ।
सबै चित्र सा चित्र सुचित्त मोहैं ॥ ९३ ॥
वितानं छए मज्झरी सोभखाँनी ।
मनौ ठौर सोहै मनो कामरानी ॥
गृहं द्वार गोखा झरोखा सुहाए ।
सुगंधं चुवा इत्र महकंत भाए । ९४ ॥
यसो नग्र रम्यं रचौ भूप केरो ।
किते चार चौकत भावंत हेरो ॥
बसैं वर्ण च्यारयौ जथासंखि वासं ।
चहूँ आश्रमं औ तज लोभ आसं ॥ ९५ ॥
सबै आय आयं रहै धर्म माहीं ।
छिमासील दानं व्रत नीत[१] आहीं ॥ ९६ ॥

छप्पय छंद

महा वक गढ़ दृढ्ढ बुरजि[२] कंगुर वर सोहैं ।
चहूँ कोट[३] अग अगम चारु दरवाजे मोहैं ॥
घाटी चतुरासीति[४] विषम अति[५] पच्छि न पावैं ।
वनचर वंकट वेस पाय लगि यों गुन[६] गावैं ॥
तुम नाथ हमारे[७] कृपाकरि[८] गढ़ लज्जा यह[९] धारिये ।
परवेस मनेहुँ रवि को प्रकट यह गढ़ हम प्रति पारिये ॥९७॥

दोहरा छंद

च्यारि दरा चहुँ[१०] ग्राम वसि, घाटी किती जु और ।
चहूँ ओर पर्वत अगम, विचरण पंथ सु जोर ॥९८॥

---

१ नित्य । २ सुदृढ बुरजि । ३ कोष । ४ घाटी चौदहसाठि । ५ अति, गति । ६ गुन । ७ हमार । ८ करी । ९ हम । १० चउ ।

∸हाटक(हाटक)=सोना ।

अथ पद्मऋषि तनपात प्रसंग

छप्पय

रणतभँवर ऋषिपद्म उग्रतप तेज कराए[१]।
इंद्रासन डिगमगिय[२] देवपति[३] सका खाए॥
तब कामादिक बोलि सक्र ऋषि पास पठाए।
करो बिघ्न तब जाय भंग पर काज नमाए[४]।
तब चल्यब मार निज मेन जुत[५] ऋतु वसंत प्रगटिय तुरत।
बहु त्रिविध पवन अद्भुत महा करहिं[६] गान रंभा सुरति ॥९९॥

वसंत ऋतु वर्णन

छंद पद्धरी

तिहि समय काम प्रेर्यौ सुरिंद्र।
जुहारि इंद्र उठि पाव वंदि॥
सब परिकर बोले[७] चढ़ि सुमार।
ऋतु छहूँ संग धनु सुमन हार ॥ १०० ॥
रति परम प्रिया ऋतुराज जानि।
नित रहत निरंतर रूप मानि॥
बहु किन्नर गावत देवनारि।
गंधर्व संग अति बल उदार ॥ १०१ ॥
संगीत भाव गावैं अनंत।
सुर नर सुनंत वसि होत मंत॥
बन उपवन फुल्लहिं अति कठोर।
रहे जोँर मौँर रस अंबमौर ॥१०२॥

---

१ करायौ। २ डगमग्यौ। ३ इन्द्र मन माहिं (माँझि) डरायौ।
४ नमाए। ५ जुरि। ६ करति। ७ चल्ले।

कल कूजत कोकिल ऋतु बसंत।
सुनि मोहत जहँ तहँ सकल जंत ॥
नर नारि भए कामंध अंध।
तजि लाज काज परि काम-फंद ॥ १०३ ॥
पहुँचे सुमारि ऋपि निकट आय।
प्रेरयौ सु परम भट अग्ग जाय ॥
ऋपि लखे सुभट सेना सुकाम।
ऋपि कह्यौ कहा करिहै सुवाम ॥ १०४ ॥
करि कठिन आप लाई समाधि।
तिहिं रहत काम कोवारि व्याधि ॥

ग्रीष्म ऋतु वर्णन

ऋतु ग्रीपम कौं आज्ञा सु दिन्न।
तिहिं अति प्रताप जाज्वल्लि किन्न ॥ १०५ ॥
रवि तपै विपम अति विरन धूप।
रवि नैग खुल्लि दिग्विजय अनूप ॥
वट इक्क महा गह्वर सुजानि।
तिहिं निकट सरोवर सुरस मानि ॥ १०६ ॥
इक आस्रम सुंदर अति अनूप।
तिय गान करत सुंदर सरूप ॥
सौरभ अपार मिलि मंद पौन।
मृगमद कपूर मिलि करत गौन ॥ १०७ ॥
स्रीखंड *मेद[1] केसर उसीर।
तिहिं परसि ताप मिट्टत सरीर ॥

---

१ मेद।

* मेद=कस्तूरी।

गंधर्व और किन्नर सुवाल।
मिलि अंग रंग पहरें सुमाल ॥ १०८ ॥
चित चल्यौ नाहिं ऋपि बज्रमॉन।
रहि ग्रीष्म[1] ऋतू हिय हारि मॉन ॥ १०९ ॥

दोहरा छंद

लग्यौ न ग्रीपम कौ कछू, ऋपि प्रताप तपधीर।
तब पावस परनॉम करि, आयस कॉम गहीर ॥ ११० ॥

वर्षा ऋतु वर्णन

छंद भुजंगप्रयात

उठे बद्दलं घोर आकास भारी।
भई एक वारं अपारं ॲंध्यारी ॥
बहैं पौन चारयौं महा सीतकारी।
चहूँ ओर क्रोधंत दामनि ॲंध्यारी ॥१११॥
घने घोर गज्जंत वर्पंत पानी।
कलापी पपीहा रटैं भूरि बानी ॥
तहाँ बाल भूलंत गावंत झीनी।
रही जाय आलम भई कॉमभीनी ॥११२॥
उड़ैं चीर सम्मीर लग्गंत अगं।
लसे गात देखंत जग्गै अनंगं ॥
करैं सोर झिल्ली घने दद्दुरंगे।
तहाँ बाल लीला करैं कॉम सगे ॥ ११३ ॥
निकट्टं उघट्टंत संगीत बाला।
वरं अंग अंगं रची फूलमाला ॥

---

१ ग्रीष्म।

कटाछं करैं मद हास प्रसारैं[1]।
तहाँ पद्म अंग लगैं ना निहारैं ॥ ११४ ॥

दोहरा छंद

पावस हारि विचारि जिय, ऋषि न ,तज्यौ तप आप।
तब सु मैन मन मैं कहिय, उपजे सरद सुताप ॥ ११५ ॥

शरद् ऋतु वर्णन

छंद त्रोटक

तजिये तप पावस विति सवं।
ऋतु[2] सारद बादर दीस अब ॥
सरिता सर निम्मल नीर[3] बहैं।
रस रंग सरोज सु फुलि रहैं ॥ ११६ ॥
बहु रंजन रंजन भृंग भ्रमैं।
कलहंस कलानिधि वेदि* भ्रमैं ॥
बसुधा सब उज्ज्वल रूप कियं।
सित बासन जानि निछाय दियं ॥ ११७ ।
बहु भाँति चमेलिय फूलि रही।
'लखि मार सुमार सुदेह दही ॥
बन रास बिलास सुवास भरे।
तिय काँम[4] कमाँन सुतानि धरै ॥ ११८ ॥
समर्गों[5] पर तैं नर काँम जगै।
बिरही सुनि कै उर घ्याव[6] लगै ॥
घर अंबर दीपग जोति जगी।

१ प्रहारैं। २ रति। ३ वारि। ५ बाँन। ५ श्रमणे। ६ घाव।

* वेदि—(बेधि)=बेधकर।

शिशिर ऋतु वर्णन

छंद मोतीदाम

किये तब मार, हुकम्म सु हेरि।
उठी सिसिरो[१] तब आयसु फेरि॥
किये नव पल्लव जे तरु वृंद।
प्रफुल्लित अब कदंब स्वछंद॥ १२५॥
वहैं बहु भाँति त्रिविद्धि समीर।
रहै नहिं धीरज होत अधीर॥
लता तरु भेंटत[२] संकुल भूरि।
भए त्रण गुल्म हरे जड़ मूरि॥ १२६॥
मिटै जग सीत न ताप न तोय।
सबै सुखदायक जोबन सोय॥
झुकै फल फूल लता पर भार।
भ्रमैं बहु भृंग जगावत मार॥ १२७॥
लगी लखि वायु सबै तिहिं वार।
भुने डफ लाज तजैं नर नार॥
बजावत गावत नाचत[३] संग।
अबीर गुलालरु केसरि रंग॥ १२८॥
भए मतवार सु खेलत[४] फाग।
महा सुख सग संजोगनि[५] भाग॥
वियोगनि जारत मारत मार।
अनेक सुगंध अनेक विहार॥ १२९॥

---

१ ससियौ। २ मिंटत। ३ नचहिं। ४ खिल्लत। ५ सँजुग्गनि।

वसंत ऋतु वर्णन

छंद लघुनाराच

असंत संत मोहियं, वसंत खोलि जोहियं।
बजंत[1] बीन बाँसरी, मृदंग संग आँसुरी ॥ १३० ॥
लियं सुबाल बृंदयं; जगत्त काँम द्वंदयं।
अनेक रूप सुंदरी, मनोज राव की छरी ॥ १३१ ॥
स्ववेस केस पासयं, मनो कि मैन फाँसयं।
गुही त्रिबिद्धि वैनियं, कि मोह किन्न[2] सैनयं ॥ १३२ ॥
महा सुघट्ट पट्टियं, सूँगार भूमि फट्टियं।
बिचै सुमंद[3] रेखयं, महा बिसुद्ध देखयं ॥ १३३ ॥
विसाल भाल सोमियं, छपा सु नाथ लोभियं[4]।
सु मध्य सीस फूलयं, दिनेस तेज तूलयं[5] ॥ १३४ ॥
भरी सु मुक्त मंगयं, मनो नछत्र संगयं।
बिसाल लाल विंदयं, मिले सु भोम चंदयं ॥ १३५ ॥
जराव आड भाइयं[6], मनो मिलन्न आइयं।
दिनेस भोम बुद्धयं, ससि गृहे सु सुद्धय । १३६ ।
कपोल गोल आदसं, कि भौंह भौंर सादसं।
प्रफुल्ल कंज लोचनं, मृगाखित्र[7] गर्व मोचनं ॥ १३७॥
त्रिबिद्ध रंग गातयं, सु स्याँम स्वेत राजयं[8]।
बनी कि कीर नासिका, सु गथ्थ नथ्थ भासिका ॥ १३८॥
मनो सु काँम ओपयं[9], दयाँ सुचक्र[10] कोपयं।
करन्न फूल राजयं, उभै कि भाँन साजयं ॥ १३९ ॥

---

१ मुदंग ताल खंजरी । उपंग सग अंसुरी । २ कीन । ३ सुमंग, माँग । ४ लोपियं । ५ तुल्लयं । ६ मालयं । ७ मृगासि । ८ रातयं । ९ कोपयं । १० चक्र ।

मुहंत स्याॅम अल्लकं, भ्रमत्त भौंर चल्लक।
अरुन्न रेख बेसय, पियूष कोस देखयं॥ १४०॥
अनार दंत कुंदयं, लसंत वज्र दंतयं[1]।
सुलत्त वाणि कोकिला, विपंच की सुरं मिला॥ १४१॥
कपोति पोति कंठय, सुढार हार कंठयं[2]।

छप्पय छंद

कुच कंचन घट प्रगट, नाभि सरवर बर सोहैं।
त्रिवली पायहूँ ललित, रोम राजी मन मोहै॥
पचानन मधि देस, रहत सोभा हियहारी।
मनहुँ काॅम के चक्र, उलटि दुंदुभि दोउ डारी[3]॥
दोउ[4] जंघ रंभ कंचन दिपत[5], धरी कमल हाटक[6] तनै।
गति हंस लखत मोहत जगत, सुर नर मुनि धीरज हनै॥१४२॥
जिती उव्वसी संग, सकल सम्मूह मिलिय बर।
विचि सु मैन सह सैन गए, ऋषि निकट सरूकर॥
गावत विविधि प्रकार, करत लीला मन भाइय।
हाव भाव परभाव, करत आस्रम मैं आइय॥
ऋषि निकट आय होरिय रचो, वर्षत रंग अनंग गति।
नन[7] चलै चित्त ज्यों ज्यों[8] अचल, करत क्रया त्यों त्यों अमित॥१४३॥

दोहरा छंद

करि विचार त्रिय कुत क्रया, कुसुम छुट गहि[9] मौन।
लीला ललित सु विथ्थरिय,[10] चंचल वयसु नवीन॥ १४४॥
सखि मुख वृंद[11] स्वछंद मिलि, रति सम रूप अनूप।
ऋषि समीप क्रीड़ा करत, हरत धीर मुनि भूप॥१४५॥

१ दृढय। २ तठय। ३ निस्सॉन सुधारी। ४ दुहुँ। ५ उलटि। ६ हाटक। ७ नन। ८ मौ। ९ वहि। १० विस्तरी। ११ वोइ।

चौपाई छंद

बर्षत रंग अनंग सु बाला।
मनहुँ[1] अनेक कमल की माला॥
चंचल नैन चलैं चहुँ आसा।
रूप सिंधु मनु मीन सु पासा॥१४६॥
घूँघट ओट दुरत प्रगटत यों।
मनों ससि घटा दबत उघटत ज्यों॥
विलुलित बसन अंग दुति सोहै।
निरखत सुर नर मुनि मन मोहै॥१४७॥
अलक सलक[2] अतिसै चटकारी।
अमी पियत[3] ससि नागनि कारी॥
छुटै गुलाल मुठी मृदु मुसकै।
चूवै अधर[4] बिंब रस चमकै॥१४८॥
करैं गान पसु पच्छी[5] मोहै।
कह्यो जगत इन पटतर को है॥
लै लै गैंद परम्पर मेलैं।
बाल बृंद मिलि मिलि सुख मेलैं॥१५०॥
अघ ऊरध[6] चहुँ ओर सुमारैं।
लजति खिजति लगि[7] प्रेम प्रहारैं॥
मंद पवन लगि चीर परयो धर।
कुच अंकुर[8] उर मनहुँ चभै हर॥१५०॥
दमकति दिपति सलोंनी दीपति।
कामलता बिहरैं मनु गज गति[9]॥

---

१ मनों। २ चिलक। ३ पीवत, पवत। ४ अधर बिंब रसवै चखकै। ५ पच्छिय, पच्ची। ६ अद्ध उद्ध। ७ मिलि। ८ अंबर। ९ झीन लंक अंग झलकत बर। नाभि गँभीर त्रिवलि अति सुंदर।

जगत गैंद कंपित उर भागी।
मंद मुसुकि ऋपि निकट सुपोगी[1] ॥ १४१ ॥
सुमन वृंद सौरभ उठि भारी।
भ्रमर पुनीत[2] गुँजार[3] उचारी[4] ॥
सरद उन्मद[5] संधाँन सु किन्नौ।
अति रिसि तानि स्रवन उर दिन्नौ ॥ १४२ ॥
छुटि समाधि ऋपि नैन उघारे।
अति सकोपि सम्मर उर मारे ॥
चहुँ दिसि चिते[6] चकित ऋपि भयऊ।
लखि तिय वृंद अनंद सु भयऊ ॥१४३॥
लीला गैंद फागु मिसि[7] दौरी।
हो हो करत उठी वर जोरी[8] ॥
वन अकेलि तिय पुरुप न कोऊ।
लीला अमित देखि दृग दोऊ ॥१४४॥
रंग अपार डारि ऋपि ऊपर।
कल कल हंस वजत पद नूपर ॥
करैं[9] कटाक्ष अनेक सु वाला।
नैन सैन सर लगि चित चाला ॥१४५॥
अग अंग गहि फाग[10] सु मग्गै।
परसि गात तव काँम सु जग्गै[11] ॥

---

१ सुनि वादिन गाँन कल लीला। काँम कोपि सर धनुष सुमीला। २ पुनिच। ३ गुंजार। ४ निनिधि समीर सुहावन जानो। प्रफुलित नूत वैठि धनु पानी। ५ उन्मद। ६ चित। ७ मिलि। ८ कंदुक केलि और मिसि होरी। मारी निपट लेत चित चोरी। डारि मोहिनिय मोहिव वाला। माया वसि भौ ऋपि तिहिं काला। ६ करत। ११ फाग सुमागै। ११ जागै।

मुख मीँडत[1] अंजन गहि दिन्नौ ।
जग्यौ कॉम ऋपि कॉम सु भिन्नौ ॥१५६॥
लखि मुसक्यानि भई मति भोरी।
जीति सरस[2] ऋपि कॉमनि हेरी ॥१५७॥

अथ तुलसीदास पूर्व पच्छ[3]

दोहरा छंद

का नहिं पावक जरि सकै, का न समुद्र समाय।
का न करै अबला प्रबल, किहिं[4] जग काल न खाय॥१५८॥
कबि लक्खन[5] अबला कहत, सबला जोध कहंत ।
दुबिला[6] तन मैं प्रगट जिहिं, मोहत संत असंत[7] ॥१५९॥
जीति सिसिर बित्तिय[8] तवै, फिरि आयव ऋतुराज ।
मिले उर्बसी पद्म ऋपि, सरे सक्र के काज ॥१६०॥
बिवस भए[9] मुनि अच्छरा[10], भुल्लिय तप व्रत नेम ।
निसि वासर क्रीड़ा करत[11], वढ्यौ जु तन मन प्रेम ॥१६१॥
सुरति बढ़ी चित मैं चढ़ी, मढ़ी मोह मति भूरि ।
छिन छिन तिय ऋपि रजत[12] दोउ, भयउ[13] प्रेम परिपूरि ॥१६२॥
हृदय पुरंदर त्रास गनि, गइय[14] उर्बसी त्यागि ।
बिन माया ऋपिराज तब, मन सुत्तो[15] सो जागि[16] ॥१६३॥
जाय जुहारे इंद्र कौ, कॉम उर्बसी संग ।
कज्ज[17] सँवारयौ रावरौ, करयौ कठिन तप भंग ॥१६४॥

---

१ माडत। २ ससिर। ३ अथ तुलसीदास रामायने पूरन पच्छि। ४ को। ५ लाखन। ६ द्विर्निला, दुनिला। ७ अनत। ८ बीती। ९ भयौ। १० अच्छरिय। ११ करे। १२ राज। १३ भरे। १४ गई। १५ सोवत सो। १६ लागि। १७ काज।

(वचनिका) वार्त्तिक

तब इन्द्र कामादिक कौ सत्कार कियौ। यहाँ ऋषि पद्म सूतो सो जाग्यौ। मन महँ विचार करन लाग्यौ। मैं तो माया मैं पाग्यौ तप खोयौ औ कलंक लाग्यौ। और अब दोनौं गई तपस्या तो खंडित भई, अरु उर्वसी हू जात रही अब यातैं यह सरीर राखनो योग्य नहीं और मन की वासना मीत ठौर भई तातैं एक सरीर सूँ कछू बनि आवै नहीं। जब ऋषि होम करि सरीर त्यागौ। जहाँ जहाँ वासना रही तहाँ तहाँइ[1] पाग्यौ॥

दोहरा छंद

तिय वियोग ऋषि तन तज्यौ, ग्यारा सै चालीस।
माघ सुक्र द्वादसि सु तिथि, वार वरनि रजनीस ॥१६५॥

छंद पद्धरी

तन पात किन्न ऋषि पद्म आप।
उर्वसी विरह तन मन सु ताप॥
ग्यारा सौ चालीस जानि।
नृप विक्रम संवत ताहि मानि ॥१६६॥
तप[2] सिद्धि मास अरु बहुत पच्छि।
ऋतु सिसिर द्वादसी तिथि सु रच्छि॥
सिववार सोम जान्यौ प्रसिद्ध।
जित प्रीति योग बिच[3] करन अद्ध ॥१६७॥
रवि अयन[4] अंस अठ बीस मानि।
ससि जन्म त्रियोदस अस जानि॥
सुध मीन लग्न विगृह सु त्यागि।
करि हवन जवन सुख हृदय पागि ॥१६८॥

---

१ ही। २ तपसि। ३ बिन। ४ एण।

निज प्रथम अंग पंचांग होम ।
जित रही वासना सरस धोम× ॥
ऋषि मुद्गल गोती सिखाहीन ।
वहि तिलक हृदय आयौ नवीन ॥१६६॥
सिर भयौ पृथ्वीपति जवन ईस ।
जिहिं राज्य कर्‌यौ[1] पूरण दिलीस ॥
वह रह्यौ तिलक दिय परि अनूप ।
तहँ भौ[2] हमीर चहुवॉन भूप ॥१७०॥
दोउ वाद कर्म्म किन्नौ सु चाहि ।
दोउ भए भीर महिमा सु साहि ॥
अरु लग्न उर्वसी चरन संग ।
यह भए पंच ऋषि पद्म अंग ॥१७१॥

(वचनिका) वार्तिक

ऋषि पद्म उर्वसी को विरह तन त्यागयौ । माह सुक्ल १२ द्वादसी सोमवार आद्रा नक्षत्र प्रीति योग ववकर्ण, सूर्य्य २८ अट्ठाईस, चंद्रमा मिथुन को तेरा १३ अंस, मीन लग्न मैं देह होमी । पाँच अंग होम्यॉ जितनी वासना जितनी जायगा हुई । ताहीं सों पाँच स्वरूप एक सरीर का हुवा ॥
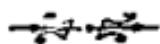
अथ राव हम्मीर को जन्म[3] वर्णन

दोहरा छंद

ससि बेद रुद्र संवत गिनो, अंग राभ्र पित साक ।
दक्षण अयन सु सरत ऋतु, उपजे गए न नाक ॥१७२॥

---

१ कर्‌यउ । २ भयौ । ३ जन्म समयो, जन्म समय्यो ।

× धोम=धूम्र ।

गजनी गौरो साह सुत, भय अलावदी साय।
ताहीं दिन रणथभ गढ़, जन्म हमीर सु आय ॥१७३॥
यह हमीर नृप जैत कै, अमर करण आचार।
मीणा भारू बंधु दोउ भई नारि तिहिँ वार ॥१७४॥

छंद पद्धरी

ससि रुद्र वेद संवत सुजॉन।
पट सहस इक माको प्रमाँन ॥
रवि जॉम अयन दत्तण सुगोल।
ऋतु सरद सुभ्र सुंदर अमोल ॥ १७५ ॥
तिथि भॉन उर्ज्ज वल पच्छि जानि।
रवि घटो तीस अरु दोय मानि ॥
हिर बुल्ल वेद घटि घटिय साठ।
व्याघात योग मुनि घटी आठ ॥ १७६ ॥
बालच्च नाम सोइ कहत कर्ण।
यहि भॉति कह्यउ पंचांग वर्ण ॥
रवि उदय इष्ट घटिका छतीस।
पल सून्य पंच जान्यूँ सदीस ॥ १७७ ॥
पल षोडस अष्टावीस दड।
दिनमाँन जाँन तिहिं दिन सुमंड ॥
इकतीस चवाली रात्रि मानि।
सब घटिय साठि दिन राति जानि[१] ॥१७८॥
भौ[२] जन्म लग्न मिथुनेस आय।
द्वादसह अस गत भए वताय ॥
तुलभॉन सप्तदस .अंस मानि।
सरि रुद्र[३] अस भख रासि मानि[४] ॥१७९॥

---

१ मानि। २ भयी। ३ सर रुद। ४ जानि।

मंगल सुबाल धरि एक अंस।
बुध बारह वृश्चिक मैं प्रसस॥
घटि जीव एक अंसह सुसुद्ध।
भृगु कन्या विद्या सुभग लद्ध॥१८०॥
ससि मीन तीस कटि एक अंस।
तिय रासि कह्यौ सुरमानुतंस॥
सोइ कहे अंस चौबीस पूर।
यह जन्म लग्न हम्मीर सूर॥१८१॥
सुनि राव जैत मन हर्ष किन्न।
भंडार अमित सब खोलि दिन्न॥
गुरु बिप्र मंत्र मंत्री सु बोलि।
बड़ भीर भइय नृप आय पौलि॥१८२॥
किय स्राद्ध नंदि मुख बेद बृद्धि[1]।
सब जात कर्म किन्नौ सु सुद्धि॥
गो भुम्मि अन्न कंचन सु दिन्न।
द्विजराज सकल संतुष्ट किन्न॥१८३॥
लिय बोलि सफल जाचक सु बृंद।
हय हेम सुरासन दीन बंद॥
बहु भूपन बाहन बिबिध रग।
जिहिं चाह लही सो दियौ संग॥१८४॥
दधि दूब हरद भरि कनक थाल।
बहु गाँन करत प्रबिसंत बाल॥
दुंदुभि बजंत घर घरन बार।
ध्वज कनक पताका द्वार द्वार॥१८५॥
औछाह राजमदिर अनूप।

---

१ विद्धि।

आनंदमग्न नर नारि भूप ॥
सब दाँन देत घर घर उछाह।
सब भय अजाचि जाचत सु ताह ॥१८६॥
बहु मंगल गावत अति अनूप।
जय जयति कहत चहुवाँन भूप ॥१८७॥

वचनिका

राव जैत कै गढ़ रणथंभवर तहाँ जैत घर हम्मीर जन्म्यौ संवत ११४१ साकौ १००६ दक्षणायन सरद ऋतु कार्तिक सुक्ला १२ द्वादसी रविवार घटी ३२ उत्तरा भाद्रपद घटी ६ पल ५६। कछु घर को धरयौ पायौ। एक सेवक लोह पत्र पाथर सौं घस्यौ तहाँ लोह सोनो (सुवर्ण) भयौ राव जैत कौं आणि दयौ व्याघात योग घटी १६ पं० बालव कर्ण घटी २८ इष्ट घटी २६ पल ५ दिनमॉन घटी २८ पल १६ रात्रिमाँन घटी ३१ पल ४४ तुला संक्रांति गतांस १७ भोगांऽस १३ चंद्रमा मीन को ११ अंस मंगल

कन्या को १ अंस बुध वृश्चिक को १२ अंस वृहस्पति कुंभ को १ अंस सुक्र कन्या को १४ अंस सनि मीन को २६ अंस राहु कन्या को २४ अंस राव हम्मीर असी घड़ी जन्म लियौ। सब को मनोर्थ पूर्ण कियौ। सर्व वंस मैं हर्ष हुवो और अजमेर चित्तोड़ जु वोलि विप्र पोष्या जाचक संतोस्या[1] मंगल गाए वधावा[2] वजाया ॥

---

१ सरवस मैं (सर्वस्व मैं) दान दीन्हौं जग जस लीन्हौं। २ भए मन भाए।

अथ हम्मीरराव को और अलावद्दीन पातसाह को बैर समय्यो वर्णन

दोहा

इक्क[1] समय पातसाह वन, मृगया कहि मन किन्न[2]।
सबै खाँन उमराव चढ़ि, हय गय वृंद सु लिन्न[3] ॥ १८८ ॥
हरम सबै पतसाह को, जो सिकार के जोग।
साज बाज बनि बनि सकल, अरु अंदर के लोग ॥ १८९ ॥
सुंदरता सुकुमार निधि, वहै अपछरा अंग[4]।
ताके गुन गन तैं बँध्यौ, निमिष न छाँड़त[5] संग ॥ १९० ॥

छंद भुजंगप्रयात

चले साह आखेट[6] वज्जे निसाँनं।
सबै भूप सथ्थं सुपथ्थं[7] सुजाँनं ॥
सजे डंबरं अंबरं साज बाजं।
बनी पक्खरं बाजि साजं समाजं ॥१९१॥
किते बीर बाने अमाने अपारं।
किते मीर धीरं सजे सार धारं ॥
नफीरी बजी भेरि बज्जे रवद्दं।
वहै उर्वसी संग लिन्नी समद्दं ॥१९२॥
जके रूप सौं साह बंध्यौ सुजाँनं।
जथा चंद्र की कांति चकोर मॉनं ॥
जथा पंकजं[8] वै दुरैफैं लुभाए।
तथा साह बंध्यौ सनेह सुभाए ॥१९३॥

---

१ एक। २ कीन। ३ लीन। ४ अच्छरी अंग। ५ छंडहिं। ६ आलादि (अलाउद्दीन)। ७ समथ्थं सुखाँनं। ८ पंकजं पै दुरैफै लुभाए।

चले हयदलं पयदलं सथ्थ रथ्थं[1]।
किते स्वाँन चीता मृगं संग जुथ्थं॥
चले साह गोसं सरोसं सुभाँनं।
बजे नद्द नीसाँन नव्बीन[2] चावं॥१६४॥
उठी रेणु आकास छायौ सुहद्दं।
मनो पावसं मेघ गज्जे सवद्दं[3]॥
चले तेज ताजी सुबाजी अपारं।
सबै खाँन सुलताँन संगं जुमारं॥१६५॥
करैं धीर लीला सुकीली[4] बिवाँनं।
धरैं बाँन कम्माँन संधाँन पाँनं॥
लखे जीव जेते सु केते जिहाँनं।
भ्रमैं जत्र तंत्रं सु पावै न जाँनं॥१६६॥
बनैं[5] बेहरं गोत्र गंभीर नारी[6]।
बहै नीर नद्दं सुभद्दं उन्हारी॥
झरैं निज्झरं[7] नाद भारी असारं[8]।
रहे फूलि संकूल वृक्षं अपारं॥१६७॥
जहाँ अंब नीबू भए और केलं।
सबै वृच्छ[9] फुल्ले फले भार मेलं॥
भरी भार सारा[10] रही भुम्मि लग्गी।
लता संकुलं पाट पंतैं उमग्गी॥१९८॥
भ्रमैं भृंग पुंजं सुगुंजं अपारं।
मिली बेलि केती महीरुह[11] डारं॥
मनौं मार अप्पार ताँने बिताँनं।

१ हथ्थं। २ बानै सुबानं। ३ सुमंदं, सुसद्दं। ४ सकेली। ५ बनं। ६ भारी। ७ नीझरं, निर्झरं। ८ पहारं। ९ वृच्छ फूले। १० सारं। ११ महीरोह।

तिहूँ काल हेरै लखै नाहिं भॉनं ॥१९९॥
रमै कोकिला कीर नच्चै मयूरं।
कहूँ बैन मानो बजै कॉमतूरं॥
बहै सीत मन्दं सुगंधं पवन्नं।
करै कॉम उद्दीपनं देखि वन्नं॥२००॥
सुरं[1] सुंदरं पंकजं बन्न फुल्ले।
करै गुंज भारी भ्रमै भ्रमर भुल्ले॥
चहूँ ओर कुमोदनी चारु फुल्ली[2]।
महा मोद सौँ भार आनंद मुल्ली॥२०१॥
किते जीव संमूह देखंत भज्जैं।
मृगं व्याघ्र चीते रिछ जत्र गज्जैं[3]॥
कहूँ कौलपुंजं कहूँ लीलगाहं।
कहूँ चीतलं पांडुलं[4] व्याघ्र नाहं॥२०२॥
कहूं भिल्ल बंके[5] बसैं ताऽस्थॉनं[6]।
भखैं सिंह स्यारं ससास्रोन पाँनं॥
करै सिंह गुंजार भारी भयाँनं।
सुने प्रॉनहारी डरैं जीव हॉनं॥२०३॥
तहाँ साह की सेन किन्हौं प्रवेसं।
तजे रॉन[7] पॉनं लए जो असेसं॥
करैं वीर जेते सु केते उपावं।
हनैं जीव जे साहि को बाज[8] पावं[9]॥२०४॥
तहाँ साह के यूँ भए जाय डेरा।
चहूँ ओर को खॉन केते अनेरा॥

---

१ सरं सुन्दरं पंकजं पुंज। २ फूली। ३ मृगं भार चीते वृकंजत्र गज्जैं। ४ पाडलं। ५ भील बाँके। ६ तास स्थानं। ६ जॉन। ८ बाच। ६ उपायं, जपायं (अंत्यानुप्रास)।

कहूँ[1] बीन वादित्र बाजंत ऐसी।
सुनै राग मोह[2] मृग माल वैसी ॥२०५॥
करैं गाँन ताँनं पसू पच्छि मोहैं।
सुनै जीव आवत[3] जानैं न को हैं॥
सुनै बीन पब्बीन[4] सुर नाय रागैं।
रहे मोहि कै माल डारे न भागे ॥२०६॥
कहूँ राग ऐसो करैं मेघ आवैं।
तबै साह ताको वडी मौज द्यावैं॥
असी भाँति आखेट कै रंग भीनो।
निसा द्यौस जातंन काहू न चीनो ॥२०७॥
तिहीं ठौर विस्यौ सुसारी वसंत।
रमै पातसाह मनों रत्तिकंतं॥
तिहीं ठौर ग्रीखम्म किन्नौ प्रवेसं।
महा सकुलं वृच्छ राजं सुदेसं ॥२०८॥
तहाँ तेज भाँन न जाँन न जाँनं।
तिही हेत साहं रहे तास थाँन[5]॥
समौ एक ऐसो तहाँ रौद्र आयो।
महा पौन परचंड ओ मेघ छायौ ॥२०९॥
कहूँ और पतसाह खेलैं सिकारं।
करैं केलि जेती जल बाल लार*॥
भयौ अंधकारं महाघोर ऐनं।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं अप्प[6] नैनं ॥२१०॥

---

१ वहू। २ मोहे। ३ आनद। ४ पर्बीन। ५ तिही तेज भाँनन जाँन न जात। तिही हेत साह रहे सक बात। ६ आप।

*लार (लाल)=जो क्रीड़ा में अन्यों के पूर्व विजय प्राप्त करती हो।

फुरयौ[1] साह को सत्थ भोजत्थ तत्थं ।
भयौ घोर अंधार सुझ्झै न हत्थं ॥
तजी बालक्रीड़ा जलं त्यागि भग्गी ।
जहाँ ओर दौरी भयौ मुक्ख अग्गी ॥२११॥
किहूँ ओर दासी किहूँ ओर खोजा× ।
कहूँ ओर हुरमैं कहूँ ओर फोजा ॥
जसो होनहारं बन्यौ आय जैसो ।
करो लाख कोऊ टरै नाहिं तैसो ॥२१२॥
लिखे लेख जो नाहिं मिट्टै सुकोई ।
यही बात निस्चै सुनो सव्वं सोई ॥
सरं त्यागि चल्लौ सुहुरमैं सुमीतं ।
कँपै गात ताको रह्यौ व्यापि सीत ॥२१३॥
तिहीं ठौर महिमा मिले सेख आई ।
महा साहसी सूर उद्दारताई ॥
निजं धर्म साधे तजै नाहिं राचं ।
कहै जो कछू[2] तो निवाहंत वाचं ॥२१४॥
मिली बाल ताकों कही दीन बाँनी ।
समै[3] याम सेखं मनौं[4] आप जानी ॥
डरो ना कह्यो आप ही कौन कोई ।
कहूँ जो उद्दावो यहाँ बैठि मोही ॥२१५॥
तबै बाजि तैं सेख भू पै जु आयौ ।
कछू बस्त्र हो अंग ताको उढ़ायौ ॥२१६॥

दोहरा छंद

महिमा उतरे बाजि तैं, दियौ बस्त्र तिहिँ हत्थ ।

---

१ फुरयौ । २ कहूँ । ३ उभै । ४ मनं ।

×खोजा=सेवक ।

सीत भीत ता ना मिटी, कही हुर्म यह गत्थ ॥२१७॥
पुच्छिय महिमा साहि तब, को तू आप बताय।
मैं घरनी पतिसाह की, रूपविचित्रा नाय ॥२१८॥
जलक्रीड़ा हम करत सब, आयौ पौन प्रचंड।
तब डेरन को भजि चलीं, तामैं मेघ सुमंड ॥२१९॥
भयौ भयानक तिमिर वन सबै सत्थ गय भूल।
मै इकली वन महँ यहाँ, डरति फिरति दुख मूल ॥२२०॥

छप्पय छंद

तब महिमा कर जोरि हुरम कूँ सीस नवायौ[१]।
चढ़्यौ अस्व की पिट्ठि देव पहुँचाव सुभायौ ॥
कहै हुरम सुन सेख देह कंपत है मोरी।
छिनक बैठि यहिं ठौर सरन मैं लिन्नी (लीनी) तोरी।
कहै सेख यह बात नहिं, तुम साहिब मैं दास तुव।
यह धरम नाहिं उलटो कह्यो, सरन सदा सेवक सुभुव ॥२२१॥
सेख समो पहिचानि स्वामि सेवग न विचारौ।
काँम रूप तुम पुरुष बीर बानैत उदारौ ॥
बहुत काल अभिलाष रही जिय मैं यह भारी।
कौन समो वह होय मिलै महिमा गुनधारी ॥
सुइ करिय आज साहिब सहल, सकल मनोरथ सिद्ध हुव।
दै योग भोग संयोग यह, कौन दोस जग देहु तुव ॥२२२॥

चौपाई छंद

कहै सेख तुम बेगम सच्चिय।
ऐसी बात कहो मति कच्चिय ॥
मैं अब लौं तिय जग मैं जानत।
भगनी मात सुता सम मॉनत ॥२२३॥

---

१ हुरम कहि कहि सन बोयौ।

ता महिं तुम हजरत की वाला ।
सब कै एक वहै हकवाला ॥
तातैं कहा धर्म मैं हारूँ ।
यह तो कबहूँ जिय न विचारूँ ॥२२४॥
सुनहु सेख बेगम तिय सबहीं ।
तुम हूँ धम्मं सुन्यौ है कबही ॥
तिय तजि लाज कहत रति जाचन ।
को नहिं धर्म जो पुरुष अराचन ॥२२५॥
तन मन धन जाचे तैं दिज्जिय ।
कहु कुराँन पूरन सोइ किज्जिय[1] ॥
पुरुष धर्म यह मूर न होई ।
तिय जाचत कौ नादत कोई ॥२२६॥

सोरठा छंद

तब जिय सोचि बिचारि, मनहीं मन महिमा समुझि ।
साँची है यह नारि, धर्म उभै जग महँ प्रगट ॥२२७॥
तब महिमा मुसकाय, कर गहि आलिंगन दियौ ।
इक तरु कौं तर जाय, दियौ तुरंगम बंधि तब ॥२२८।
जीनपोस तर डारि, सस्त्र खुल्लि रक्खिय निकट ।
करी सुमार सुमार, उत्कंठा तिय मिलन की ॥२२९॥

छप्पय छंद

महा मोद मन बढ़्यौ परस्पर तन मन फुल्लिव ।
मिटिव वंक मन संक निसँक ह्वै आसन भुल्लिव ॥
मानो कोक चकोर चंद लब्भव रवि लवे ।
घन दामिनि मनु मिलिय काँम रति पति सुख फबे ॥

---

१ दीजे, कीजे (अन्त्यानुप्रास)

दुहुँ ओर मोर स्वातिक सुभी, गाढा आलिगन दियव।
नख रद नाहिं परसे सरहि, सकल कोक केला कियव ॥२३०॥
अग अग तिनअग* रंग बढढिव दुहुँ ओरन।
कढिव विरह तन ताप परस्पर वर सत मोरन॥
हाव भाव रति अग मुदित वर्षत अभिलापै।
करत कटाच्छ प्रकास वैन मधुरै मुख भापै॥
गहि अंग सग आसन दियव, कोक कला रस विस्तरिव[१]।
आनंद द्वद उन्माद जुन, कॉम विग्रस दोउन भयव ॥२३१॥
तिहिं छिन इक मृगराज आनि तत्काल सुगज्जिव।
प्रज्वलित नयन प्रचड चॅवर सिर उप्पर सज्जिव॥
निकट दत मुख विकट बाहु नख निकट सुरज्जै।
तिहिं भय नन प जाय सवै गजराज सुभज्जै॥
आयत देखि तिहिं सिंह कौ, ह्वै सभीति तिय इम कही।
विधि कौन समै यह का भई दैव वारि मैं वपु न्है ॥२३२॥
नव तिय कपि सभाति उछरि महिमा गर लग्गिय।
हे प्राणेस्वर कहा भई रसगत जु उमग्गिय॥
नन्हु भजहु अब वेगि, वचहु अब प्राण उबारो।
मैं अब पलटे प्राण तजों, तुम पर तन वारों॥
मुसकाय मीर तब यों कहै, न डरि न डरि अबला सुमुख।
तुट्टै जु आय रक्खों भुज न, कहा स्याल डर डरत तुव ॥२३३॥

छद अर्द्धनाराच

गहे कमॉन वॉनय, धरन ताहिं पॉनय।
तज्यौ न बाल आसन, गह्यौ मर सरासन ॥२३४॥

---

१ विस्थरिव। २ प्रफुलित।

* तिनअग=अनग।

सु सिद्धि राग वागयं, ढए स धीर पागयं।
कह्यौ हुँकारि याचयं, सम्हारि स्वाँन साचयं ॥२३५॥
करी सुगुञ्ज पुंजयं, उठ्यौं सु क्रोध गुंजयं।
धर्यौ सु चौंर सीसयं, भुजा चठाय रीसयं ॥२३६॥
जथा सुक्रोध कालयं, चठ्यौं सु सिंह यालयं।
करं कमाँन लिन्नयं, कसी सतानि[1] दिन्नयं ॥२३७॥
लग्यौ सुवाण मन्थयं, लखी अकत्थ गत्थयं।
लग्यौ सुबाण पार भौ, गिर्यौ सुसिंह स्यार भौ ॥२३८॥

दोहरा छंद

सिंह मारि इक बाण तैं, भू मैं दिन्नी डारि।
फिरि कमान तिहिं हथ्थ[2] तैं, धरी जु भूपर धारि ॥२३९॥
यह साहस किन्नौ प्रगट, सम स्वभाव सम बुद्धि।
गर्व हर्ष हिय नहिं कछू, प्रगटिय प्रेम प्रसिद्ध ॥२४०॥
मिलत मिलत मुसकात मृदु, कंपत हपेत गात।
उचकनि लचकनि मसकियो, सीकर हूकर वात ॥२४१॥

कवित्त छंद

कंचन लता सी थहरात अंग अंग मिलि,
सीकर समूह अंग अंगनि मैं दरसै।
चुंबन कपोल नैन खंडन अधर नख,
गहत पयोधर प्रचंड पानि परसै॥
आनँद उमंगन मैं मुसकात बाल तुत-
रात वतरात सतरात रस वरसै।
लपटनि झपटनि मसकनि अनेक अंग,
रति रंग जंग तैं अनंग रंग सरसै ॥२४२॥

---

१ नान। २ हाथ।

छप्पय छंद

मिटी पवन परचंड, मिटिव मनमथ मद भारिव।
हटेउ तिमर तिहिँ समय, प्रगट परगा(का)स सुधारिव॥
सकल सत्य जथ तत्थ, मिले अप्पन[1] थल आइव।
साहि हुरम को सोध करिव तिहिँ समय सुहाइव॥
दिन्नो जु सिक्ख तब सेज कौं, अप्प अप्प सिवरन गवय[2]।
पहुँची सु जाय पतिसाह पै, हुरम साह आदार दियव॥२४३॥
तब सु साहि करि कुच,[3] सकल दिल्लिय दिसि आयव।
चढ़िव सेन समूह, धूरि उड़ि अंबर छाइव॥
घुमरि घुमरि निस्सॉन,[4] घोर दुंदभि घन वज्जिय।
सकल खाँन उमरांव, हरप संजुत मग रज्जिय॥
कीन्हौं[5] प्रवेस निज निज घरन, साह महल दाखिल भयव।
सुख खॉन पॉन सौगंधजुत, अप्प अप्प[6] रस बस भयव[7]॥२४४॥
इक[8] समय पतिसाह, हुरम संग सेज विराजे।
दंपति अति रस लीन, काक की कला[9] सुसाजे॥
रमत करत परकार, इक[10] आसन रस[11] भीने[12]।
सरस परस्पर मुदित, उदित कंद्रप तन चीने॥
तिहिं समय दैव संजोग तै, इक आखु+ आवत भयव।
देखंत ताहि पतिसाहि को, मदन छंद उत्तरि गयव॥२४५॥

दोहरा छंद

मूपक हजरति देखि कै, आसन तजि ततकाल।
लै फमॉन संधानि कै, हन्यौ तोर लखि बाल॥२४६॥

---

१ आपन। २ दीनी जु सीख तब सेज कौं आय आय डेरन गयव। ३ कूँच। ४ नौसॉन। ५ किन्हौ। ६ आप आप। ७ वसि ख्यव। ८ एक। ९ केलि। १० एक। ११ रति। १२ मिने,चिने,भिन्नय,चिन्नय, अत्यानुप्रास।

+आखु (आखु)=मूसा।

चौपाई छद

हजरति हरषि तीर तिहि[1] दिन्नौ।
चूहौ[2] प्राणहीन तन किन्नौ॥
तबहीं साहि हरषि मुसकाए।
तिय कौ ऐसे बचन सुनाए॥२४७॥
कायर जाति तिया[3] हम जानी।
तातै यह हम प्रथमहि ठानी॥
यह करनी अद्भुत तुम देखी।
निज कर करी सु तुम अवरेखी॥२४८॥
हँसी हुरम सुनि हजरति 'बानी।
पुरुषन की तो अकथ[4] कहानी॥
मारैं सिह तो न मुख भाखैं।
जाचे नाहिं प्राण वै राखैं॥२४६॥
मैं जग मैं ऐसा सुनि पाऊँ।
कहै साहि मैं बहुत बधाऊँ॥
बकसो गुनह तो अबै बताऊँ।
तुरत साहि कै पाइ लगाऊँ॥

सोरठा छद

ऐसा मोहिं बताय, सिह मारि सिफत न करै।
बकसो औगुन आय, जो उन तात ज मारियौ॥ २५१॥
हुरम तबै कर जोरि, बार बार सिर नाय कै।
सुनहु गुनह[5] अब मोर, हजरति बीत्यौ आपनो॥ २५२॥

---

१ तहँ। २ चूही प्राणहीन तिहिं कीनौ। ३ तीय। ४ अकह।
५ *गुनाह तुमोर* ।

छप्पय छंद

मृगया महँ जिहिं समय, सकल मुल्लिय[1] वन माहीं।
महा घोर तम भयो, तहाँ[2] बरनी नहिं जाही॥
तहिन सेख संयोग, आनि हमसैं तब मिल्लिव।
नहिंन मेख तकसीर, देखि मन मोरहिं चल्लिव॥
संयोग भोग बिछुरन मिलन, लिख्यौ विधाता ज दिन जहँ।
नहिं टरै लाख कोऊ करो सुतौ होय वह[3] स दिन तहँ॥२५३॥

दोहरा छंद

मैं सेखहि जाँनत नहीं, सेख न जाँनत मोहिं।
होनहार संजोग जो,[4] मिटै न उतनी होहि॥ २५४॥
सुरति करत सिंह जु उठ्यौ, लख्यौ सेख सति भाय।
लै कमाँन मार्‌यौ तुरत, तज्यौ न आसन आय॥ २५५॥
सुनू स्वभाव ज सेख के, लच्छिन कहे जु आप।
मैं सभीति भइ सिंह तैं, कहे मोहिं विन पाप॥ २५६॥

त्रोटक छद

सुनिये पन सेख करे निज ये।
घर बैठत वाँ जल सों रजए॥
नहिं भोजन सोहि गरम्म करै।
उकरू नहिं बैठत भुंमि भरै॥२५७॥
सरणागत आवत नाहिं तजै।
पर वाँम लखे मन माहिं लजै॥
जहँ जाचत प्राण न राखत हैं।
नहिं झूठ अकारन[5] भाखत हैं॥२५८॥

---

१ भूले। २ तहाँ कछु बर्नि न जाही। ३ वहाँ। ४ तैं।
५ अकारथ।

रण मैं नहिं पिट्ठि दई कबहूँ।
लखि आरतिवंतन सों अबहूँ॥
तहँ मेटत आरति वार तिहीं।
थिर आसन बैठत है कबहीं॥२५६॥
मुख सैं उचरै न टरै कबहीं।
सब तैं मधुरे मुख वैन सही॥
द्रग लाज भरे रिझवार घनैं।
रहनी करनी कविराज ॥२६०॥
महिमा महिमा नहिं जात कही
जस चाहक गाहक
बरबीर महारणधीर
खँग खेत गहै अरि
सुनि साहि मनै अचिरज्ज
ततकाल जु सेरा
छिरकाय धरा जल सौं
बहु भोजन
तर गेरि पटंबर
करि पालथि
बहु भाँति सिराहि सु
करिये तब भोजन
मिलिए सब जो कछु
महिमा तिय
प्रजुरे पतिसाहि सु
मनु[3] ज्वाल
द्रग लाल विसाल सु

---

१ आप। २ लए। ३ जनु।

रद दावत[1] ओठ सु ओठ दुवं ॥
करि क्रोध तबै पतिसाहि कहै।
उर में अति क्रोध[2]प्रचंड दहै ॥२६५॥
सुनि जाँमहिं जो तकसीर परै।
तिहिं को न कहो अब दंड धरै ॥
कर जोरि उठ्यौ महिमा तबहीं।
हम तो तकसीर भरे सबहीं ॥२६६॥
तुव गर्दन बेग कबूल करो।
हैं तकसीर जु सेख भरो ॥
तब सेख कहै कर जोरि तबै।
करिये मन भावतु है जु अबै ॥२६७॥
तब बोलि हुरम्म कहै मुख तैं।
पहलैं तकसीर परी हम तैं ॥
गरदन्न कबूल करी अबहीं।
पहलें हम तैं तकसीर भई ॥२६८॥
समझे पतिसाह तबै मन मैं।
अबला हठ नाहिं मिटै मन[3] मैं ॥
इनको सब बेगम लोग कहैं।
मन चाहत सो हठता जु गहैं ॥२६९॥

दोहरा छंद

हुरम बचन सुनि साह तब, मन विचार तहँ कीन[4]।
बेगम जाति जु तीय की, इन मरवे मन दीन[5] ॥२७०॥
जाहु सेख इत[6] मति रहो, जहँ लगि मेरो राज।
जो राखै[7] ताको हनूँ, प्रगट सुसाज समाज ॥२७१॥

---

१ दव्वत। २ कोप। ३ तन। ४ किन। ५ दिन। ६ इह। ७ रक्खै।

कट्टन गरदन जोग तू, कीनौ[१] कुबिध[२] खराब।
को रक्खै[३] या भूंमि पर, रक्खि[४] करै को ब्वाब ॥२७२॥

छप्पय छंद

यह महि मंडल जितो, आॅन मेरी सब मानैं।
खूनी रक्खै कौन, कोउ ऐसा तू जानै॥
हम तैं बली बताय, ओट जाकी तू तक्कै।
बचै न काहू ठौर, एक बिन गए न मक्कै॥
कर जोरि सेख इम उच्चरै, बली एक साहिब गिनूँ।
निर्बीज धरा[५] कबहूँ न है,[६] मैं हमीर स्रवनन सुनूँ[७] ॥२७३॥
सब सुसेख सिर नाय, रजा हजरति जो पाऊँ।
जौ न गिनै पतिसाह, सर्न मैं ताकी[८] जाऊँ॥
तुमहिं न नाऊँ सीस, नहिन फिरि दिल्लिय आऊँ।
जुद्ध जुरे नहि टरौं, हत्थ तुम कौ जु दिखाऊँ॥
यह कहत सेख सल्लाॅम किय, तबहिं चला चलचित्त भुव।
निज धाॅम आय अप अनुज सौं, बिबर बिबर बातैं जु हुव ॥२७४॥

छंद पद्धरी

आए जु सेख घर तब सरोष।
जिय जान्यौ अपनो सकल दोष॥
मिलिय[९] जु मीर गबरू सुधाय।
चलचित्त देखि तिहिं पूछि[१०] जाय ॥२७५॥
किहिं हेतु आज चितत सुभाय।
किहिं कियव बैर सो मुहिं[११] बताय॥
तिहिं मारि करूँ ततकाल टूक[१२]।

१ किनौ। २ कुबदि। ३ राखै। ४ राखि। ५ भुंमि। ६ हूँ।
७ गिन्यौ, सुन्यौ अंत्यानुप्रास। ८ जासी। ९ मिल्ले। १० पुच्छि।
११ मो। १२ टुक्क।

हिय क्रोध अग्नि सोँ[1] उठत ऊक[2] ॥२७६॥
को[3] करै बैर बिन धर्म्मबीर।
मिट[4] गये अन्न जल को सु सोर॥
तिहि[5] कौन रहै रक्खै सु कौन।
यह जानि मर्म तुम रहो मौन॥२७७॥
यह सुनत मीर गवरू सुभाय।
मो[6] पर्‍यौ धर्नि मुर्च्छा सु खाय॥
तदि करयौ बोध बहु बिधि सुताहि।
नहिँ करो सोच रहो[7] निकट साहि॥२७८॥
तब कहे मीर गवरू सु ताहि।
सब तजो देश मक्के सु जाहि॥
कै रहो राव हम्मीर पास।
तन रहै खुसी नासै जु त्रास॥२७९॥
तब चलिव सेख तजि माहि देस।
सब[8] सुभट संग लिन्ने[9] सुवेस॥
सत पंच सैन गजराज पंच।
रथ सत्थ लिये निज नारि सच॥२८०॥
सब रखत साज निज संग लीन।
दासी[10] जु दास सुंदर नवीन॥
सजि साज बाज डेरे अनूप।
लदि ऊँट किते सँग चलिय[11] जूप॥२८१॥
चढ़ि[12] सेन सज्यौ निज सग वॉम।

---

१ यों। २ हूक हुक। ३ महिमा साहोनाच। ४ मिटि अन्न जहाँ सनीर। ५ तन। ६ सुइ परयो धरनि मुर्छा सुसाह। ७ रहु। ८ निज। ९ लीन्हे। १० सब दासि दास। ११ चले। १२ सजि सेख चढ्यौ।

बज्जिव निसॉन गज्जिव सु तॉम ॥
मग चलत करत मृगया अनेक ।
मिलि चलिय[1] सकल वर वीरएक[2] ॥२८२॥
जिहिं मिलै राव राजा सु जाय ।
पतिसाह वैर सुनि रहै चाय ॥
चहुँ चक्क फिर्‌यौ महिमा सुधीर ।
नहिं[3] कह्यौ रहत काहू सुवीर ॥२८३॥
है[4] दीन सेख देखे सुभारि ।
विन राव दसौं दिसि फिरिव हारि ॥
तव तक्कि[5] सेख हम्मीर राव ।
सोइ आइ सरन परसे जु पाव ॥२८४॥

दोहरा छंद

गढ़ वंका[6] वंको सुघर, वंका[6] राव हमीर ।
लखि प्रतीति मन महँ[7] भइय, हर्षे महिमा मीर ॥२८५॥
देग्वि जलासय विटप वहु, उतरि सुडेरा कीन[8] ।
हय गय वंधे तरुन तर, खाँन पॉन विधि लीन[9] ॥२८६॥
डेरा ड्योढ़ी करि खरे, करी बिछायति वेस ।
करि[10] मिसलति कौं सलि जुरी, सव भर सरस सुदेस ॥२८७॥
मंत्री मंत्र सुपूछि[11] तव, इक चर लीन सु वोलि ।
जाहु राव के पास तुम, कहो वात सव खोलि[12] ॥२८८॥
प्रथम सलॉम कहो जु तुम, विरत[13] कहो सु विसेप ।
हुकम होय जो मिलन कौं, तो हजूर है सेख ॥२८९॥
इतने मैं जानो परै, पन भ्रम प्रीति प्रतीति ।

१ चलै ।२ केक । ३ नन कयौ । ४ द्वै, दोउ दीन, दोय । ५ तकै ।
६ वंको । ७ जिय मैं । ८ किन । ९ लिन । १० करी कचहरी आप तव ।
११ पुच्छि । १२ बुल्लि, खुल्लि । १३ वृत्त, वृत्तांत ।

हर्ष सोक यहिँ गति लस्यौ, तुम जानत सब रीति ॥२९०॥
तब सु दूत गय राव पहँ, करी खबरि दरवाँन ।
बोलि हजूरि सुदूत कौ, पूछत कुसल सुजाँन ॥२९१॥
सकल बात सुनि दूत मुख, हर्ष राव यहु कीन[१] ।
तबहिं उलटि पठयौ सु वह, मेख बुलाय सुलीन[२] ॥२९२॥

नाराच छंद

चल्यौ जु सेख राव पहँ बनाय साज कीनयं[३] ।
तुरंग पंच नाग एक साज साजि लीनयं[४] ॥
कमाँन दोय टंकनो सु देम मुल्लताँन की ।
कृपाँन एक[५] वेस देस पालकी सुजाँन की ॥२९३॥
लिये सु दोय बज्र लाल एक[५] मुक्त मालयं ।
कही जु एक[५] दोय बाज स्वाँन दोय पालयं ॥
सवार एक आपही सबै पयाद चल्लियं ।
रहे तनक्क पौरि जाय फेरि अग्ग हल्लियं ॥२९ ॥
सुवेतहार अग्ग[६] जाय राव कौ सुनाइयं ।
हमीर राव बेगि आय[७] रावतं उँदाइयं ॥
चले लिवाय सेख की जहाँ जु राव बट्ठियं ।
सभा समेत राव देखि सेख कौ सु उट्ठियं ॥२९५॥
मिले उभै समाज सौं कुसल्ल छेम पुच्छियं ।
परस्सि पानि पाव सेख हाथ[८] जोरि सुच्छियं ॥
करी जु अग्ग सेख भेट बुल्लियौ सु बाचयं ।
सरन्नि राव राखि[९] राखि मैं सरन्नि साचयं ॥२९६॥
फिरयौ सु मैं सु दीन दोय खाँन जाँति सब्बयं ।
जितेक राज रावताय छत्र जाति सब्बयं ॥

१ किन्न । २ लिन । ३ कियर्य । ४ तुरंग पंच नाग इक साज सजि लियर्य । ५ इक । ६ अग्र । ७ आप । ८ हाथ । ९ रक्खि रक्खि ।

दिसा दसौं जितेक भूप और बीर वक जे।
रहो कह्यौ सु कौन हू रहूँ तहाँ सुधीर जे[1] ॥२९७॥
हँसे हमीर राव वात सेख की सुनंतही।
कहा अलावदीन पातसाह, सोभनतही॥
रहो यहाँ अभै सदा हमीर राव यों कहै।
तजूँ ज तोहिं प्राण साथि और बात यों[2] कहै ॥२९८॥

चौपाई छंद

राव हमीर नजरि सच रक्खिय।
वचन सेख को यहि विधि भक्खिय॥
तन धन गढ़ घर ए सब जावैं।
पै महिमा पतिसाह न पावैं ॥२९९॥
कहै सेख प्रण समुझि सु किज्जिय[3]।
मेरी प्रथम अर्ज सुनि लिज्जिय[4]॥
दसों दिसा मैं मैं फिरि आयव।
जिते खाँन सुलताँन सु गायव ॥३००॥
राजा राँन राव जितने जग।
दीन होय देखे[5] सु अगम मग॥
वाँध तेग साहस करि कोई[6]।
तजै लोभ जीवन को सोई[7] ॥३०१॥
यह जिय जानि वास मुहिं दीजे[8]।
मेग्र रासि[9] सरनै जस लीजे[10]॥
इतनी धरा सेप सिर होई।
कहै साहि रक्खै नहिं कोई ॥३०२॥

---

१ मुतक जे। २ स्यों। ३ कीजे। ४ लीजे। ५ दिक्खे। ६ कोइय। ७ सोइय। ८ दिज्जिय। ९ रक्खिय। १० लिज्जिय।

छप्पय छंद

वार वार क्यों कहैं सेख उत्कर्ष वढावै।
एक[1] वार जो कही वहुरि कछु और कहावैं[2]॥
प्रथम वंस चहुवाँन टेक गहि कबहुँ न छंडै।
वहुरि राव हम्मीर हठ न छुट्टै तन खंडै॥
थिर रहहु[3] राव इम उच्चरै न डरि न डरि अव सेख तुव॥
उगै न सूर जो तजहुँ[4] तोहिं चलहिं[5] मेरु अरु भुम्मि ध्रुव॥२०३॥
वकसि सेख को वाजि[6] साज कंचन के माजे।
मुक्त माल सिरपेंच जटित हीरा[7] छवि छाजे॥
सकल सथ्थ सिरपाव माल दिन्नव अति[8] भारिय।
पंच लक्ख को पटौ दियौ आदर भुवकारिय[9]॥
दिन्नी सुठौर[10] सुंदर इकै[11] तिहिं देखत[12] हिय हर्षियउ।
उच्छाह सहित उठि सेख तव आनँद मंगल वर्षियउ॥२०४॥

दोहरा छंद

महिमा साह जु तुरतहीं[13] गए हवेली आप।
देखत ही सब भाँति सुख मिटौ सकल तन ताप॥
महिमानो पठई नृपति, सबै सथ्थ के हेत।
खाँन पाँन लायक जिते, मधु आमिष[14] सु समेत॥२०५॥
ज दिन सेख दिल्ली तजी, दूत सथ्थ दिय ताहिं।
को रक्खै कित[15] जात यह, लखो जु तुम हूँ वाहि॥२०६॥
राख्यौ[16] राव हमीर तव, महिमा साहु जु पास।
कहै राव सों दूत तव, मत रक्खो तुम[17] पास॥२०७॥

---

१ इकर। २ वदावै। ३ होहु। ४ तजों। ५ चलैं। ६ वाच।
७ हीरन। ८ असि। ९ नहुधारिय। १० जु। ११ यकै।
१२ पिक्खत। १३ तुरत तव। १४ अमिषहा। १५ कत जाइ इह।
१६ रक्खिउ। १७ निज पास।

अलादीन सू[1] औलिया, फिरत चहूँ दिसि आनि।
निबल सबल के बाद सौं, किन सुख पायौ जानि ॥३०८॥

मुक्तादाम[2] छंद

कहै तब दूत सुनो नृप बात।
बड़ो तुव वंस प्रताप सुहात[3] ॥
तजो[4] रतनागर को सर हेत।
रतन्न अमूल्य[5] तजो रज हेत ॥३०९॥
कहो गुन कौन रखे इहि[6] सेख।
जरत्त जु बाल गहो[7] सुविसेष ॥
अजाँन असी जु करै नहिं राव।
सुनो[8] तुम नीति जु राज स्वभाव ॥३१०॥
तजो अब इक्क[9] कुटुंब बचाय।
तजो गृह इक्क सुमाम सहाय ॥
तजो पुर इक सुदेस बचाय।
तजो सब आतम हेत सुभाय ॥३११॥
महा यह नीच अधम्मिय[10] सेख।
टर्‌यौ नहिं स्वामि तिया गुन देख ॥
बढ़ै पतिसाह[11] दिलीपति[12] वैर।
लख्यौ नहिं आँनन प्रात सुफेर ॥३१२॥
प्रलै जिहिं रोप तजै धर देह।
हमीर सु राव सुनो रस[13] भेव ॥
बढ़ै निति नेह तुमै पतिसाह।
अमीरस मैं विप घोरत काह ॥३१३॥

१ से। २ मोतीदाम। ३ सुतात। ४ तजो सरनागत। ५ अमोल। ६ इह। ७ गही। ८ सुनी। ९ एक। १० अधर्मिय। ११ पुनि साह। १२ दिलीसहिं। १३ इह।

परो[1] फिर आप नहीं दुख आय।
तजो यह जानि प्रथम्म सुभाय॥
जथा वह रावन जित्ति[2] त्रिलोक[3]।
सुरन्नर नाग रहैं तिहिं ओक[4] ॥३१४॥
करयौ तिन वैर जवै रघुनाथ।
मिट्यौ गढ़ लंक सुबंकम पाथ[5] ॥
कहो सर[6] कौन करैं पतिसाह।
करै तब जंग बचो नहिं ताहि[7] ॥३१५॥

छप्पय छंद

कह हमीर सुनि दूत वचन निज असत भारवौं।
मो विन[8] और न कोय मेरा को सरनै रारवौं॥
गहूँ खाग[9] सनमुक्ख दुहूँ अति गर्व सुद्ध द्रढ़।
लहूँ मुक्ति मग सत्य किधौं रणथंभ महा गढ़॥
कहियो निसंक पतिसाह सों सेख सरनि हम्मीर किय।
सामाँन युद्ध जेते कछू सो अनंत दुग्गह जु लिय॥३१६॥

दातार छंद

सुनि हमीर के वचन, दूत दिल्लिय दिस आयव।
फरि सलाँम कर जोरि, साह कौं[10] सीस नमायव॥
पूरब दच्छिन देस और पच्छिम दिसि आयव।
सबै सेख फिरि थकि, कहूँ काहू न रखायव॥
तब सेख आय रणथंभ गढ़, दीन वचन इम भक्खियौ[11]।
सुनि हमीर करुणा सहित, सेख वचन दै राक्खियौ[12] ॥३१७॥

महरम खाँ वजीरोवाच

समद पार गय सेख, वार हजरत वह नाहीं।

---

१ परं। २ जीति। ३ तिलोक। ४ वोक। ५ माथ। ६ सरि। ७ आहि। ८ मुझ बिन। ९ तेग। १० सों। ११ भाखियौ। १२ राखियौ।

राव शेख क्यों रखै, रहत हजरत घर माहीं ॥
फिर न कहो यह वचन, वृथा[1] कबहूँ[2] अनजानै ।
दूत साह के वचन, सुने सत्कार सुमानै ॥
महरम्म खाँन इम उच्चरै, खबरदार नहिं बेखबरि ।
कहिये जु बात निज द्रगन लखि, असी बात नहिं कहो फिरि ॥३१८॥

दोहरा छंद

महरम खाँ उज्जोग सों, कहे बैन पतिसाहि ।
इक फरमाँन हमीर कौं, लिखि भेजहु अब ताहिं ॥३१६॥

छप्पय छंद

लिखि हजरति फरमॉन उलटि एलची पठाए ।
हठ मति करो हमीर चोर मति रखो पराए ॥
हम दिल्ली के ईस राव तुमहूँ जु कहावो ।
बढ़ै अलसि जिय माहिं[3] वैर मैं कहा जु पावो ॥
माल मुलक चाहो जिती, कहै साहि वहु लिज्जिये[4] ।
फरमाँन बाँचि[5] जिय राव तुम, चोर हमारो दिज्जिये[6] ॥३२०॥

दोहरा छंद

बाँचि[3] राव फुरमॉन तब, दियउ सेस तन अंग ।
वचन दिये मैं सेख कों, करों शाह सों जंग ॥३२१॥
दियउ[7] उलटि फरमॉन तब, राव साहि कौ ज्वाब ।
रक्खौ महिमा साहि मैं, तजूँ न तिहिं मैं आब ॥३२२॥
यह फरमॉन जु बाँचि[3] कै, करिय साह तब क्रोध ।
खिजयौ देखि पतिसाह कौ, कियौ उजीर सुबोध ॥३२३॥

छप्पय छंद

कित्ती गढ़ रणथंभ राव जिम पहुँ गर्वाए ।
दसूँ देस वसि किये जीति करि पाँव लगाए ॥

---

१ व्यर्थ। २ कदापि। ३ माँझ। ४ लीजिए। ५ बाँचि। ६ दीजिए। ७ दियो।

ईस कही अब कोन जुद्ध जो हम मों मंडै।
देन दुनी तैं कढढि गर्व नातैं क्यों मंडै[1]॥
साहिब्ब वचन इम उच्चरै अली औलिया पीर गनि।
महिमा साह जु रक्खि तुव अजहूँ समुझि हमीर मनि[2] ॥३२४॥

दोहरा छंद

दूजा हजरति का लिख्या, बाँचि राव फुरमाँन।
बार बार क्यों लिखत है, तजूँ न हठ की बाँन॥३२५॥
पच्छिम सूरज उगवै, उलटि गंग बह नीर।
कहो दूत पतिसाह सों, तौ हठ न तजै हमीर॥३२६॥

छप्पय छंद

दियौ पद्म रुषिराज करौं जब लग मैं सोइय।
जो गढ़ आयो निमत साह रक्खै नहिं कोइय॥
अनहोना नहिं होय होय होनी है सोइय।
रजिक[3] मौलि हरि हथ्थ इर सु मानव क्यों कोइय॥
नहिं तजूँ सेख को प्रण करिय सरन धरम छत्रिय तनों।
तन है चि चित्र महिमा तनो सत्य वचन गुरु तैं भनों॥३२७॥
चले दूत मुरझाय, दिल्लिय दिसि कियौ पयानो।
गढ़ रणथँभ हम्मीर साह वैसे कम जानो॥
हयदल पयदल सेन सूर वर वीर नवायौ।
हठी राव चहुवाँन वंस यहि हठ चलि आयौ॥
यहि विधि सु तुमहूँ घर लखै[4] हरे[5] सकल तुम वीर वर।
अब पतिसाह जु एक भुव[6] कै तुम कै जु हमीर वर॥३२८॥
सुनत दूत के वचन माहि जब मन मुसकाए।
कियो राज हम्मीर वरै हठ मोहि बुलाए॥

१ तंडै। २ तुव। ३ रिजक। ४ लिये। ५ हर्यौ। ६ भव।

फितेक गढ़ इक ठौर किते उमराव महाबल।
किते बाजि गजराज किते भट बंक महाबल[1]॥
तुम कहो सकल समझाय सुहिं किहिं हेतु इतै[2] गर्वहिं बढ़ै।
हम्मीर राव चहुवाँन के कितो[3] नृपनि[4] दल सँग चढ़ै॥३२९॥
हजरति राव हमीर बार बहुतैं समझायव।
सुनि महिमा को नाँम रोष करि राव रिसायव॥
करौं जुद्ध तिर सुद्ध साह दल खंडि बिहंडौं।
धरौं सीस हर कंठ सुजस तिहिं लोकहिं मंडौं॥
हम्मीर राव इम उच्चरै गही टेक[5] छांडौं नहीं।
तन जाहु रहै जिय सोच[6] नहिं लाज धरम खंडौं नहीं॥३३०॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनु दूत सु वैनं।
कहो[7] राव को पन भ्रम एनं॥
कितोक दल बल सूर समाजं।
कितेक गढ़ सामों धर राजं॥३३१॥
रहनीं करनीं प्रजा प्रतापं।
थानों[8] विरद[9] दाँन द्रव आपं॥
नीति अनीति ग्राम गढ़ कैसा।
सहर[10] सरोवर बाट जु जैसा॥३३२॥
सत्तरि सहस तुरंगम जानो।
दोय लक्ख पयदल भरमानो॥
सत्तपंच गजराज अमानो[11]।
होहि फीच मद बहत सुदानो[12]॥३३३॥

---

१ बड़ा दल। २ येत। ३ कितका। ४ दसम। ५ तेग। ६ लोम। ७ कहै। ८ थाना। ९ विर्द। १० सहस रोप बाग जु जैसा। ११ मानै। १२ दानै।

रनथभौर ग्वालियर चंका।
नरवल[1] औ चित्तौड़ सु तंका॥
रहै जपोरा गढ़ कै जेता।
अनगिन[2] वस्तु न जानत तेता॥ ३३४॥
तुरी सहस इकतीस सु सज्जै।
अरु गजराज असी मद गज्जै॥
सूर धीर दस सहस अमानो।
इते राव रणधीर के जानो॥ ३३५॥

दोहरा छंद

मेटि मसात (ट) जु सकल तहँ,[3] फीके[4] मन्दिर देस।
नॉग निवाज न होय जहँ, स्नान कथा हरि वेस॥३३६॥
नहिं कुराँन कलमा नहा, मुसलमाँन नहिं पीर।
च्यारि वरण आस्रम सुग्गी, देस हमीर सु धीर॥३३७॥
अपने[5] अपनै धर्म्म मैं, रहैं सवै नर नारि।
राजनीति पन तेजजुत, करैं राज[6] सुखकारि॥३३८॥
कर काहू पै होय नहिं, दुग्गी न काऊ दान।
आस्रम कित्ते नवीन[7] हैं, ऊँचे मन्दिर नोन॥३३९॥

पद्धरी छंद

रणथंभ दुग्ग बहु निकट[8] जानि।
तिहिं दरा च्यारि मग सुगम मानि॥
घाटी सु च्यारि अस्सी सु और।
हैं गै न चलैं अति कठिन ठौर॥३४०॥

---

१ नरवल मनु (मन) चीतोड़ सुतका। २ अगणत। ३ तिं। ४ फिरै। ५ अप्पन। ६ राज। ७ अनूप। ८ दीस, ईस, यत्नानुप्रास ९ दुर्ग बहु विधि सु।

सरवर सु पंच जल अगम सोय।
　　बहु रंग कमल फुल्ले सु जोय॥
चहुँ ओर नीर को नहिंन छेह।
　　परबत अनूप जल भरे एह॥३४१॥
सो इहै अगम पहुँचै न खग्ग।
　　गढ़ चढ़े पवन जहँ इक[1] मग्ग॥
अरु भरे दोय भंडार अन्न।
　　दस लक्ख कोरि दस सहस मन्न॥३४२॥
दस लक्ख सूत सन भरे संचि।
　　द्विप[2] दोय लक्ख भरि धातु खंचि॥
घृत सहस बीस मन भरे हौद।
　　दोय लक्ख पैद चहुँ गढ़न कौद+॥३४३॥
थिन तोल नोन[3] पर्वत सु तच्छ।
　　दस सहस अमल आफू* सुलच्छ॥
मृगमद कपूर केसरि सुगंध।
　　भरि रहे भौन सौंधे सुबंध॥३४४॥
नहिं तोल तेल लोहा प्रमान।
　　पारद्ध सुद्ध नव लच्छ आँन॥
अरु पतो जानि सीसो सु सुद्ध।
　　नव लक्ख धर्यौ संचय सुबुद्ध॥३४५॥
अरु इतो राय कै नित्त दाँन।
　　पँच तोलि पंच मुहरैं सुमानि॥
दस दोय धेनु तरुणी सु बच्छ।

---

१ एक। २ द्वय। ३ लवण।

+ कौद (कोद)-ओर। * आफू=अफीम।

सोवरन[1] सिंग सिंगार सुच्छ ॥३४६॥
यह अधिक जानि दीजे[2] सु विप्र।
उग्गंत सूर दिज्जे[3] सु छिप्र॥
जीमंत विप्र सब राजद्वार।
लंगर सु अनगिनित बटत सार॥३४७॥
बहु अंध पंगु अरु बधिर कोय।
सो करैं[4] भोज नृप कै सजोय॥
दस दोय अन्न मन परै और।
खग सकल चुगैं तहं ठौर ठौर॥३४८॥
गणनाथ आदि सब लसैं देव।
नृप आप[5] करत करि नमत सेव॥
सिव बसैं नंदि भैरव समेत।
भव भवा सबै परिकर समेत[6]॥३४९॥
द्रढ़ महा बंक गन्नेस गढ्ढ।
बिन मग्ग सकै पंछी न चढ्ढ॥
बड़ तोप सतरि गढ़ पै अचल्ल।
तब छुटत सोर पर्यंत[7] सुहल्ल॥३५०॥
छुट्टंत गर्भ सुकंत नीर[8]।
मन बज्रपात मुक्कत समीर॥
आसा सु नाँम राणी सु एक।
पतिव्रत्त धर्म्म देषी सु टेक॥३५१॥
रणथंभ नाथ सुत इक[9] पूर।
चंड तेज मनूँ ऊगत सूर[10]॥

१ सुवरन्न। २ दिज्जे। ३ दीजे। ४ सुइ करि भोजन। ५ अप्प। ६ सहेत। ७ पव्वय। ८ सुकंत नीर। ६ एक। १० चंदि तेज मनौं उग्गंत सूर।

रतनेस नाँम जम है बिख्यात।
चित्तोड़ दुग्ग पालै सु तात ॥३५२॥
सँग रहै सुभट थट विकट सग[1]।
को करै तिनहिं तै रणहि रंग ॥
तप तेज राव वृपभाँन जेम।
पर दुख कट्टन विकम सु तेम ॥३५३॥
देखंत[2] रूप मनु काँमदेव।
सुइ काछ बाछ निकलंक भेव ॥
अरु खेत जुरे नहिं देत पिट्ठि।
अरि लखत देखि नहि परत[3] दिट्ठि ॥३५४॥
वहु बाग चहूँ दिसि सघन हेरिं।
गंभीर गह्वर उपवन सु भेरि ॥
वहु अब[4] वृच्छ फल झुकत भार।
दाड़िम समूह निंबू अपार ॥३५५॥
बहु सेवराज जामुन समूह।
नारंग रंग महुवा समूह ॥
खिरनी सकेलि नारेल[5] वृंद।
खीरा कि चिरूंजी मधुर कंद[6] ॥३५६॥
कटहल कदंब बड़हल अनेक।
महुवा अनंत कदलि विसेक(ष)[7] ॥
तहँ मोलसिरी सोहैं गँभीर।
माघी सकेत सोहंत धीर[8] ॥३५७॥
फुलवारि गुंज अति भ्रमर होत[9]।

---

१ बिकट थट्ट रह सुभट संग। २ पिक्खत। ३ परम। ४ आम्र। ५ नरियल। ६ कंजे। ७ ऊभरि अनत धोटा सु एक। ८ मधि किते सरपूँ (सहं) सोहंत कीर। ९ फुलवारि मौर गुंजार होत।

प्रफुलित[1] गुलाब चंपा उद्योत ॥
कहुँ[2] रहे केतिकी वृंद फुल्लि ।
अहि भ्रमर गंध सहि रहे भुल्लि ॥३५८॥
कहुँ रहे केवरा जुही जाय ।
संदुप्प[3] ओर संभो सु आय[4] ॥
आचीन नरगिस औ असोक[5] ।
पाटल[6] मचमोलिय बोलि कोक[7] ॥३५९॥
एला लवंग अंगूर बेलि ।
माधुज्ज लता माधुरी केलि ॥
तरु ताल तमाल रु ताल ओर ।
ता मध्य कमल अरु कुमुद भोर ॥३६०॥
चहुँ ओर मधन पर्वत सुगध ।
जलजंत्र छुटै उच्चे सबंध ॥
पिक मोर हंस चकवा विहंग ।
सुक चाय(त)क कोकिल रमत सग ॥३६१॥
चहुँ ओर वाग बारी अनूप ।
तिहि मध्य दुर्ग रणथभ भूप[8] ॥३६२॥
यह दूत के वचन सुनि दरवार कियो ।[9]

छप्पय छंद

क्या हमीर मगरूर पलक मैं पाय लगाऊँ ।
खूनी महिमा साह उसे गहि दिल्लिय लाऊँ ॥

---

१ फुल्लित । २ बहु । ३ संदूप । ४ सब्बो सु आम । ५ आचीन नग रसा (नरगसा) औ असोक । ६ पाडल । ७ सतवर्ग और श्रीखंड कुंद, किंसुक सुमालती सेवतिहिं मद । मधुवन बसत सिंगार हार, मोतिया मदनसर फुले—र । ८ मध्य दुग्ग दुर्ग सुभूप । ९ दूत के वचन सुने तब पातसाह ने दर्बार कर्यो ।

जाति राव हम्मीर तोरि गढ़ धूरि मिलाऊँ।
इतौ जो न अब करूँ[1] तौ न पतसाह[2] कहाऊँ॥
केतोक राज[3] रणथंभ को इतो कियो अभिमॉन तिहिं।
कोपि[4] साह भेजे जबै दर्मो देम फर्मान जिहिं॥३६३॥
सुने दूत के बचन साह जिय सका आइय।
चढ़ौ कोपि विन समुझि वहाँ कैसी बनि जाइय॥
हार[5] जीति रब हाथि[6] आप समत जग होई।
तातैं मत्री मित्र मत्र[7] द्रढ़ किज्जिय[8] माई॥
यह जानि साह दीवाँन किय खॉन बहत्तरि इक[9] हुव।
यह हठ हमीर को सुन्यौ तब रक्खे सेख मरन्न भुव॥३६४॥
ऑम खास उमराव सबै पतिसाह बुलाए।
राजा राणा राव खॉन सुलतॉन सु आए॥
हठ हमीर मुझि कर्व सेख सरनै निज रक्ख्यौ।
दियौ दूत कौ ज्य व बचन बहु अनवन भक्खौ॥
सब तत मंत जानो सु तुम देस काल बुधि इष्ट ध्रुव।
जिहिं जाहु[10] जाहु जम बुद्धि है कहो[11] निति[12] उत्तम सु भुव॥३६५॥
कहै सकल उमराव ईम तुम सम नहिं कोई।
तेज प्रतापऽरु बुद्धि और दूजो नहिं कोई[13]॥
फिर फिर जो फरमॉन राव कौ करा जु लिक्खिय।
जो उपजै यहि बार सोइ प्रभु आपनु अक्खिय[14]॥
चढ़िए सिकार गीदड़ तणी तऊ सिंह के बाँधि[15] सर।

१ हरौं। २ मैं साह। ३ गढ़। ४ कुप्पि साह पठए जबे देस देस फुरमॉन जिहिं। ५ हारजित्ति। ६ हत्थ। ७ पूँछि। ८ कीजे। ९ एक। १० जाहि जाहि। ११ कहा। १२ नीति। १३ गाहि तुम जानत साई (नहिं होई)। १४ करिय प्रभु अप्पन अक्खियय, लिक्खिए, अखिए अंत्यानुप्रास। १५ बंधि।

फिरि लरो मरो[1] संदेह नहि तत मत यह ही सुबर ॥३६६॥
महरम खाँ उज्जीर माह सों ऐसैं भापै[2]।
चहुवाँनन की वात सवै अगली मुख भापै[3]॥
पहले हसन हुसैन सयद[4] चहुवाँन सुपेले[5]।
सात वेर प्रथिराज गहे गवरी गहि मेले[6]॥
वीसल दे अरु पिरथ ये जह पीर करे अजमेर हनि[7]।
महरम खान् इम उच्चरै असो वस चहुवाँन गनि[8] ॥ ३६७॥
गीदर सिंह सिकार, साह[9] एकौ मति जानो।
रणतभँवर दिस भला[10], आप मति करो पयानो॥
वहाँ राव हम्मीर, और रणधीर अमानो।
अरु सामत अनेक, अधिक तें अधिक वखानों॥
वहु दुग्ग[11] वक रणथंभ गढ़[12], यह विचारि जिय लिज्जिए।
तुम अलावदी पीर अति, आप मुहिम्म न किज्जिए ॥३६८॥

दोहरा छंद

वहु दुग्ग वरु रणथंभ वड़, तुम अलावदी पीर।
दुहूँ करामाति सम गनो, आप और हम्मीर ॥३६९॥

छप्पय छंद

कालवुत को[13] मंत्र, एक हजरति वनवावो[14]।
ताहि मारि तजि रोप, कहा जिय क्रोध वढ़ावो॥
लगैं प्राण धन दोउ, तवै वाजी कोउ पावै।

---

१ मिलो। २ भक्खै। ३ चहुवाँनन की वत्त सब्ब अग्गलि मुख अक्खै। ४ सैद। ५ पिल्लिय। ६ साह गोरी गहि मिल्लिय। ७ वीसल दे अरु पिरथ वड़ पीर करिय अजमेर हनि। ८ पन। ९ सोइ यह इक न जानो। १० भुल्लि। ११ दुर्ग। १२ बड। १३ को। १४ वनवायौ, वढ़ायौ अंत्यानुप्रास।

तजे खेत जस[1] जाय, बहुरि कछु हाथि न आवै ॥
सूली सरन हमीर कै, रह्यौ दीन जानै दोऊ।
किज्जे मुहिम्म नहिं रार पै, या मैं तो सुख है सोऊ ॥३७०॥
मिस्र देस खंधार, खरे[2] गज्जिनि[3] दल आये।
अरु काबिल खुरसॉन, कोपि पतिसाह बुलाये ॥
रूम स्यॉम कसमीर, और मुलतॉन सु सज्जे।
ईरॉ तूरॉ कटक, बलक आरब धर गज्जे[4] ॥
सब[5] देस रुहग फिरग कै, भक्खड के सज्जे सुबल।
अल्लावदीन पतिसाह कै, चढ़े सग टिड्डी सु दल ॥३७१॥
चढ़े हिंद के देस, प्रथम सोरठ गिरनारी।
दखरा[6] पूरब देस, लए दल बद्दल[7] भारी।
अरु पहार कै भूप, और पच्छिम कै जानो।
दसों दिसा के बीर, कहा कोउ नॉम बखानो ॥
ग्यारा सै अठतीस[8] ये, चैत्र मास द्वितिया प्रगट।
चढ्ढे सुसाह अल्लावदी, करि हमीर पर कटक भट ॥३७२॥

भुजंगप्रयात छद

चढ़े साहि कोपे[9] सु बज्जे निसॉन।
चढ़े मीर गंभीर सथ्थ[10] सुजॉनं ॥
उड़ी रेणु आकास सुज्झै[11] न भॉनं।
धरा मेरु डुल्लै सु भुल्लै दिसॉनं ।३७३॥
सहै सेस भारं न[12] पारं न पावै।
डगै कौल दिग्गज्ज[13] अग्गै सुधावै ॥

---

१ सन। २ खड़े। ३ गजनी, गज्जनि। ४ ईरान त्वैर औ बलख ठठा (ठढ) मग्गर से गज्जे। ५ सब देस रुहेलरु फिरँग रूम भगड़ा कै सज्जे सुबल। ६ दक्खिन। ७ बल अति। ८ अठिसिये। ९ कोप। १० सथै। ११ सूझै न नैनं। १२ सम्हारं न पावै। १३ दिग्ग सु अग्गै।

मनो छाड़ि[1] वेला समुदं उमड़े
फिये[2] हैं दलं पयदल रथ्थ तडे ॥३७४॥
चढ़े सत्त लक्ख सु हिंदू सयन्नं।
सबै बीस लक्ख मलेच्छं[3] अयन्नं ॥
तहाँ डाक[4] एकं सहस्स दुपच ।
चले बेलदारं लख च्यारि संचं ॥३७५॥
चले एक[5] लक्खं सु अग्गं[6] सु सोलं।
अलीखॉन हिम्मत्ति दोऊ हरोलं ॥
चले वाणियाँ संग व्यापार भारी।
सु तो दोय लक्ख गिणै संग सारी ॥३७६॥
चली लक्ख च्यार सु संग भिठारी ।
पकावैं सुनॉन सबै कॉमवारी ॥
खर[7] गोखर यों चले दोय लक्खं।
फिरैं च्यारि लक्ख गसत्ती[8] सु रक्खं ॥३७७॥
दुआ गीर इक्कं[9] सु लक्ख सु चल्ले ।
सु तो लगरं सो सदा खॉन मिल्ले ॥
अरब्बी लखं दोइ चल्ले सु संगं।
रहे तोपखाने सदा जंग जंगं ॥३७८॥
भरे ऊँट बारूद डेरा सुभारी ।
सु तो तीन लक्खं सजे संग सारी ॥
चले सहस पंचं मतंगं सु गज्जं।
मनो पावसं मेघमाला सु रज्जं ॥३७९॥
लसैं वैरखं सो मनौं विज्ज[10] भारी।

---

१ छंडि । २ कियं, किते । ३ मुमिच्छ । ४ तहाँ पै कड़ाकं । ५ इ[illegible]
६ आगं । ७ गोखरं गोरसंगी । ८ गसती । ९ एकं । १० बीज ।

वरै दॉन वर्षो मनो भुम्मि[१] कारी ॥
लसै उज्ज्वल दंत वग पंक्ति मानो ।
इती साह की सेन सज्जी सुजानो ॥३८०॥
गर्जत निसॉनं सु सज्जंत भानो ।
मनू पावस मेघ गज्जैं सु मानो[२] ॥
सबै सेन सज्जी चढ्यौ साहि कोप ।
सबै पच[३] चालीस लक्ख सु श्रोप॥३८१॥
तहाँ तीस[४] हज्जार निस्सॉन[५] वज्जैं ।
सु तो घोर सोर सुने मेघ लज्जैं ॥
सताईस लक्ख महावीर वके ।
टरै नाहिँ जंग भए तॉम ह्रके ॥३८२॥
परै[६] जोजन अट्ठ[७] श्रौ दोय फौजं ।
कटे वक वन्न हटे नाहिं रोज ॥
चढ़ं वव्वटं वाट थट्टे[८] सु चल्ले ।
मनो सायर[९] छंडि[१०] वेला उगल्ले॥३८३॥
जले सुक्किय[११] नीर नाना सुथाँन ।
वहैं श्रौघट घाट ट्टटंत[१२] मॉनं ॥
कियौ कूच कूच[१३] चले मार धारं ।
परयो जोर हम्मीर के देस तारं ॥३८४॥
भजे भुम्मियाॅ भुम्मि चल्ल श्रपारं ।
गए पर्वत[१४] वक मैवास * भारं ॥

---

१ भूमि । २ मानो, जानो । ३ पाँच । ४ तीन । ५ नीसाँन । ६ परी । ७ आठ । ८ थाटे । ९ सायरं । १० छॉडि । ११ सोखियं । १२ टूटंत । १३ कुच कुचं । १४ पव्वत, पव्वयं ।

*मैवास (मेवासा)=किला ।

सबै राव हम्मीर कै देस माहीं।
भए वीर सधीर जुद्ध समाहीं ॥३८५॥
विहाँ[1]वीचि मलहारणी इक[2] गड्ढ।
लरे राव कै रावत जोर दड्ढं॥
दिना तीन लौं सो कियौ जुद्ध भारी।
फते[3]पातसा की भई वैनकारी[4] ॥३८६॥
चले अग्ग[5] साहं सु सेना हँकारी।
सुनी राव हम्मीर कुप्पे[6] सु भारी॥
किये रक्त नैनं भृकुटी[7] क्रूरं।
लख्यौ रावत जोर उट्ठे जरूर ॥३८७॥
परी पक्खरं वाजि राजं सु सज्जे[8]।
बजे नद्द निस्साँन[9] आकास लज्जे[10]॥
तबै राव हम्मीर कौ सीस नाए।
बिना आयुसं साह पै वीर धाए।।३८८॥
जुरे आय जुद्ध न दीजौ वनास।
चढे लक्ख चालीस औ पाँच तासं॥
इतै राव हम्मीर कै पच[11] सूर।
अभयसिंह पम्मार रट्ठार भूरं ॥३८९॥
हरीसिंह बग्गेल कूरम्म मीर।
चहूवाँन सद्दूल[12] अजमत्त सीम॥
त्रिभागै करी सेन वागैं उठाई।
मिले वीर धीरं अमीर हटाई ॥३९०॥

---

१ तहाँ विचि। २ एक। ३ भते। ४ वनकारी (वनकारी)। ५ अग्र। ६ कोपे। ७ भ्रकुटी। ८ साजे। ९ नीसाँन। १० लाजे। ११ पाँच। १२ सार्दूल।

दोहरा छंद

पंच[1] सूर हम्मीर के, बीस सहस असवार[2] ।
उत सब दल पतिसाह को, बज्जौ परस्पर सार ॥३९१॥
नदी बना सज उप्परै, रत्ति[3] बसिय पतिसाह ।
प्रात कुच्च[4] नहिं करि सके, आय जुटे[5] नरनाह ॥३९२॥

पद्धरी छंद

चढ़ि चले[6] साह हरयल मभीर ।
तिहिं जुटे राव कूरम सबीर[7] ॥
बग्घेल हरीसिंह अतिय बंधि ।
चंदे(दो)ल पयादे भिरिव सधि ॥३९३॥
बिच गोल साह को, जित्तो सुद्ध ।
त्रिन सूर राव कै करि[8] न जुद्ध ॥
यहि भाँति पंच रावत अभग ।
पतिसाह सेन सौं जुटे जंग ॥ ३९४॥
कम्मॉन स्रवन लगि करि कसीस ।
मनु प्रगट पथ्थ भारथ्थ सीस ॥
सर बरसत पावस मनो नीर ।
बहु बेधि कवच धर परत धीर ॥३९५॥
लगि सेल अंग नहिं पार होत ।
ससि झारि[9] घटा मैं करि उदोत ॥
फिरयाँन बहँ करि करिव क्रोध ।
धर परत सीस धर उठत[10] जोध ॥३९६॥

---

१ पाँच । २ अस्वार । ३ राति मभे । ४ कूँच । ५ जुटिय, जुटिग । ६ चलिय । ७ तहँ जुटिउ (जुटिग) राव कूरंम बीर । ८ करे । ९ मोरि । १० उठित, पुढत ।

लगि होत कटारिय अग पार।
प्रासाद उच्च कै खुले द्वार॥
बहु खजर पजर करत पार[1]।
ऊची जु उठी सु तो रुहिर[2] धार॥३९७॥
मनु पर्व्वत तैं, गेरू पनार।
बहि[3] चलो[4] अग तैं सोन[5] धार॥
बहु घायल घुम्मत बहुत घाव।
मनु केसिव[6] किंसुक तरु सुहाव॥३९८॥
चल परी साह दल मैं अपार।
हा हत सद्द[7] भौ दल मँझार॥३९९॥

दोहरा छद

भगिय[8] सेन पतिसाह की, लुटा जु रिद्धि अपार।
तब मरहम खाँ साह सौं, अज करी[9] तिहिँ बार॥४००॥
हजरति देस हमार को, निपट अटपटो जानि।
भिल्ल कौल तस्कर सबै, और किरात सुमानि॥४०१॥
सजग रहा निसि द्यौस सब, गाफलि रहो न मूर।
हनिय सेन सब अप्पनिय[10], तीस[11] हजार सपूर॥४०२॥
घायल की लेखौ नहीं, हथ्थिय[12] परे सु बीस।
परे बाजि सब ड्यौढ[13] सत, सुनि जिय अचरिज दीस॥४०३॥
परे राव के बीर दस, घायल पच पचीस।
अभय[14] सिंह पम्मार च, भयौ घाव दस साम॥४०४॥
जाय जुहारे राव को, कही चमू की बात।
तब हमीर सब तैं कही, बाहर लरो न तात॥४०५॥

१ पार। २ रुधिर। ३ बहु। ४ चलिय। ५ रुधिर। ६ के सुव। ७ सब्द। ८ भगी। ९ करी अरज। १० आपनी। ११ तीन०। १२ हाथी। १३ ड्योढ सौ। १४ अभय साहि पम्मार इक।

छप्पय छंद

तब सु साह करि कुच्च[1], चले[2] रणथंभहिं आए।
सकल सु सकित हियैं[3], मीर उमराव सुभाए।
जल थल पावरि मैन ऐन[4] चहुँ ओर सु दिक्खव।
चढ़ि अगार इक उच[5] राव बहु भाँति न लक्खिव॥
चहुवाँन राव हड़ हुड[6] हस्यो[7] हेरि सैन इम उच्चरयो[8]
पतसाह किधौं सोहा जुगर मानो एक टाँडो परयो[9] ॥४०६॥

दोहरा छंद

फिरि पतिसाह हमीर को, लिखि पठए[10] फरमाँन।
अजहूँ[11] हिंदू समुझ तुव, मिलि तजि सब अभिमाँन॥ ०७॥

छप्पय छंद

मैं मक्के[12] को पीर दिली पतिसाह कहाऊँ।
हिंदू तुरक दुराह[13] सबै इक सार चलाऊँ॥
बीर च्यारि अरु पीर रहैं मुझ पर[14] चौरासी।
महिमा साहि न रक्खि राव मति करै जु हाँसी।[15]
तुम समुझि सोचि[16] जिय अप्पनैं[17] कहा तोहि फल ऊपजै।
परचंड लाय उठठे जु सिर इक[18], सेव को नहिं तजै॥४०८॥
फिर हमीर फरमाँन साहि कौं उलटि पठायौ।
हजरति छत्री धर्म्म सुन्यौं नहिं स्रवनन गायौ॥
तुम मक्के के पीर सूर सुरलोक कहाऊँ।
तुम सरभर नहिं हसम साहि पल मैं[19] जु नसाऊँ॥

---

१ कूँच। २ दुग। ३ हीय। ४ एन। ५ ऊँच। ६ हर,हर। ७ हँसिव। ८ उच्चरिव। ६ परिव। १० भेजिय। ११ अनहूँ। १२ मक्का। १३ दाउ राह। १४ पै। १५ महिमा साहि हमीर राखि मति करै जु हाँसी। १६ देखि। १७ आपनै। १८ एक। १६ माँझ।

नहिं तजौं टेक छंडूँ[1] न पन यह विचार निह्चै[2] धर्‌यौ[3] ।
छिन भंग अंग लालच कहा सुजस खोय जीवन कर्‌यौ[4] ।४०९।

दोहरा छंद

जैत छाँडि जोगी कहा, सत छंडै[5] रजपूत।
सेख न सौंपों साह कौं, जब[6] लग सिर साबूत ॥४१०॥

छप्पय छँद

हजरति नई न करूँ करूँ जैसी[7] चलि आई।
मुसलमॉन चहुवाँन सदा ऐसी[8] बनि आई॥
ख्वाजे मीरॉ पीर खेत अजमेरि गिसाए।*
असी सहस इक लक्ख बहुरि[9] मक्का न दिखाए[10] ॥
बीसल दे अजमेर गढ़ सो नंगरा साको कियव।
नन धरिय सुंदरी कँवरि सो साह बहुत लालच दियव ।४११॥
प्रथीराज बर सात साहि' गवरी गहि छड्‌यौ।
कर चूरी पहिराय दंड करि कछुव न मंड्‌यौ॥
ता पिच्छै गढ़ दिल्ली साहि गौरी चढ़ि[11] आयव[12] ।
रेण[13] कुमार अपार जुद्ध करि सुर पुर धायव[14] ॥
चहुवाँन वंस अवतंस जो खग्ग[15] त्यागि नाहिन मुर्‌यौ[16] ।

---

१ त्यागूँ। २ निश्चय। ३ धरिव ४ करिव। ५ छाँड़ै। ६ जौलौं।
७ ऐसी। ८ तैंसे। ९ उलटि। १०, दिखाए। ११ चलि। १२ आए।
१३ रमण। १४ धाए। १५ खाग। १६ मुड़्‌यव।

* असुर मारि अजपाल चहूँ दिशि चक्र चलाए।
बीसल दे अजमेरि पाय मँडलीक लगाए॥
बीरम दे जालोर गढ सो नगरै साकौ किद्दर।
नन धरी जीम सुंदरि कुँअरि साहन दीत... ॥

छंडूँ[1] न टेक यह बिरद मम सेख रक्खि[2] जंगहिं करयौ[3] ।४१२।

तजै सेस जो भुम्मि मेरु चल्लै[4] धर उप्पर।
उलटि गंग बह नीर सूर उग्गै[5] पच्छिम भर॥
धुव चल्लै आकास समद मरजाद सुछंडै।
सतीसंग पति कढै बहुरि घर आय[6] सुमंडै॥
थिर रह्यौ न यह संसार कोइ सुनो साहि साखी सु धुव[7]।
दसकंध धरणि अज्जुन जिसा स्वप्नहिं[8] सम दिक्खंत[9] भुव॥४१३॥

दोहरा छंद

कलि मैं अमर जु कोइ[10] नहिं[11], इसम देखि नहिं भूल।
तुम से किते अलावदी, या धरती[12] पर धूलि[13] ॥४१४॥
अपने कौ सूर न गिनै, कायर गिनै न और।
अपनी कीरति आप[14] मुख, यह कहबौ नहिं जोर ॥४१५॥
लिखे लेख करतार कै, हजरति मेट[15] न कोय।
को जाणै रणथंभ गढ़, अब यह कैसो[16] होय ॥४१६॥

चौपाई छंद

लिखे हमीर साहि सब[17] बचे।
करि मन कोप जंग कों नंचे॥
तीन सहस नीसाँन सु बज्जे।
धर अंबर मग[18] सोर सु गज्जे॥ ४१७॥
रणतभँवर चहुँ ओर सु घेरिव।
दल न समात पुहमि सब हेरिव॥

---

१ छाड़। २ रासि। ३ मुरौं, करौं अल्पानुप्राप। ४ चलहि। ५ उग्गहि। ६ आपु। ७ सुनो साखि यह सारि धुव। ८ सुपन। ९ दीसंत। १० को। ११ नहीं। १२ धरनी। १३ धूरि। १४ अप्प। १५ मौति। १६ साको। १७ सो। १८ मधि।

किन्न[1] निरोध क्रोध करि बुल्लिव।
देखो कुबुधि हमीर सु भुल्लिव ॥ ४१८ ॥
जब हमीर हर मंदिर आए।
बहु विधि पूजि सु वचन सुनाए ॥
धूप दीप आरती उतारी।
संकर की अस्तुति उच्चारी ॥ ४१९ ॥

नाराच छंद

नमामि ईस संकरं, जटी पिनाकयं हरं।
सिवं त्रिसूल[2] पाणियं, विभुं प्रभुं सुजाणियं ॥ ४२० ॥
त्रिनैन अग्गि[3] भालयं, गलै[4] सु मुंडमालयं।
भवानि[5] बाम भागयं, ललाट चंद्र लागयं ॥ ४२१ ॥
धरैं[6] सु सीस गंगयं, कपूर गौर अंगयं।
सुयंग[7] संग फुंकरैं, सु नीलकंठ हुँकरैं ॥ ४२२ ॥
गणं गणेस सांधुयं, कि वीरभद्र जांधुयं।
प्रसीद नाथ बेगयं, करो कृपा सु मे जयं ॥ ४२३ ॥
सहाय नाथ किज्जिए, अभै सुदॉन दिज्जिए।
अलावदीन आययं, मलेच्छ[8] संग ल्याययं ॥ ४२४ ॥
सुलक्ख बीस सातयं, चढ़े सु कुप्पि[9] गातयं।
प्रताप तेज आपकै, मिटे कुकम्मं पाप कै ॥ ४२५ ॥
सरन्न सेव आययं, करो सहाय पाययं।
उमा सु नाथ नाथयं, गहो सु मोर हाथयं।
छुटंत लाज गड्ढयं, सत्रन्न द्रड्ढय[10] ॥ ४२६ ॥

---

१ कीन। २ त्रिलोक। ३ अग्नि। ४ गरै। ५ मगा सुबाम भागयं। ६ दरैं। ७ भयंग। ८ मलेच्छ बंस भाइयं। ९ कोपि। १० दिड्ढयं।

दोहरा छंद

सिव स्वरूप उर धारि कै, मूँदि[1] नयन धरि ध्यॉन।
यह अस्तुति नृप की सुनी, भय प्रसन्न वरदाँन ॥ ४२७ ॥
कहैं संभु हम्मीर सुनि, कीरति जुग जुग तोर।
चौदह वर्ष जु साहि सौं, लरत विघ्न नहिं और ॥ ४२८ ॥
यारै अरु[2] द्वै वरष परि, सुदि असाढ़ सनि सोइ।
एकादशी जु पुष्य कौ, साको पूरन होइ ॥ ४२९ ॥
यह साको अरु जस अमर, फबै तोहिं कलि माहिं।
छत्री को जुग जुग धरम, यह समाँन कछु नाहिं ॥ ४३० ॥
हरप सहित[3] हम्मीर तव, ईस चरण दिय सीस।
तव मंदिर तैं निकसि कै, करी जुद्ध कौं रीस ॥ ४३१ ॥
संकर कह्यौ हमीर सौं, सुनहु राव ध्रुव साखि।
सहस सूर तेरे जहाँ, परैं मलेच्छ सु लाख[4] ॥ ४३२ ॥

चौपाई छंद

राव हमीर दिवाँन कराए।
मंत्री मित्र[5] बंधु सव आए ॥
सूर बीर रावत भट[6] बंके।
स्वामि धर्म्म तन मन तिन हंके ॥ ४३३ ॥
काछ वाछ द्रढ़ वज्र सरीरं।
माया मोह न लोभ अधीर[7] ॥
अमृत वचन सवन तैं भक्खे[8]।
जाचत आपुन प्रॉन[9] न रक्खे[10] ॥ ४३४ ॥
नाना[11] विरद वंदि विरदावैं।

१ मुदि। २ वारा सै। ३ सहीत, सहित्त। ४ श्राखि। ५ मंत्र। ६ मड। ७ अमीरं। ८ माखे। ९ जीव। १० राखे। ११ बाना।

लक्ख लक्ख[1] के पटा जु पावैं ॥
काको वीर राव रणवीरह।
कर्यो जुहार राव हम्मीरह ॥ ४३५ ॥
आयस होय करब मैं सोई।
देखो[2] राव हाथ[3] मम जोई॥
काके कन्ह[4] करी जस आगै।
कनवज कमध्वज सों रँग[5] पागै॥ ४३६ ॥
कहै हमीर धीर सुनि बानी।
तुम जु कहो सो मोहिं न छानी॥
अब गढ़ कोट हसम पुर जेते।
तुम रक्षक[6] हम जॉनत तेते॥ ४३७ ॥

दोहरा छंद

मैं पहले पतिसाह सों, कही बात[7] करि टेक।
सो अब चौरै[8] साहि सों, करौं जंग अब एक॥ ४३८॥

त्रोटक छंद

चढ़िए करि कोप हमीर मनं।
करि दिड्ढ सगड्ढ सम्हारि पनं॥
बहु तोप सुसिद्ध सँवारि[9] धरी।
बुरजैं बुरजैं धर धूम परी ॥४३९॥
बहु कंगुर कंगुर बीर अरे।
सब द्वारन द्वारन धीर[10] परे॥
सब ठौरन ठौरन राखि[11] भरं।
चढ़िए गजपै चहुवान नरं ॥४४०॥

---

१ लाख लाख। २ देखहु। ३ हथ्थ। ४ कहूँ। ५ रिस पागै। ६ रच्छक। ७ नत्त। ८ चौरह। ९ सँवार। १० बीर धरे। ११ रक्खि।

बहु वीर हमीर सुसंग चढ़े ।
गजराजन उप्पर छंद बढ़े ॥
करि डंबर अंबर सीस लगे ।
मनु सोवत धीर सबीर जगे[1] ॥४४१॥
बहु चंचल बाजि करत्त खुरी ।
तिन उप्पर पक्खर सोज परी ॥
नर जाँन जवाँन लसैं दल मैं ।
रन मैं उनमत्त लसैं बल मैं[2] ॥४४२॥
बहु दुंदुभि बज्जत[3] घोर घनं ।
निकसे तब राव करन्न रनं ॥
बहु बारन बारन बीर कढ़े ।
गज बाजि सु सिंदन* जान चढ़े ॥४४३॥
लखि साह सनम्मुख कोप कियं ।
रणथंभ चहूँ दिसि घेर लियं ॥
मिलि राव हमीर सु साहि दलं ।
बिफरे बर बीर करंत हलं ॥४४४॥
सर छुट्टत फुट्टत पार गजं ।
सु मनों अहि पच्छय[4] मध्य रजं ॥
तरवारि बहैं कर पानि बलं ।
धर मध्य धरैं धर हक्क खलं[5] ॥४४५॥
मुख अग्ग[6] बढ़े रणधीर लरैं ।
तिनसों पतिसाह के बीर अरैं ॥

१ गजे । २ नर धीर मनं दरसै बल मैं । ३ बाजत । ४ पन्नय । ५ धर सीस परैं सिरहाँक खलं । ६ अग्र ।

*सिंदन=स्यंदन, रथ ।

अजमंत[1] महुम्मद इक अली ।
तिन संग असीसु सहस्स चली ॥४४६॥
तिहिं द्वंद अमंद विलंद कियौ ।
'रणधीर महा रण मेलि लियौ ॥
करि कोप तवै रणधीर मनं ।
वर वैन कहै पन धारि घनं ॥४४७॥
महिमंद[2] अली मुख आय जुरयौ ।
दुहुँ बीर तहाँ तब जुद्ध करयौ ॥
अजमंत कमाँन लई कर मैं ।
रणधीर के तीर फल्यौ उर मैं ॥४४८॥
रणधीर सु कोपि कै साँगि लई ।
अजमंत कै फूटि[3] कै[4] पार गई ॥
परियौ अजमत सु खेत जबै ।
महमंद अली फिरि आय[5] तबै ॥४४९॥
रणधीर सु कोपि कै वैन कहै ।
कर देखि अबै मति भुलि[6] रहै ॥
किरवाँन सु धीर के अंग दई ।
कटि टोप कछू सिर माँझ[7] भई ॥४५०॥
तब कोप कियौ रणधोर मन ।
किरवाँन दई महमंद तनं ॥
परियौ महमंद अमंद वली ।
तब साहि कि सैन सबै जु हली ॥४५१॥
लुथि[8] लुथ्थि परैं बहु बीर अरैं ।
बहु खंजर पंजर पार करैं ॥

१ अजमत्ति । २ महमद्द । ३ फुट्टि । ४ रु । ५ आयौ । ६ भूलि । ७ माँहि । ८ जुथि ।

धर सीस परै करि रीस मनं।
　　कर पॉव कटै बहु कीन पनं ॥४५२॥
यहि भाँति भिरे चहुवॉन बली।
　　मुरि साह की सेनि सु भग्गि चली[१]॥
बलखी जु परे जु हजार असी।
　　लखि कालिय अट्ट सु हास हँसी ॥४५३॥
चहुवाँन परे इक जो सहस।
　　सुरलोक सबै बर बीर बसं ॥४५४॥

दोहरा छंद

असी सहस[२] बलखी परे, महमद अजमत खाँन।
तहाँ राव रणधीर कै, परे सहस इक ज्वॉन ॥४५५॥
भजी[३] फौज सब[४] साह की, परे मीर दोइ बीर।
करे याद पतिसाह तब, गज्जनि गढ़ कै पीर ॥४५६॥

चौपाई छंद

भजिय[५] फौज साह की जबहीं।
　　फिरो फिरो बानी कह सबहीं ॥
तहाँ साह करि कोप सु बुल्लिव।
　　समर भुम्मि अब छंडि सुचल्लिव ॥४५ ॥
सरबसु खाय भोग करि नाना।
　　अबे परम प्रिय लागत[६] प्राना ॥
समर विमुख तैं जानब जोई।
　　हनूँ[७] आप कर तजों न सोई ॥४५८॥
सुने साह कै कोप[८] सु बैनं।
　　फिरिय सैन इम मंत्र सु ऐनं[९] ॥

---

१ हली। २ हजार। ३ भगी। ४ जब। ५ भागी, भाजी। ६ लग्गत। ७ हनौं। ८ कोपि। ९ फिरी सैन इर्क मत्त सु ऐनं।

बगतर पक्खर टोप सु सज्जिय ।
जुरे जंग बहु मीर सु गज्जिय ॥४५९॥

दोहरा छंद

बादित[1] खाँ पतिस्याह सों, करी सलाँम सु आय ।
हजरत देखहु[2] हाथ[3] मम, कैसी करूँ[4] बनाय ॥४६०॥

पद्धरी छंद

करि[5] कोप बादित्त खाँ जुरे जंग ।
मनों प्रलै पावक उठे अंग ॥
गुंजत निसाँन फहरात धुज्ज ।
जुटि जिरह टोप तन नैन सज्ज[6] ॥४६१॥
किए[7] हुकम साह तन मैं रिसाइ ।
किन्हौ सु जंग फिर बीर आइ[8] ॥
छुटंत[9] तोप मनु बज्रपात ।
जल सुकि धरा छुटि गर्भ जात ॥४६२॥
बहु बॉन चलत[10] दोउ ओर घोर ।
अररात[11] अमित मच्यौ महा सोर ॥
भए अंध धुंध सुज्झै न हथ्थ ।
बीर बहुबॉन तहाँ[12] करि अकथ्थ ॥४६३॥
रणधीर उतै बाघत्ति खॉन ।
बजरंग अंग जुट्टे सुयॉन ॥
हज्जार बीस बादित्य साथ[13] ।

---

१ बदितखाँ । २ पिक्खहु । ३ हथ्थ । ४ करौं । ५ करि कोप जुरे, जुरिय, जुर्यउ, जुरिग बादित्य जग । ६ जुटि जिरह जिरै तहँ नैन सुज्झ । ७ किय । ८ सहनाय मरै बज्जे तनक्क । नहु घोर (चहुँ ओर) सोर कै करत हक्क । ६ छुट्टत । १० छुटि दुहुँ । ११ अरांत (ट) अमित मच्यौ सु सोर । १२ जुज्झ कीनौ । १३ सत्थ ।

सम जुरे आय रणधीर हाथ[1] ॥४६४॥
घज्जंत सार गज्जंत अब्भ ।
रणधीर सथ्थ आये स सब्भ[2] ॥
करि क्रोध जोध बाहंत सार ।
टूटंत[3] अंग फूटंत[4] पार ॥४६५॥
करि सेल सेल दोउ[5] ओर वीर ।
बाहंत वीर किरवाँन धीर ॥
हज्जार बीस बद्धत साह[6] ।
धर परे बीर करि अकथ गाह[7] ॥४६६॥
रणधीर मीर दोउ भिरे आइ ।
बाबत्त गहि गुर्ज तब रोस बाइ ॥
लग्गी सुढाल भू टूटि[8] ताँम ।
फिर[9] दई सीस किरवाँन जाँम ॥४६७॥
लग्गी सु सीस धर पर्यौ जाय ।
दुइ टुक[10] होय भुमि[11] अद्ध काय ॥४६८॥

दोहरा छंद

भयौ सोच जिय साह कै, जीतिय[12] जंग हमीर ।
बादित खाँ से रन परे, बीस हजार सु बीर ॥४६९॥
महरम खाँ कर जोरि कै, करै अर्ज तिहिं बार ।
लै कर सेख हमीर अब, किसो(?) मिल्यौ यहिं बार ॥४७०॥
गही तेग तुम सौं अबै[13], हठ नहिं तजै हमीर ।
सेख देय मिल्लै नहीं, पन सच्चो[14] वर वीर ॥४७१॥

---

१ हत्थ । २ सब्ब । ३ टुट्टंत । ४ फुट्टंत । ५ दुहुँ । ६ साथ सत्थ । ७ गाथ, गत्थ । ८ तुट्टि, फुट्टि । ९ फिरि धीर दई । १० टूक । ११ भुंमि । १२ जित्यौ, जित्यउ, जीत्यौ । १३ तबै । १४ साँचो ।

छप्पय छंद

कर कुराँन गहि साह सीस साहिब कौं नायौ[1]।
गढ दिस[2]दल चहुँ ओर घेरि रज अंबर छायौ॥
देखि अलावदि साह कहे दल बहुत भारी।
अब हमीर की अदलि[3]आय पहौंचीह सुसारी॥
महरम्म खॉन इम उच्चरै अदलि हाथ[4]साहिन तनै।
होनहार[5] हुँहै अबै को जानै कैसी बनै ॥४७२॥

दोहरा छंद

हजरति अपने इष्ट पर, पावक जरत पतग।
यह हमीर कबहुँ न तजै, मेरा टेक रणथंभ[6] ॥४७३॥
साह दसों दिसि जित्ति कैं, अब आए[7] रणथंभ।
कहै[8] राव रणधीर सों, जुरौ सूर रण रग ॥४७४॥
अप्पन[9] धर्म न छडिए, कहै बात[10] रणधीर।
निसि वासर अब साह सों, किज्जिय जग हमीर ॥४७५॥

छप्पय छंद

को कायर को सूर द्यौस[11]बिन द्रष्टि[12] न आवै।
बिन सूरज की साखि सार छत्री न समावै॥
बीर गिद्ध[13] अरु सभु सकल पलहारी जेते।
घर पर घरैं न पाँव रैन मैं दिनचर जेते[14]॥
इम कहै राव रणधीर सौं मैं अधर्म्म नाहिन[15] कहूँ।
अब अलावदी साह सौं रैन सार कबहुँ न गहूँ ॥४७६॥

---

१ नाये । २ देसल । ३ अदलि रही चँद रोज सुसारी । ४ हत्थ । ५ का होनहार । ६ गढ जग । ७ आइय । ८ कहै राव हम्मीर तैं धीर जुड़न रणथ्रम । ९ अपणो । १० बत्त । ११ दिवस । १२ दिस्ट । १३ ग्रद्ध । १४ तेते । १५ नहींन ।

दोहरा छंद

घाटी घाटी साह के, माटी मिलत अमीर ।
राव जंग दिन में करै, राति लड़ै रनधीर ॥४७७॥
तारागढ़ के पीर की, करै याद पतसाह ।
रणतभँवर की फते[1] दे, कदमूँ आऊँ चाह ॥४७८॥

छप्पय छंद

जबहीं मीरा सयद साह की मदत पठाए ।
सिर उतारि कर लिये राव परि सम्मुख धाए ॥
जब हमीर की भीर न्यारि सुर सुद्ध सु आए ।
... ... ॥
गणनाथ संभु दिनकर अवर छेत्रपाल मन रंज्जिए[2] ।
रणथंभ खेत दुहुँ ओर सों बीर पीर दुव सज्जिए ॥४७९॥

छंद भुजंगप्रयात

लरै नो सयद्द रणथ्थंभ[3] देवा ।
करै क्रोध भारी पिलै हर्ष भेवा ॥
गरज्जंत[4] घोरंत आतंक भारी ।
घनै घोर[5] वर्षंत वर्षा करारी ॥ ४८० ॥
कभू हल्लवै भुम्मि गज्जंत बीरं ।
कभू घोर अंधार वर्षंत पीरं ॥
गणन्नाथ हथ्थं लिये तिक्षि फर्सी ।
पिनाकी पिनाकं किये आप दर्सी ॥ ४८१ ॥
धरे मुद्गरं हथ्थ[6] भैरव अमानो ।
इसे देव जुट्टे सु कट्टे अमानो ॥
इतैं पीर हजरत्त कै सथ्थ[7] पिल्ले ।

---

१ विजय । २ रंजिए । ३ सयदं रणथम्भ । ४ गर्जंत, गज्जंत । ५ घाय । ६ हाथ । ७ साथ ।

अबदल्ल एकं[1] हुसैनं मुमिल्ले ॥ ४८२ ॥
रहीमं सयदं, मुलतॉन जक्को।
अहमद् कानीर सूलं सु मक्की ॥
इतैं वीर जुट्टे सु कट्टे पुरानं।
भयौ जुद्ध भारी सु मूले[2] कुरानं ॥ ४८३ ॥
परे खेत नो सैद[3] दट्टे धरन्नी।
हँसे संकरं भैरवं की करन्नी ॥
परे पीर यूं नौ रसूलं सु अल्ली।
पर्यौ पीर दूजो कुनव्व सु चल्ली ॥ ४८४ ॥
पर्यौ जो हुसैनं कर्यौ जुज्झ[4] भारी।
परे हेरि हिम्मत्ति अल्ली सुधारी ॥
सयदं मुलत्तॉन आयौ जु मक्का।
अदल्ली परे और तुर्की सु वंका ॥ ४८५ ॥
पर्यौ दूसरो जो रसूलं सु खेतं।
तबै बादस्याहू भयौ सो अचेतं ॥
परे मीर नौ सैद जानंत साहं।
लरे अट्ठ वीरं हटै चैन काहं ॥ ४८६ ॥
अजंमत्त भारी हमीरं सु जाना।
तबै कुच्च किन्नो टरे छाड़ि फानी ॥
उलट्टे परे जोय किन्नौ दिवाँनं।
जुरे खाँन जेते सु तेते अमाँनं ॥ ४८७ ॥
वजीरं अमीरं सबै खाँन बुल्ले।
सबै बात मंत्रं सु संत्री सु खुल्ले ॥ ४८८ ॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ उज्जीर तब, अरज करी सय खोलि[5]।

---

१ दकं । २ भुल्ले । ३ सयद, सद् । ४ जुद्ध । ५ खुल्लि ।

लख वलखी उमराव तो, सदकें भए हरोल ॥४८९॥
अरु यकसी के वचन सुनि, साह कियौ[1] अति सोच।
निवही राव हमीर की, गिनौ हमैं सब पोच[2] ॥४९०॥
महिमा साह हमीर गढ़, ये तीनों[3] साबूत।
थाजो रही हमीर की, मैं कायर[4] जु कपूत ॥४९१॥

छप्पय छंद

महरम खाँ कर जोरि साह[5] कौं ऐसैं भाख्यौ।
इक हिकमत तुम करो नीक जानो तो राखो[6] ॥
महल[7] छाड़ि करि फते बहुरि गढ़ सौं जुध[8] किज्जिय।
तोरि छाड़ि रणधीर मारि कै पकरि सु लिज्जिय[9] ॥
आतंक संक गढ़ मैं परै मिलै राव हठ छड्डि[10] कै।
गहि सेव देय मिलि सुत्तवै करो कुच जब उलटि कै ॥४९२॥

चौपाई छंद

कहै साह महरम खाँ सुनियो।
यह मत खूब किया तुम गुनियो[11] ॥
छाड़ि दरा कौ प्रथम दिल्ली[12] जे।
चंद रोज महँ फतह जु कीजे[13] ॥४९३॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ पतसाह को, हुकम पाय तिहि वार।
सकल सेन तजवीज करि, घेरी छाड़ि हँकार ॥ ४९४ ॥

छंद बियक्खरी

कोप पतिसाह गढ़ छाड़ि लगै।

---

१ कियव। २ सोच। ३ तीन्यू, दोऊ। ४ कातर। ५ तवै हजरति सो भाख्यौ। ६ रक्खौ भक्ख्यौ, रक्ख्यौ अंत्यानुभास। ७ पहल पहलै। ८ जंग कीजे। ९ लीजे। १० छाड़ि। ११ सुनिए, गुनिए अंत्यानुभास। १२ दिलिज्जिय। १३ किज्जिय।

सहस[1] सव तीन नीसाँन बग्गै ॥
सहस[2] दस सात आरब्ब छुट्टै ।
गरज गिरि मेरु पाषाण फुट्टै ॥४९८॥
उठत गुब्बार महि तोप लज्जो ।
गए बन छंड़ि[3] मृग सिंह भग्गै ॥
लक्ख[4] पच्चीस दल ओर फेर्यौ ।
यह भाँति पतिसाह गढ़ छाड़ि घेर्यौ ॥४९६॥
कहै पतिसाह नहिं विलम[5] किज्जे ।
चंद दिन[6] बीचि गढ़ छाड़ि लिज्जे ॥
कहै रणधीर मन धीर धरिए ।
आय चहुआण[7] सफजंग[8] करिए ॥४९७॥
निस्सॉन[9] सें सद्द[10] सुंदर सुबज्जै ।
रोष रणधीर आयुद्ध[11] सज्जै ॥
वीर रस[12] राग सिंधू स[13] बज्जै ।
सहस इकतीस दल संग लिज्जै[14] ॥४९८॥
सहस दस सूर कुल तेग[15] खेलैं[16] ।
अप्प जिय रक्खि परमाल[17] पेल्लैं[18] ॥
यह[19] भाँति रणधीर चौगॉन आए ।
गरद उड़ि जमी असमाँन छाए ॥४९९॥
अवदल्ल[20] कीरम्म[21] पतिसाह दिल्लै[22] ।

---

१ तीन सहस नीसाँन दल माहिं बग्गै । २ दो सहस आरब्बौ तेज छुट्टै । ३ छाड़ि । ४ लाख । ५ बिलम्ब (बिलंब) । ६ रोज । ७ चौगाँन । ८ सफरजंग । ९ नीसाण सौं साज सुर सद्द गज्जै । १० सब्द । ११ आवद्ध । १२ रण । १३ सिंधूल । १४ लज्जै । १५ तत्थ । १६ सिह्लैं । १७ परमार । १८ चिल्लैं । १९ इस । २० अबदुल्ल, अबदुल्ल । २१ करीम, करीम । २२ पेले ।

मीर रणधीर चौगॉन खिल्ले ॥
वहँ वाँन फिरवाँन[1] औ चक्र[2] चल्लैं।
रणधीर कह् सूर तुम होहु भल्लैं ॥५००॥
साह सों सूर समुक्ख जुरिए।
हवस के मीर दस सहस परिए ॥
टुट्टि[3] सिर मीर धड़ पहुमि[4] लक्खै।
पच सत सूर लड़ि गिद्ध[5] भक्खै ॥५०१॥
राव रणधीर अप्पन[6] सिधारे।
अबदुल्ल[7] कीरंम खाँ पुहमि पारे ॥
साह रणधीर सफजंग[8] जुरिए।
साह् दल उलटि दो कोस परिए ॥५०२॥
कहैं रणधीर नहि विलँम किज्जै[9] ।
वीति चँद रोज गढ़ छाडि लिज्जे[10] ॥
गढ़ कोटहू भाँति[11] नहिं हथ्यि[12] आवै।
यूं ही[13] पतिसाह दल क्यों खिसावै ॥५०३॥

दोहरा छंद

वर्ष पंच[14] गढ छाड़ि को, नहिं संवत् पतिसाह।
द्वादस वर्ष रणथंभ सों, निधरक लरि अब[15] साह ॥५०४॥

छप्पय छंद

धनि सु राव रणधीर साह मुख आप सराहै।
मुक्ख दिसि सम्मुख आय कोप करि मार समाहै ॥

---

१ वैयार। २ चक्क। ३ टूटि। ४ पौहम। ५ गिरध, गिर्ज। ६ आपन। ७ अनदुलकरीम खाँ पौहुमि पारे। ८ सपरजंग। ६ कीजे। १० लीजे। ११ कनहूँ। १२ हाथि। १३ कोपि। १४ पाँच। १५ पति।

साह वचन इम कहै मीर महरम खाँ सुनिजे[1]।
जीति[2] जग रणधीर धन्य वह राव सुभनिजे॥
पतसाह राडि सफजंग[3] की मनै करिय आपन[4] सवै।
चहुँ ओर जोर उमराव सब किये मोरचा द्रढ़ अवै[5]॥५०५॥
जवै[6] राव रणधीर कहै हम्मीर सुणिज्जे[7]।
सवै[8] हिंद को साथ बोलि[9] रणथंभ सु लिज्जे[10]॥
लिखि फर्मा नहुँ[11] राव वंस छत्तीस बुलाए।
जुरे जग चौगॉन उमंग दल वद्दल छाए॥
कर जोरि सवै हाजिर भए[12] राव वचन या[13] विधि कहै।
मैं गही तेग पतिसाह[14] सो घरि जाहु जौन जीवौ चहै॥५०६॥
कह काको रणधीर राव सुन वचन हमारे।
अवै छंडि[15] कित जाहिं[16] खाय करि निमक तिहारे॥
अलीदीन सौं जुद्ध छंडि गढ़ चौरै मंडों।
जिती साहि की सेन मारि खग खंड विहंडों॥
चाहूँ[17] सुनीर या वंस को अकथ गथ्थ[18] ऐसी करूँ।
रवि लोक भेदि भेटूँ सुभट छप्प[19] सीस हर हिय धरूँ॥५०७॥

दोहरा छंद

कहै राव हम्मीर सोँ, मंत्रि एक[20] रणधीर।
जमीति गढ़ चित्तौर की, अजहुँ[21] न आइय[22] वीर॥५०८॥
लिखि फर्मान हमीर तब, पठए गढ़ चित्तौर।
वंचि[23] खाँन वल्हन[24] कुँमर, हर्ष[25] कीन नहिं थोर॥५०९॥

१ सुनिए। २ जिति। ३ सफज्जग। ४ अप्पन। ५ सवै। ६ जब सुराव। ७ सुणीजे। ८ सभै। ९ राए। १० लीजे। ११ फ़ुरमाना। १२ अहे। १३ इम। १४ हजरत्ति। १५ छाड़ि। १६ जायँ। १७ चाहूँ। १८ गाथ। १९ आप। २० इक। २१ अजौं। २२ आए। २३ बाँचि। २४ वाल्हन। २५ हर्ष न किन्यउ।

चौपाई छंद

हर्षे उभै कुँमर चौहॉनं।
　　चतुरँग कै तुरंग सजि ऑनं॥
सोला सहस चमूँ सजि सारी।
　　सजे खॉन वल्हन[1] सी भारी॥५१०॥
सहस तीन[2] कमध्वज्ज सु जानो।
　　सहस अट्ठ[3] चहुवॉन वखानो॥
सहस पंच पम्मार[4] अमानै।
　　सोला सहस सजे करिवानै[5] ॥५११॥

मोतीदाम छंद

मिले तव आय कुमार सु दोय।
　　हमीर सुचाव कियौ बहु जोय॥
चढ़्यौ हिय हर्ष दुहूँ[6] उर सोय।
　　कहै[7] तन वैन सु राव सु होय॥५१२॥
कियौ सनमॉन सुराव अपार।
　　मिलत कुँवार[8] दयौ सिर भार॥
रख्यौ तुम सेव भए जग धन्य।
　　रहै नहिं कोय सदा जग अन्य॥५१३॥
रहै जग कित्तिय[9] निति अभंग।
　　सदा यह देह कहैं[10] छिनभंग।
जिते हम सेवक ज्यों अव ठड्ढ[11]।
　　रहो निहचित्त[12] अभै यह गड्ढ[13] ॥५१४॥
करैं हम जंग लखो अव हथ्थ।

---

१ वाल्हन। २ तीस। ३ आठ। ४ पॅव्वारन आनो। ५ किरवानो। ६ दहूँ। ७ *स्यौ सु उद्दार मिले वर दोय*। ८ कुँमार। ९ *कीरति*। १० नहीं। ११ अवदल। १२ रहे निश्चित। १३ गल्ह।

उठे दुहुँ वीर कही यह गथ्थ ॥
चढ़े चतुरंग कियो तन कोप।
मनों अरुनोदय भाँन सु ओप[१] ॥२१५॥
बजे रणतूर सु भेरि रबद्द।
भए पट गोमुख बीर सु सद्द ॥
चढ़े कुँवरेस सबै चतुरंग।
बढ्यौ हिय हर्ष, करै रणरंग ॥२१६॥
कहै तब खाँन सु वाल्हन सीह।
करे सफजंग अवैदल[२] बीह ॥
रतन्न कुमार रखो गढ़ ओर।
नरव्वल ग्वालिर ओर चितोर[३] ॥२१७॥
उठै तबं अन्न करो सफजग।
तजो मति टेक लरो[४] अनभंग ॥
असो सुनि वैन हमीर सुभाय।
भरे[५] जल नैन रहे मुरझाय ॥२१८॥
कही[६] तब कौर नहीं थिर कोय।
चले गिर मेरु नहीं थिर सोय ॥
मिले सुरलोक ससोक सकौन।
सुनी यह राव रहे गहि मौन ॥२१९॥
गए रणवास जहाँ दोउ[७] वीर।
कियौ परणाम जुहार सुधीर ॥
सबै[८] रणवास भरे जल नैन।
कही[९] तदि आसमती यह वैन ॥२२०॥
करो तुम[१०] उच्छह है यह वार।

---

१ चढ़ै तन नूर बढ़े मुख ओर। २ अनदल। ३ ओ चित्तोर लरो २ अमग। ५ ढरे। ६ कहै। ७ दुर। ८ सबै। ९ कहै। १०

कहे तदि[1] बैन हँसे जु कुमार ॥
धरो तुम सीस हमारे जु[2] मौर।
लरैं सिर सेहर बाँधि[3] सजोर[4] ॥५२१॥
बँध्यौ तब मौर कुमारन सीस।
दई बहु भाँतिन आस असीस ॥
कियौ बहु हर्ष कुमार अपार।
गए हर मंदिर सो तिहिं बार ॥५२२॥
गनेसुर संकर पूजि[5] सुभाय[6]।
करे बहु ध्यान गहे जब[7] पाय[8] ॥
चढे बरबीर बढ्यौ हिय चाव।
बजे बहु बाजि[9] निसानन घाव[10] ॥५२३॥
गजे असमाँन धरा हुव भाय[11]।
गजे[12] घनघोर घटा मनु छाय[13] ॥
तुरंग अनेक सुफेरत सूर।
बनी तिन उप्पर पक्खर पूर ॥५२४॥
झलक्कत नूर चमक्कत सेल।
चढ़े मुख ओप[14] बढ़े मुरु मेल ॥
उड़े[15] रज अंबर सुज्झ न भाँन।
हँसे हर देखत[16] छुट्टिव ध्याँन ॥५२५॥
चली सँग अच्छरि जुग्गनि ताँम।
मिली बहु पंखनि[17] गिद्धनि जाँम ॥
मिले बहु भूचर खेचर हूर।
चले पल चारिय भूत सुभूर ॥५२६॥

---

१ तब। २ सु। ३ बधि। ४ मोर। ५ पुज्जि। ६ सुभाइ। ७ तब। ८ पाइ। ९ बादि। १० हाव। ११ माइ। १२ गज। १३ छाइ। १४ नूर। १५ उठी। १६ दिक्खत, पिक्खत। १७ पक्खनि।

करे सु जुहार हमीरहिं ध्याय[1] ।
करो यह बात[2] परस्सि[3] सुपाय ॥
मिले भव आनि[4] सुनो चहुवाँन ।
करै फल रीति तजै नहिं बाँन ॥५२७॥
तजो[5] धन धाँम रु लोभ सु[6] मोह ।
धरो[7] मनु टेक सरन्न सुजोह ॥
इती कहि सीस नवाय हमीर ।
कियौ रणथंभहिं बंदन[8] धीर ॥५२८॥
चले सन्मुक्ख उभै कुमरेस ।
सजे चतुरंग तनय करि रेस ॥
जहाँ पतिसाह अलावदि थौर ।
चली[9] बर बीरति[10] बाँधि[11] सुमौर ॥५२९॥

दोहरा छंद

करि असुवारी, कुमर दोउ, उतरे पौलि सु आए ।
डेरा करे उछाहजुत, बजि नोबति नीसाए[12] ॥५३०॥
सुणि नोबति के नाद[13] तब, यहु उछाह गढ़ जाँन ।
तब अलावदी हसम दिसि, चाहत भयौ निधाँ(दा)न ॥५३१॥
बोलि खाँन सुलताँन तब[14], मसलति करी जु[15] साहि ।
गढ़ मैं कहा उछाह अति, कहा (कौन) सबब यह आहि ॥५३२॥
हैं यह राव हमीर के, लघु भय्या[16] के पूत ।
लरन काज[17] इन सेहरो, सिर बाँध्यौ[18] मजबूत ॥५३३॥
भइय संक पतिसाह[19] उर, कीनौ[20] बहुत बिचार ।

---

१ करे जहाँ राव हमीरहिं ध्याम (धाम)। २ बत्त । ३ परसि । ४ मिलै भव आन । ५ तजै । ६ रु । ७ धरै । ८ चदन । ९ चले, चढ़े । १० वीरमु । ११ बधि । १२ अप्रमाण । १३ नद । १४ सब । १५ सु । १६ भ्राता । १७ कज । १८ बध्यौ । १९ यति । २० किन्नौ ।

जौन सिंह के मुख चढ़ै, सो झिल्लै इन सार ॥५३४॥

चौपाई छंद

कहै वजीर साह सुनि वत्तं।
मीर अरब्बिय[1] जानि सु तत्तं॥
मर्कट बदन[2] सूकर सम[3] कानं।
द्रग मंजार वेसू खल जानं[4] ॥५३५॥
तुम[5] साँमत प्रथ्विराज सु अग्गैं।
गढ़ गज्जनि आए[6] गहि खग्गैं॥
तुमहिं दिल्ली के तख्त बसाए[7]।
गौरीसा कै भए सहाए ॥५३६॥
वै[8] दोउ कुमर पकरि अब लावैं।
सन्मुख होइ तो[9] मारि गिरावैं[10]॥
सुनि वजीर के बचन सुहाए।
मीर जमालखाँन बुलवाए[11] ॥५३७॥
कहैं साह सुनि मीर जमालं।
है यह काम तुम्हारे हालं॥
आगैं[12] तुम गहियो प्रथिराजं।
त्यौं[13] तुम गहो कुँमर दोउ आजं ॥५३८॥

छप्पय छंद

सुणि जमाल खाँ मीर हथ्थ[14] धरि मुच्छ सँवारिय[15]।
पाव परसि कर जोरि कवन यह काज[16] निहारिय[17]॥

---

१ आरब्बी। २ मुख। ३ सुक्कर इव। ४ द्रगमजार बपुष (क्) खल जानं (जानहु)। ५ तिहि सामत। ६ गजनी लाये। ७ बैसाये, बठाये। ८ वैलुव कुँमर पकरि गहि ल्याऊँ। ९ तोयसो। १० गिराऊँ। ११ बुलाए। १२ अग्गै। १३ तिम। १४ हाथ। १५ बकारिय। १६ कज्ज। १७ निकारिय।

जौ आयुस अनुमरौं सकल हिंदुव गहि लाऊँ।
सम्मुख गहैं[1] जुमार मारि तिहिं धूरि मिलाऊँ॥
इम[2] कहि सलाँम कीनी[3] तुरत मज्जि[4] सथ्थ सय[5] अप्पवल।
सजि कवच टोप कर मग्ग गहि उभै ओर किन्निय सुहल[6] ॥५३९॥

भुजंगप्रयात छंद

इतैं कुमर[7] चत्रंग[8] कै जंग जुट्टे।
उतै मीर आरब्ब कै वीर छुट्टे॥
दुहूँ ओर घोरं निसाँनं सु बज्जं।
मनों पावसं मेघ घोरं सु गज्जं ॥५४०॥
दुहूँ ओर छंडं प्रचंडं सुभारी।
छुटे नाल गोला बँदूकं सुभारी॥
भयौ सोर घोरं धुँवा घोर घोरं।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं[9] नैन ओरं ॥५४१॥
करैं सेल सेलं महावीर वंके।
फुटैं अंग अंगं करैं दोय हंके॥
बहैं तेग अंगं करैं टुक[10] टोई[11]।
हँसी कालिका देखि[12] कौतुक सोई[13] ॥५४२॥
वहैं[14] जम्म दंढ्ढं करैं वाहु जोरं।
कढै[15] अंत अंतं[16] कहूँ सीस तोरं॥
कहूँ हथ्थ मथ्थं परे वीर वंके[17]।
उठैं रुंड मुंडं करैं जोर हंके[18] ॥५४३॥

---

१ गहूँ। २ यह। ३ किन्नी। ४ सजे। ५ सह। ६ बजे सुवीर सिंदुर, (सिंधुर) वदन उभै ओर किन्निय (कीनी, कीन्ही) सुलह। ७ कुँवर। ८ चतुरंग। ९ नहीं। १० टूक। ११ दोऊ। १२ दिक्खि, पिक्खि। १३ सोऊ। १४ चहैं। १५ गहैं। १६ अँतैं। १७ बक्के। १८ हक्के।

उतै मीर जम्मील ध्यायौ हँकार।
इतै खाँन धायौ भिरयौ इक[१] वार॥
उतै मीर तीरं चलायौ हँकारी।
लग्यौ वाजि कै सो भयौ वारि पारी॥५४४॥
परयौ खाँन को वाजि फुट्टी[२] सु अंगं।
चढ़े और वाजी करयौ फेरि जंगं॥
दई खाँन जम्मील[३] के अंग बच्छी।
परयौ भुम्मि मीरं सुतो आय मुच्छी॥५४५॥
दोउ सैन देखैं भिरे वीर दोई।
भए लथ्थ बथ्थं कुमारं सु सोई॥
परयौ जोर भारी कुमारं सु जान्यौ।
तवै राव हम्मीर उप्पर सुठान्यौ॥५४६॥
लियौ बोलि संखोदरं सूर सोऊ[४]।
करो ऊपरं[५] जाय कुम्मार दोऊ[६]॥
महावीर[७] अज्जॉन वालग्घु (वालक) सूरं।
महायुद्ध[८] जानैं इतो बै करूरं॥५४७॥
चले सूर संखोदरं खेत आए।
उतै आरवीसेन[९] द्वै[१०] लक्ख धाए॥
उड़ैं बॉन गोला गजं वाजि फुट्टैं[११]।
वहैं बॉन कम्मॉन ज्यों मेघ बुट्टैं॥५४८॥
धरैं[१२] आयुधं[१३] वीर सों वीर बुल्लैं।
परैं सीस भू मैं[१४] किती[१५] सीस भल्लैं॥

१ एक। २ फूट्यौ। ३ जम्माल। ४ सोई। ५ उप्परं। ६ सोई। ७ महाबीर अजाँन बाहू लघु सुसूरं। ८ कहा। ९ सेख। १० दोउ, है (अश्व)। ११ फूटैं। १२ भरैं। १३ आवच। १४ भुम्मी। १५ किती धूम भुललैं।

कहै खाँन कुम्मार बैनं हँकारी ।
मुनो सबै सथ्थं करो जुद्ध भारी ॥५४९॥
रहै नाँम लोकं महा मुक्ति मिल्लै ।
रहै नाहिं कोई सदा आय[1] मिल्लै ॥
चलाए गजं कोपि[2] कुम्मार सोई ।
उतै आरबी मीर जम्माल[3] होई ॥५५०॥
तबै मीर वालख्खी कोप किन्नौ ।
महा[4] तेग जम्माल कै मध्य (सीस) दिन्नौ ॥
कश्यौ टोप ओपं लगी जाय मध्यं ।
तबै मीर वालख मय लुथ्य वध्यं ॥५५१॥
कटारं कुमारं चलायौ[5] सु मारी[6] ।
परयौ मीर जम्मील सू मैं[7] सु धारी ॥
सबै सथ्थ जम्माल की कोपि[8] धायौ ।
तहाँ वालखं मारि धरनी गिरायौ[9] ॥५५२॥
तबै खाँन कुम्मार धायौ[10] रिसाई ।
घनी सेन आरब्ब धरनी मिलाई[11] ॥
तबै मीर संगोदरं जंग[12] कीनौ ।
किते आरबी खेत पारयौ नवीनौ ॥५५३॥
किते सेल सेलं करैं धार पारं ।
भभक्कं घटं धाव छुट्टैं पनारं ॥
वहैं तेग वेगं परे[13] सीस भारी ।
तहैं घोर रुंडं परैं मुंड कारी ॥५५४॥

---

१ आप । २ कुप्पि । ३ जम्मीर । ४ हनै तेग (लग्ग) जम्मील कै अंग दीनौ । ५ लगायौ । ६ मुम्मि. । ७ धारी । ८ कुप्पि, जम्मील को देखि । ६ मिलायौ । १० धायें । ११ गिराई । १२ जुद्ध । १३ परी ।

परे दोय कुम्मार किन्नो[1] अकथ्थं।
धरी अच्छरी सूर लोकं सु मथ्थं॥
परे मीर आरब्य कै पोन लक्खं।
तहाँ हिंद की भीर सौरा सुभक्खं[2] ॥५५५॥
परे दो कुमारं महाबीर वंके।
परे एक[3] संखोदरं कीन[4] हक्के॥
तहाँ आठ[5] हज्जार चहुवाँन जाँनं[6]।
परे तीन हज्जार कमधज्ज[7] माँनं॥५५६॥
पँमारं परे पाँच[8] हज्जार सोई।
परे वीर सोला सहस्सं सुजोई॥
परे स्वामि कै कज्ज[9] कुम्मार दोई।
सुनी राव हम्मीर जीते सु सोई॥
भजे आरबी ज्यों वचे[10] जंग तेयं।
कहै साह देखो सु हिंदू अजेयं॥५५७॥

दोहरा छंद

परे सहस सत्तरि तहाँ, मीर अरब्बिय[11] संग।
हय गय पाँच हजार परि, सत जमाल से अंग[12] ॥५५८॥

छप्पय छंद

तब सु राव रणधीर साहि पै[13] तेग समाही।

---

१ कीनी। २ सोरा सुसत्थ। ३ इक। ४ किन्न। ५ अट्ठ। ६ ज्वाँनं। ७ राठ्यौर, रठौर। ८ पंच। ९ काँम। १० रहे। ११ आरबी।
१२ तहाँ परे सोरह सहस दुहूँ कुँवर कै सत्थ।
बरी इते तहँ अप्छरा (अच्छरी) धरे हार हर मत्थ।
पाँच बरस गढ छाड़ि कै लरे राव रणधीर।
तब अलावदी कोपि कै कहे बचन तजि नीर।
१३ साहि सौं।

समो[1] सु पहोँच्यो आय सु वो मिट्टै नहिं काही ॥
चढ़े खेत रणधीर साहि दोनू[2] वतराए।
तजै न हठ हम्मीर कहा जो तुम सत[3] आए ॥
रणधीर राव इम उच्चरै समुझि साहि चित लिज्जिए।
गढ़ रणथंभ हमीर को हजरति हट्ट न किज्जिए ॥५५९॥
कहै साहि रणधीर राव को किन समझावो।
करो राज रणथंभ सेख[4] को कदमोँ लावो ॥
होनहार सो भई मिटे मेटी न मिटाई।
घटै हटै हठ राव तवै हमारी पतिसाई ॥
नहिं तजै[5] राव हठ मैं तजौं कौन[6] साह मो सोँ कहै।
यह प्रगट वत्त[7] संसार[8] महि भिरैं दोय एकै[9] रहै ॥५६०॥
कहै राव पतिसाह सुणो रणधीर अमानो।
इतो राज तुम करो जितो हम सोँ नहि छानो ॥
ये[10] गढ़ च्यारि सु धीर हुकुम किसकै तुम पाए।
कबहुँक[11] फिरे रकेब सीस कबहूँ नहिं[12] नाए ॥
गिरि सूरज पलटै पहुमि कोटि (रि) वचन कह कोय[13]।
सेख छाड़ि उलटो फिरै यह कबहूँ नहिं होय[14] ॥५६१॥

दोहरा छंद

चढ़े साहि दल विपुल जय, छेकिव[15] गढ़ रणधीर।
तब चहुवाँन रिसाय कै, संमुख जुड़े[16] सु धीर ॥५६२॥

---

१ संमत। २ दोउ। ३ वतराए। ४ मेख गहि कदमु लाओ। ५ नन तजै। ६ कै मद्दाय मोसौं (हमसन)। ७ बात। ८ सारी मही। ९ इकै। १० यह। ११ कबहुँन। १२ ननवाए। १३ कोऊ कहो। १४ सेख छंडि उलटौ फिरौं तौ मोहिं साहि जग को कहो। १५ छिकिव। १६ जुट्टिग, जुट्टिय।

छंद त्रोटक

रणधीर चढ़े करि कोप मनं।
सब सामंत सूर सजे अपनं॥
गजराजन उप्पर डंबरयं।
उछले[1] लगि बीर सु अंबरयं॥२६३॥
बहु चंचल बाजि सु बग्ग[2] लियं।
फिय अग्ग[3] सु पैदल लाग कियं॥
गढ़ तैं बहु भाँति[4] सु तोप चली।
पतिसाह[5] समेत सु कोप चली॥२६४॥
रणधीर सु बंधन[6] दुग्ग[7] कियं।
करि मंगल बिप्रन दाँन दियं॥
रबि कौ परणाम सु कीन[8] तबै।
कर जोरि सु आयसु माँगि[9] जबै॥२६५॥
अरु राव हमीर जुहार कियं।
हर्षे[10] चहुवाँन सु मोद हियं[11]॥
बहु दुंदभि ढोल सुभेरि बजे।
कसि आयुध सायुध बीर सजे॥२६६॥
हलका करि बीर बढ़ै दल पैं[12]।
मनु राघव कोपि कियौ खल पैं[13]॥
उत साहि हुकम्म कियौ रिस मैं।
सब सेन जु आय जुरयौ छिन मैं[14]॥२६७॥
थिफरे सब बीर सुधीर मनं।
सब स्वामि सु धम्मं सु कीन[15] पनं॥

---

१ उससे। २ बाग। ३ अग्र। ४ भाँतिन। ५ पतिसाहि सुसैन सुकंप हली। ६ बंदन। ७ दुर्ग। ८ किन। ९ मगि। १० बरसे। ११ दियं, जियं। १२ मैं। १३ पल मैं। १४ जुर्यौ निस मैं। १५ किन्न।

दुहुँ ओर सु तोप सु कोप[1] छुटे।
गढ़ कोट न रूँधत[2] पार फुटे ॥५६८॥
धरपै धर आगि[3] सु धूम उठा।
झर अंधर भुम्मि कराल बुठी॥
बहु गोलन गोलन गोल परे।
गजराजन सौँ गजराज जुरे[4] ॥५६९॥
हय सौँ हय पयदल पयदल सौँ।
जुरे[5] बहु जोध महाबल सौँ॥
बहु[6] वाँन दुहूँ दल माँझ परैं।
धर सीस कहूँ कर पाँव झरैं ॥५७०॥
बहु सोर अँधार सु घोर भयौ।
निसि बासर काहु न जानि[7] लयौ॥
कर कुंडिय[8] धीर कमाँन कसैं।
गज बाजिन फुट्टत पार लसैं ॥५७१॥
बरषैं मनु पावस बुंद अयं।
बहु फुट्टत पक्खर[9] कंगलयं॥
तहँ लागत[10] सेल सु पार हियं।
मनु श्रोन पनारन तैं बहियं ॥५७२॥
लगि तेग करैं दुव टुक[11] तनं।
जिमि[12] सीस परैं तरबूज [मनं॥
तहँ साह सु सेन मुरक्कि चली।
चहुवाँन तबै करि कोप बली ॥५७३॥
मुरक्की पतसाह तनी जु अनी।

---

१ कोपि। २ दक्कत। ३ अग्गि। ४ मिरे। ५ जुरिये, जुट्टिये। ६ चहुवाँन। ७ शान लह्यौ। ८ कुंडल, कुंडलि। ९ पाखर। १० लग्गत। ११ टूक। १२ जिन, जिहिं।

मुख[1] वात सवै पतसाह भनी ॥
करि कोप तवै पतिसाह[2] कहै ।
मुहिं जीवत सेन सु भज्जि[2] चहै ॥५७४॥
वकसी तव आय सलाम कियं ।
लख रूमिय अप्प[3] सु संग दियं[4] ॥
रणधीर तवै सनमुक्ख पिले[5] ।
वकसी करि कोप सु ओप मिले ॥५७५॥
गुरजैं रणधीर के सीस दई ।
तिन ढल्ल सु उप्परि[6] ओट लई ॥
वरछी रणधीर सु अंग दियं ।
धर फुट्टि[7] सु वाजि[8]को पार कियं ॥५७६॥
हय[9] तैं वकसी धर माँहि पर्‌यौ ।
तिहिं[10]संग सु मीर पचास गिर्‌यौ[11]॥
इक रूमिय धीर सूँ आय जुर्‌यौ ।
फिर वाँन लिये मन नाहिं मुर्‌यौ[12]॥५७७॥
रणधीर इतैं उत खाँन वलं ।
लथ वत्थ भए दुख देखि दलं ॥
रणधीर कटार सूँ पार कियौ ।
बलखाँन सु तेग जु कंध दियौ ॥५७८॥
सिर टुट्टत[13] धीर उठ्यौ धड़यं ।
बलखाँनहिं आय गह्यौ करयं ॥

---

१ मुख वाह सुवाह सु साह भनी। २ भाजि । ३ आप । ४ सनमुक्ख मुई द्विय (सुहिंदुव) पिल्लि दिय (पैंपिलियं)। ५ लियं। ६ ऊपर। ७ फूट। ८ सुबाज कै। ९ गज तैं। १० तब सोंगि (संगि) सुधीर सु मीर अर्‌यौ। ११ परे, गिरे—अंत्यानुप्रास। १२ लस पाँच लिये मन माहिं मुर्‌यौ। १३ टुट्टत।

भरि मध्य सु हथ्य पछारि पलं ।
हिय पार कटार किये सु खलं ॥५७९॥
लख एक स रुमिय खेत परे ।
रणधीर •सुरुंड भरे खपरे ॥५८०॥

चौपाई छंद

परयौ खेत बकसी यह भारी ।
और संग दल वीस हजारी ॥
मीर पचास संग तहँ सूते ।
इक लख रुमि विहस्त[1] पहूँचे[2] ॥५८१॥
तीस सहस रणधीर सु[3] सगी ।
परे खेत वर धीर उमंगी ॥
धीर[4] रुद्द है पहर सु नच्यौ ।
एक सहस हनि गज जस संच्यौ ॥५८२॥
टूट्यौ गढ़ सु छाड़ि कों मोई ।
सुनी खबरण हम्मीर सु जोई ॥
तब आपन तन मन धन जान्यौ ।
छत्री मगल मरन बखान्यौ ॥५८३॥

दोहरा छंद

फस ऊजरो[5] चैत्र सुदि, तिथि नौमी सनिवार ।
ीस सहस छत्री परे, अनला जरीं हजार ॥ ५८४ ॥
ो कनवज फाके फरी, करी छाड़ि रणधीर ।
रप सोच सम करि दोऊ, चक्त भए[6] जु मीर ॥ ५८५ ॥
ज इकसठि दो लप तुरी, छप्परि[7] वीस अमीर ।
ो कहता मोई करी, धन्य राव रणधीर ॥ ५८६ ॥

१ मिस्ति । २ पहुचे । ३ है । ४ धीर युद्ध करि रुड न नच्यौ ।
पाख उनारी । ६ भयउ । ७ उपरि ।

छप्पय छंद

इते मीर रण परे साहि पट मास सम्हारे।
तबै दूत इक आय साहि सौं वचन उचारे॥
जिते देव हिंदवॉन डिगत को धीर चँघावै।
जिनकी पूजन करै राव निस दिन मन लावै॥
थर दियव राव हम्मीर कौं आपन मुख संकर सरिस।
टूटै न गढ्ढ रणथम्भ सुनि अभै किये चौदह बरिस॥४८७॥

दोहरा छंद

दल लख सत्ताइस तहाँ, घर(न)नि समावत मीर।
सूखत[1] सर सरिता विमल, कूप बावरी नीर॥४८८॥
तिथि नौमी आसोज सुदि, कर गहि तेग रिसाइ।
सुरमंदिर करि कोप सब, चढढि[2] अलावदि साइ॥४८९॥
हाथ जोरि गन्नेस कूँ, कहै राव हम्मीर।
करो मदति चाहन जवन, अलादीन दलमीर॥४९०॥

चौपाई छंद

सुनत[3] वचन हमीर कै सोई।
कोपे[4] जुद्ध देव कौं जोई॥
जब संकर काली हरगानी।
निज[5] समाज बोले मृदु बानी॥ ४९१॥
चौसठि जोगनि भैरव नच्चैं।
कर धरि चक्र त्रिसूल सु रच्चैं॥
बाजे[6] डिमरु वीर चढ़ि[7] आए।
तबै साहि सौं जंग रचाए॥ ४९२॥

---

१ सुकत। २ चढ्यन। ३ सुन तत बत्त राव की सोई। ४ कुप्पिय देव जुद्ध कौ जोई। ५ निज मुक्ख सुबुछिय मृदु बानी। ६ बज्जिय, वज्जिं। ७ जुरि।

चल्लै चक्र त्रिसूल सु नेजा।
सक्ति, पास धनु बाँन धरेजा॥
हल मूसल अंकुस मुद्गर वर।
परिघ सेल लै धाए परिकर॥ ५६३॥
कीनौ जुद्ध वीर सब सज्जे।
संकर सरस कतूहल[1] सज्जे॥
सबै साहि की सैन सुभाई।
सबै परस्पर करैं लराई॥ ५६४॥
बजि बाजंत्र अनेक सु वीरं।
डैरव संख भेरि पट हीरं॥
मार मार चहुँ दिस सुनि बानी।
फटे लाख[2] आल्हन पुर जानी॥ ५६५॥

छप्पय छंद

तब सब देव गणेस विघ्न बड़ दल मैं किन्नव।
कितौ म्लेच्छ को संग सस्त्र आप अप्पसु[3] किन्निव॥
उठे सकल ललकारि कीन्ह घमसाँन[4] सुभारिय।
रुंड मुंड परि रुंड सेन दो लक्ख सँघारिय॥
देखंत नयन पतसाह तब अति अद्भुत कौतुक भयउ।
हिम्मत्त बहादुर अलो पर उभै लाख सेनह हयउ॥५६६॥
यह चरित्र लखि साहि कूँच[5] आल्हनपुर[6] तैं करि।
तब फिर पलटे आय घेरि रणथम्भ सरिस भरि॥
करि देवन से दोप कहो कौने सुख पाए।
आगे[7] लख दल किते मारि हरि असुर खिपाए।

---

१ कुतूहल। २ लक्ख अल्हन। ३ आपस में। ४ घमसाण।
५ कुच्च। ६ अल्हणपुर। ७ अगै।

अब लरै मनुस मानुसन सों देव दैत्य आगे[1] किते।
यह जानि साहि सिर नाय करि आय[2] किए[3] डेरा उते ॥५६७॥

दोहरा छद

हठ[4] हमीर छाड़ै नहीं, हजरति तजै[5] न टेक।
सात मीर पतसाह के, गए बिसरि करि तेक ॥५६८॥
महरम खाँ तब इम कही, अब पिछतावति साहि।
हम बरजत रणथम्भ गढ़, चढ़ि आए तुम चाहि[6] ॥५९९॥
हजरति हिमति न छाड़िये, धरिये मन मैं धीर।
गढ़ नरगह चहुँ दिसि करो, कब लग लरै हमीर ॥६००॥

पद्धरी छंद

महरम्म आपनो[7] तजि सुसाहि।
ध्याए सुदेव हिंदवॉन जाहि॥
बहु बोलि विप्र पूजा कराहि।
करि धूप दीप आरति बनाहिं[8] ॥६०१॥
पद परसे दरसे सकल देव।
नैवेद्य पुज्य नाना सु भेव॥
कर जोरि साहि बंदन सुकीन[9]।
यह भॉति गवन डेरा सु लीन[10] ॥६०२॥
करि आल्हण[11] पुर तैं कूँच ध्याय।
रण के पहार डेरा कराय॥
गढ़ की निगाह कीनी[12] सु साहि।
आसग नाहिं कीनी[13] सताहि ॥६०३॥
करि मंत्र पलची दिय पठाय।

---

१ अग्गे। २ आनि। ३ किन, कियउ, किते। ४ हट्ठ हमीर न छंडही। ५ तजी। ६ साहि। ७ अप्पनो। ८ कराय, बनाय अत्यानुप्रास। ९ किन। १० दिन। ११ अह्लण। १२ किन्नी। १३ किन्नौ।

तुम को सुकहत समुझाव[1] राय ॥
दै सेख छाड़ि[2] हठ मिलि सुराव।
परसो सुआय पतसाह पाँव ॥६०४॥
इम सुनत राव मजरयौ सु अग ।
अत टरै केमि छत्री अभग ॥
तुव कहा कहूँ दूतै सुजानि ।
नन टरै वैन छत्री सुवानि ॥६०५॥
नहिं देहु सेख धन[3] करै केमि ।
पसु पंछी जे तजि सरण जेमि ॥
रणधीर कुँवर दोउ अति उदार ।
बालणसो तीजो खाँन सार ॥६०६॥
ते परे खेत रावत अभंग ।
अब कोन मिलि[4] राख्यौ प्रसंग ॥
तब दूत द्रव्य लै जाहु ओर ।
कहुँ[5] रही वात[6] फरमाँन तोर ॥६०७॥
मति आब फेरि भेजे सुसाहि ।
अब बिना जुद्ध नहिं उचित ताहि ॥
लै चल्यौ दूत ये खबरि ऐन ।
जा कहे साहि सों सकल वैन ॥६०८॥
सुनि वचन बाँचि फरमाँन सोइ ।
कहि साहि राव समुझै न कोइ ॥
उज्जीर देखि तजवीज कान[7] ।
रण को पहार अपनाय लीन[8] ॥६०९॥
चढ़्ढाय तोप तिहिं पर प्रचंड ।

१ समुझाव । २ छंडि । ३ प्रण(न) । ४ मिलि, मील, मेल । ५ कहा । ६ वत्त । ७ किन । ८ लिन ।

कीनी तयार गढ़ कौ अखंड ॥
पतसाह कहै महरम सुवत्त ।
तुम सुनो एक हम करी[1] चित्त ॥६१०॥
हम्मीर राव की तोप देखि ।
दग्गो सु आपनी तोप लेखि ॥
यह तोप फुटै गढ़ फते होय ।
सदेह कौन या मैं न सोय ॥६११॥
गोलम्मदाज तब करि सलाँम ।
दागी[2] सुतोप लखि ताव ताँम ॥
लग्गौ सुतोप कै गोल जाय ।
नुक्सॉन भयौ तिहि कछुक जाय[3] ॥६१२॥
यह सुनी स्रवण हम्मीर राय[4] ।
तनकाल तोप पै गयौ धाय ॥
देखी सुतोप साबूत जानि ।
तब कह्यौ राव तुम सुनो कानि ॥६१३॥
पतसाह तोप खंडै सुकोय ।
हौं करौं यड़ो ताकौ सुसोय[5] ॥
गोलम्मदाज कीनौ[6] जुहार ।
पतसाह तोप फूटी[7] सुपार ॥६१४॥
तब कही साह महरम सुदेखि ।
गढ़ विषम बीर छुटै न टेक[8] ॥
अब करो[9] क्यों न तजबीज और ।
किहि भाँति[9] हाथि आवै सुजोर ॥६१५॥
फर जोर कही महरम्म खाँन ।

---

१ धरी । २ दग्गी । ३ ताय । ४ राव, धाव अंत्यानुप्रास ।
५ खोय । ६ किन्यउ । ७ फुट्टी । ८ पेखि । ९ करै कौन ।

पुल बाँधि[1] तोरि गढ़ करो आँन ॥
तब महरम खाँ तजबीज कीन।
इक राह बाँधि गढ़ को जु लीन ॥६१६॥
पुल[2] बाँधि कीन गढ़ को जु राह।
सुनि राव चित्त चिंता सु आह ॥
नहिं रह्यौ मरम[3] गढ़ को सकोइ।
बहु फिकर राव कीनौ[4] सु जोइ ॥६१७॥
तिहिं रैन पद्म सागर सुआय(इ)।
दीनौ सुसुप्न हम्मीर धाय(इ) ॥
नहिं करो कोन चिंता हमीर।
सब नदी समुद्रन को सुसीर ॥६१८॥
तुम रहो अभै गढ़ अभै[5] आय।
इक छिन्न माहिं पुल द्यों बहाय ॥
तब प्रात राव जग्गे हमीर।
फूटि गयौ सकल बंध्यो सुनीर ॥६१९॥
सुनि साह बात[6] अचरिज्ज मानि।
टूटै न गढ्ढ जिय विषम जानि ॥
पुच्छिउ[7] उज्जीर तबै सुबोलि।
कीजे इलाज किम कहौ खोलि ॥६२०॥
रण[8] कै पहार कहा कीन आय।
डेरा सुकीन्ह उज्जीर थाय[9] ॥
मजबूत मोरचा तहाँ कीन्ह।
बहु परी रारि दुहुँ ओर चीन्ह[10] ॥६२१॥

---

१ बंधि। २ पुल बंधि किहूँ गढ को सराह। ३ मगज। ४ किनौ। ५ अवै। ६ बत्त। ७ पुच्छी सुतबै उज्जीर बोलि। ८ रण को पहार धरि आदि आय (आप)। ९ थाप। १० किन्ह, चिन्ह अंत्यानुप्रास।

हम्मीर राव ऊपरि[१] प्रसाद।
तहाँ करयौ अखारौ इंद्रवादि॥
तहाँ चद्रकला पातुर प्रवीन।
सो नृत्य करै सुदर नवीन॥६२२॥
बाजत मृदग बीना सितार।
कट तार तार सहनाइ सार॥
महुवरी सु खंजरि तास संग।
स्रीमंडल सुर औ जलतरंग॥६२३॥
पट तीस राग रागनि सुमुद्ध।
सो सुनै नृपति[२] चहुवाँन उद्ध॥
गंधार देव भैरव सुजॉन[३]।
अरु राँम कली बिम्भा समाँन[४]॥६२४॥
बजि ललित बिलावल गिरी देव।
सुर आसा टोडी सकल भेव।
हिंडोल और सारँग अनूप।
नट और स्त्रीयुत राग भूप॥६२५॥
करि गौरी को अलाप आनि।
तव दीपग अरु सगरे कल्याँन॥
सुर गावत पंचम अति प्रवीन।
सुनि केदारो मारो सुमीन॥६२६॥
खंभाच रू मारू परज पाइ।
सुम सोर उड़ैसी जैत गाइ॥
अड्याणी[५] कन्हर बहु सुभेव।
बंगाल गौड़ मालव सुदेव[६]॥६२७॥

---

१ उप्पर। २ भूप। ३ सुजानि। ४ मानि। ५ अड्याणो। ६ एव।

सिंधुव बिहाग पट राग पेखि।
काफी अनूप सुर मधुर लेखि॥
सब कला जीति संगीत रीति।
नृतंत बाल गावत गीति॥६२८॥
सुर सप्त ग्राँम तीनूँ सु भेव।
इक्कीस मूर्छिना करत[1] एव॥
बहु लागडाक[2] गावत प्रबंध।
तिहिं सुनैं होत आनंद फंद॥६२९॥
हम्मीर राव राजत मसद।
दुहुँ ओर चौंर ढारैं[3] अमंद॥
यहि[4] देखि साहि गरि गयौ गव्व।
हम्मीर इंद्र पदवी सु सव्व[5]॥६३०॥
अभिमाँन तजत नहिं[6] मिल्यौ मोहिं।
नहिं सेख देय[7] संका न कोहि॥
यह चंद्रकला पातुर सुभेव।
बहु हाव भाव हस्तक सुदेव[8]॥६३१॥
बर्षत कटाक्ष ऊपरि सुराव।
मोहिं[9] गिनत नाहि कछु [10]रहत चाव॥
तब ताँन गाँन[11], गावंत मानि[12]।
एड़िय सुवाल मोहिं फिरत[13] बानि॥६३२॥
अपमाँन बाल कीन्हौ अनंत।
एडी दिखाय मुझ[14] कौ हसंत॥
करि कोपि कहै पतिसाह एम।

१ भरत। २ डाढ। ३ ढोरैं। ४ तिहिं। ५ गर्व, सर्व अत्यानुप्राश। ६ मिल्यौ न मोहिं। ७ देत। ८ सुभेद। ९ मुहिं। १० ननु। ११ ताँन ग्राँन। १२ जानि। १३ करत। १४ मुहिं सौं।

मैं करौं बड़ो[1] जिस को सुप्रेम ॥६३३॥
जो हनै बाल कहि तीर पाहि।
रसभंग करैं मैं गिनों ताहि[2] ॥
सुनि बचन मीर गभरू सुसेख।
कर जोरि कीन्ह[3] बानी बिसेष ॥६३४॥
यह धर्म्म पुरुष को कितहु[4] नाहिं।
तिय ऊपर ऊँचो करत[5] बाँहि ॥
तब कहत साहि यम सजो बॉन।
नुकसाँन होय अरु बचै ज्यॉन ॥६३५॥
सुनि बचन स्रवन कम्माँन लीन।
सो ऐंचि स्रवण तिय चरण दीन ॥
तब परी बाल ह्वै बिकल भूमि।
रसभंग भयौ सब लखत घूमि[6] ॥६३६॥
लगि तीर सभा मैं परा[7] जाब।
तब बढ्यौ सोच हम्मीर राव[8] ।
अब लौं न तीर दुग्गहि पहुँचि।
यह कौन औलिया आय सचि[9] ॥६३७॥

दोहरा छद

देखि तीर अचिरज हुए,[10] गढ़ मैं आवत सोर।
चकत चहुँ दिस चाहि कै, रह्यौ[11] राव हम्मीर ॥६३८॥
मुर्झि तिरिय[12] धरणी परी, भए राव चित भंग।
राव कहै[13] ऐसे बलौ, किते साह कै संग ॥६३९॥

---

१ बड़ा जिसको स्तेम। २ पाय, साय अत्यानुप्रास। ३ कही। ४ कहत। ५ करस बाँहि। ६ भुम्मि, घुम्मि अंत्यानुप्रास। ७ परयौ। ८ जाय, राय अंत्यानुप्रास। ९ ऊँचि। १० भयौ। ११ रहे। १२ तिया। १३ कहह।

महिमा साहि हमीर सैं, कही बात कर जोर।
सकल साह कै हसम मैं, है लघु भैया मोर ॥६४०॥
नहिं दूजो कोउ साह कै, सबरे[1] दल मैं और।
मीर गभरू अनुज मम, जामैं इतनो जोर ॥६४१॥

छप्पय छंद

नाहि जती विन जोग सूर विन तेग[2] न होई।
इते साह कै संग मीर सरभर नहिं कोई॥
करो हुकम मोहि राव साह कौ हनौं ततच्छिन।
मिटै सकल उतपात भाज सब सेन जाय विन[3]॥
हँसि कही राव हम्मीर तब यह खुदाय दूजो दुनी।
सिर वचै साह छत्र जु उड़ै यह कौतुक कीजे गुनी ॥६४२॥
करि[4] साहिब कौ याद सीस हम्मीरहिं नायौ।
कियौ हुकम तब[5] राव कोपि कै बॉन[6] चलायौ।
अनल[7] पंख मनु परिय टूटि[8] आकास धरन्निय[9]।
भयौ सोर बर सद्द परयौ महि छत्र धरन्निय[10]॥
मुरझाय साह भू मैं परे[11] उड्यौ छत्र .आकास दिस।
तब कही उजीर पतसाह सों तजी ज्यॉन परिहरि सु रिस ॥६४३॥
पिछले निमक[12] की दोस्ती, करी जॉन बकसीस।
जो दूजो सर छडिहै, हनिहै[13] विरया शीस ॥६४४॥
जा गढ मैं महिमा रहै, किम आवै वह हथ्थ।
अहि ज्यूँ गही छछूँदरी, यों हजरत की गथ्थ ॥६४५॥

छप्पय छंद

कह महरम खॉं वात इसी[14] हजरति सुनि आवै।

---

१ छिगरे। २ तेज। ३ धन। ४ करि जगदीसहिं याद; इष्टदेव निज सुमिरि। ५ हम्मीर। ६ परसु। ७ अनिल। ८ द्रुटि। ९ धरन्निय। १० धरन्निय। ११ मुम्मी गिरयउ। १२ निमक। १३ हनै जु। १४ इती।

दइ[1] महिमा पर धीर राय का हुक्म जु पावै ॥
नई तुम्हैं ततकाल पाँव लगाय गहि मेलै
नवै हिली बैठाय जोर मरजाद सु पेलै ।
इहि साहि रणथंभ का करो कूच चालिये दिली ।
दई राव हम्मीर की पतिसाह[1] मारी गिल्ली ।६५६॥
तब[2] सु साह हठ छाडि उलटि दिल्ली दिस आए ।
पिता वैर करि याद साह सुरजन पछिताए ॥
रत्न पच लै संग[3] साह कै पाँव सु लग्यौ ।
तात वैर हिय जानि कोप उर मैं अति जग्यौ ॥
कर जोरि साह सुरजन कहै सुगम दुग्ग गो हथ्थ गनि ।
दइ जितो राज[4] रणधीर को मोहि देन की याच भनि ॥६५७॥

दोहरा छंद

हँसि हजरत ऐसे कही[5], सुरजन आगे[6] आय ।
दियौ राज रणधीर कौं, कहैं बड़ा उमगाय ॥६५८॥
करि सलाँम सुरजन तबै, धारा [illegible]गी कोपि ।
आप[7] भवन हिकमति रची, स्यारि [illegible] लोपि
सौंरा भौंरा त्रास मैं[8], गै
फन्नसि आनि हाजरि भयौ, सुर

चौपाई छंद

कहैं राव हँसि सुरजन सुनिजै ।
मिलो छाड़ि[1] पन[2] यह न गुनिजै ॥
सुनि कापुरुप कपूत अयानै ।
छाड़ि[3] टेक को[4] छत्री जानै ॥६५३॥
फिर हमीर सुजन सों पूछी[5] ।
तेरी वात लगत मुहिं छूछी[6] ॥
जैंरा भैंरा खास सु दोई ।
कैसे निपरैं जानत सोई ॥६५४॥
कहै साह यह तो है[7] छानी ।
प्रगट देखि निज नैंनन जानी ॥
पाथर[8] हारि खास मैं जोई[9] ।
सुनिए स्रउए सद्द[10] सव कोई ॥६५५॥

दोहरा छंद

पाथर[11] हार्यौ खास महँ, खुड़क्यौ चॉम[12] अपार[13] ।
जिस सव्व[14] नीचै रही, राव यहै[15] निरधार ॥ ६५६ ॥
खुड़क्यो[16] सुनि दुव[17] खास को, पढ्यौ सोच डर राव ।
तव महिमा हम्मीर सों, कहै वचन गहि पाँव ॥ ६५७ ॥

छप्पय छंद

कहै[18] जु महिमा सेस राव मुहिं हुकुम सु दीजै[19] ।
मिलो साह कौ जाय फिकर इत्तनो नहिं कीजै[20] ॥

---

१ छंडि । १२ प्रन । ३ छंडि । ४ नहि । ५ पुच्छी । ६ छुच्छी ।
७ नहिं । ८ पत्थर । ६ सोई । १० सब्द । ११ पत्थर । १२ चम्मं ।
१३ अधार । १४ सनै । १५ येह । १६ खुड़क्को । १७ दोउ । १८ कहइ
महिमा तव सेस । १६ दिज्जै, दिज्जिय । २० किज्जै, किज्जिय ।

अब[1] दिल्ली कौ कूँच[2] साहि कौ तुरत कराऊँ।
तुम राजो रणथंभ जुद्ध मैं सकल सिराऊँ॥
हम्मीर राव हँसि यों[3] कहै[4] सदा कोन जग थिरि रहै।
छिन[5] भंग अंग लालच कहा सुजस एक[6] जुगजुग रहै॥६५८॥

दोहरा छंद

अलादीन पतिसाह सों, गही[7] खग्ग[8] करि टेक।
दुख मैं विरले मित्त[9] हैं, सुख मैं मित्त अनेक॥ ६५९॥
हठ तौ राव हमीर को, औ[10] रावण की टेक।
सत राजा हरिचंद को, अर्जुन बाण अनेक॥ ६६०॥
गही टेक छाड़ै नहीं, जाभ चोंच करि जाय।
मीठो[11] कहा अँगार कौ, ताहि चकोर चुगाय[12]॥ ६६१॥

छप्पय छंद

सब[13] बातैं यह कही सेख अपनै घर आयौ।
भई[14] राति सुरजन्न निकट हजरति कै आयौ[15]॥
हाथ[16] जोरि सिर नाय कह्यौ छल राव भुलायौ।
द्वादस कै सामॉन रक्खि गढ़ तोरि हलायौ॥
ये[17] कहिय बात[18] सुर्जन सकल रणत भँवरदूट्यौ[19] अबै।
हजरति प्रताप महा बंक गढ़ सहल भयौ[20] सदकै सबै॥६६२॥

दोहरा छंद

चंदकला देवलि कँवरि[21], पारसि महिमा साह।
मॉगत साह अलावदी, अबै लै मिलयौ आय[22]॥६६३॥

---

१ अबै दिली। २ कुञ्च। ३ इमि। ४ कह्यौ। ५ छण। ६ इक। ७ गहिय। ८ तेग। ९ मीत जुग। १० अरु। ११ मिट्ठौ। १२ जु खाय। १३ राव बात (बत्त) ये (इमि) कहिय सेस अप्पन घर आयव (आयउ)। १४ भइय रत्ति। १५ भायौ। १६ हथ्थ। १७ यह। १८ बत्त। १९ टुट्यौ। २० लयौ। २१ कुँमरि। २२ साय, आय अत्यानुप्रास।

छप्पय छंद

सुनि हजरति के वचन राव हम्मीर रिसाए।
कहा अलावदी साहि गर्व्व के वचन सुनाए॥
मैं हमीर चहुवाँन साह सौं हम कछु चाहैं।
चिमना वेगम एक[1] और चिंतामणि माहैं॥
पाइक च्यारि पीराँ[2] सहित कहै[3] साह ये दिज्जिये।
छुटै न हट्ट हम्मीर को कुच्च ढिल्ली कौ किज्जिये॥६६४॥
ये हमीर के वचन[4] वाँचि[5] पतिसाह रिसानी।
रे हराँम कमबख्त किसो गढ़ फते करानौ[6]॥
सुरजन झूठौ कहै राव हम्मीर न मानै[7]।
नहिं महिमा कौ देइ[8] मिलै नहिं हठी अमानै॥
यह कही साहि सुरजन्न[9] तब देखिय[10] अब कैसी बनै।
रणथंभ रान हम्मीर जुत मिटैं होहि[11] कौतुक घनै॥६६५॥
जब करि वदन मलीन राव रणवासहिं आए।
उठि राणी कर जोरि राव कौं सीस नवाए॥
गढ़ बीत्यौ[12] सामाँन भयौ भंडार सु रीतौ।
* टेक छाडि[13] करि सेख देहु अन माँगु न बीत्यौ[14]॥
विलग्याय वदन राणी कहै द्वादस वर्ष जु तुम लरे।
विप्रीति बुद्धि कौने भई हीन वचन[15] मुख निक्करे॥६६६॥

---

१ इक्क। २ पीरन। ३ कहत राव। ४ ज्यान। ५ वंचि। ६ करि आनौं। ७ मन्ने। ८ देय। ६ सुरजन तनै। १० देखो। ११ हूहि। १२ नित्यौ। १३ छडि। १४ बीतो; रितौ, बितौ अंत्यानुप्रास। १५ वत्त।

* कह्यो देउँ सेख महि मागु न बीत्यौ।

चौपाई छंद •

राणी कहै सुनो महराव ।
ऐसे बचन उचित नहिं भावं ॥
या तन वचन सार स्रुति भाखै[1] ।
तन मन धन दै बचन जु राखै[2] ॥६६७॥
तन धन भ्रात पुत्र अरु नारी ।
हरि बिधु त्यागि बचन प्रतिपारी ॥
राज पाट अनित्य[3] सु जानो ।
रहै नित्य इक सुजस बखानो ॥६६८॥
केकइ ध्वज अधबिग्रह दीनो ।
बिद्या भवन जोति जस लीनो ॥
भव जो कही सत्य वह जानो ।
और न होय कोटि बुधि ठानो ॥६६९॥

दोहरा छंद

कय हठ करै अलावदी, रणतभँवर गढ़ आहि ।
कबै सेख सरणे रहै, बहुरो[4] महिमा साहि ॥६७०॥
सूर सोच मन मैं करो[5], पदवो[6] लहौ न फेर ।
जो हठ छडो राव तुम, उतन लजै अजमेरि ॥६७१॥
सरण राखि सेख न तजो, तजो सीस गढ़ देस ।
राणी राव हमीर को[7], यह दीन्हौ उपदेस ॥६७२॥

छप्पय छंद

कहाँ पँवार जगदेव सीस आपन कर कट्यौ ।
कहाँ भोज बिक्रम सु राव जिन पर दुख मिट्यौ ॥

---

१ भक्खै । २ रक्खै । ३ अनित्त (त्य) । ४ बहुरयौ । ५ करैं । ६ पदई । ७ की ।

सवाभार नित करत[1] कनक विप्रन कौं[2] दीनौं[3]।
रह्यौ न रहिए[4] कोय देव नर नाग सुचीनौ॥
यह बात[5] राव हम्मीर सूँ राणी इम आसा कही।
जो भए चक्कवै मंडलो सुनो[6] राव दीसै नहीं[7]॥ ६७३॥

दोहरा छंद

धन जोवन नर की दसा, सदा न एक विहाय।
पाख[8] पाँच ससि की कला, घटत घटत[9] वढ़ि जाय*॥ ६७४॥
राखि सरण सेख न तजो, तजो सीस - गढ़ वेगि।
हठ न तजो पतसाह सौं, गहि कर तजो न तेगि॥ ६७५॥
जितो ईस तुम्ह वर दियौ, अब फिर चाहत काय।
करो जंग पतसाह सौं, सनमुख सार समाय॥ ६७६॥
जीवन[10] मरन संजोग जग[11], कौन मिटावै ताहिं।
जो जन्मे संसार मैं अमर[12] रहै नहिं आहि॥ ६७७॥
कोउ सदा नहिं थिर रहै, नर तरु गिरवर ग्रॉम।
करयौ राज रणथंभ को[13], अपना[14] तन परमॉन॥ ६७८॥
कहाँ जैत कहँ सूर कहँ, कहँ सोमेस्वर राण।
कहाँ गए प्रथिराज जे, जीति साह दल आण॥ ६७९॥
कहाँ जैत कहँ सूर प्राथ, जिन गहे गौरी साह।
होतव मिटै न जगत मैं, किज्जिय[15] चिंता काह॥ ६८०॥
होतव मिटै न जगत मैं, कीजे चिंता कोहि।

---

१ अरिघ। २ कहँ। ३ दिनव। ४ रहिहै। ५ वत। ६ कहो। ७ कहीं। ८ पख, पक्ख, पाखि। ९ चढ़त। १० जाँमण। ११ जे। १२ अमर न कोई आहि। अमर न कोउ रहाहि। १३ गढ़। १४ हम अपनै (अप्पन) तप नॉम। १५ कीजे।

* पालि पाखि ससि कला ज्यौं घटत बहुरि बढ़ि जाय।

आसा कहै हमीर सोँ, अब चूको मति सोहि ॥ ६८१ ॥
बिछुरन मिलन सँजोग जग, सब मैं यह बिधि सोइ ।
आसा कहै हमीर सह, हम तुम भया बिछोह ॥ ६८२ ॥
धन्य बंस जिहि जन्म तव, राव सराहत ताहि ।
और कौन तुम बिन त्रिया, वचन कहै समुझाय ॥ ६८३ ॥
धन्नि पतिव्रता नारि तू, राव सराहत आप ।
अवर कौन तुझ बिन त्रिया, कहै बचन बिन पाप ॥ ६८४ ॥
राखि सेरा सरणौ तजों, कुल लाजै चहुवांण ।
तुम साकौ गढ़[1] कीजियौ[2], निरखि साह नीसाण ॥ ६८५ ॥
लीन[3] परिक्षा बहुत मैं, तू छत्री कुलवाल ।
तुव[4] मत मैं देख्यौ[5] सुदृढ़, यही बात[6] यहि काल ॥ ६८६ ॥
सुने राव के बचन तब, परी धरनि[7] मुरझाय ।
निठुर बचन मुख तैं जु कहि, तजि रणवास रिसाय ॥ ६८७ ॥
हम पतिभरता पुरुष बिन, कौन दिसा चित कौ धरैं ।
आसा कहै हमीर सोँ, तुम पहला साकौ करैं ॥ ६८८ ॥

छप्पय छंद

खोलि सकल भंडार तुरत[8] जाचिक सु बुलाए[9] ।
विप्र भली बिध पूजि[10] दिये बंदी मन भाए ॥
भवन तिरिया[11] गढ़ ग्रॉम तजे हम्मीर मोह बिन ।
मन क्रम बचन सु त्यागि भए निज धर्म्म लीन छिन ॥
ततकाल राव रणवास तजि सभा आय दरबार किय ।
आये जु मित्र[12] मंत्री सु बुध सूर वीर आदर सुदिय ॥ ६८९ ॥
कहै राव हम्मीर सुणो चतुरंग महा धर ।

---

१ गढ मैं करौ । २ किज्जियौ । ३ लिन्न । ४ तुममन । ५ दिख्यौ । ६ वत्त । ७ मुम्मि मुज्झाय । ८ सत्रै, सव्व । ९ बुल्लाए । १० पुज्य । ११ तिया । १२ मंत ।

तुम्हें रतन की लाज जुद्ध[1] हम करें नियम करि ॥
तुम सब बात समत्थ[2] करो जैसी तुम भावै ।
रणतभँवर[3] को लोग तहाँ कछु दुःख न दुख नहिं पावै ॥
गढ़ सजो जाय चित्तोड़[4] को प्रजापालि सुख दिज्जिये ।
सब साँम दाँम दंडह सहित भेद नित्य[5] सब किज्जिये ॥ ६९० ॥
कहत तबै[6] चतुरंग उचित[7] यह हम कौं नाहीं ।
आप[8] रहो हम[9] रहैं लरैं हम जस कै ताहीं ॥
कहे राव यह प्रजा सकल चित्तोड़[10] समावै ।
यह परिकर सब जिनो राखि[11] आपन[12] जु सुहावै ॥
चतुरंग राव ले रतन को गढ़ चित्तोड़[13] सुचल्लिये ।
प्रथम जाय अल्हण सुपुर करुणाजुन डेरा किये ॥ ६९१ ॥

दोहरा छंद

पंच सहस चतुरंग लै, चले[14] रतन कै साथ ।
तब हमीर दरबार किय, कही सबन यह गाथ[15] ॥ ६९२ ॥
जीवै सो घर भुगिवै[16], जुझ्झे[17] सुरपुर धाम ।
दोऊ जस कित्ती[18] अमर, तजो मोह जग आस ॥ ६९३ ॥
जीवन चाहत जो कोऊ ते सुचैन घर जाहु ।
कहैं राव सबकै सुनत, हम सँग मरन उछाह ॥ ६९४ ॥

छप्पय छंद

सुनत वचन ये सेग भवन अपने को आए[19] ।
कुटम[20] मेल करि सेस करद लै अदल पठाए ॥

---

१ जुद्ध । २ समर्थ । ३ यह परिकर सब जितो, राखि आपन जु सुहावै । ४ चीतोड़ । ५ नीति । ६ तब्ब । ७ उदित । ८ अप्प । ९ सब । १० चीतोड़ । ११ रक्खि । १२ अप्पन । १३ चीतोड़ । १४ चलिय, चल्लउ । १५ सत्थ, गत्थ, अत्यानुप्रास । १६ भोगिवै । १७ जूझे । १८ कीरति । १९ कै धायौ । २० कुट्म खेवि सब सेल ।

कहै राव सों वचन नैन जल सों भरि आए।
सुख संपति रणथभ त्यागि करिये मन भाए ॥
सुर नर कायर[1] सूरमा कहै सेख थिर नहिं कोइ।
हम्मीर राव चहुवाँन[2] अब करै साहि सों जँग सोइ ॥ ६९५ ॥

दोहरा छंद

जीवन कौ सब कोउ कहैं, मरन कहै नहि कोय।
सती सूरमा पुरुप को[3], मरतहिं मंगल होय ॥६९६॥

छप्पय छंद

केसर सौंधे बसन सकल उमरावन सज्जैं।
अलादीन पतिस्साह फेरि कहि कब कब गज्जैं ॥
सहस गऊ करि दॉन राव सिर मौर सु बंध्यौ।
करथव[4] जुद्ध को साज छत्र कुल सुजस सु संध्यौ ॥
निस्सॉन[5] पॉन वज्जे सु घन हर्प[6] बीर बानै पढे।
चहुवॉन राव हम्मीर तब जुद्ध काज चौरै चढे[7] ॥ ६९७ ॥

दोहरा छंद

पंच सहस रतनेस सँग, गढ़ चीतोड़[8] पठाय।
पंच सहस रणथंभ गढ़, द्रढ़ रावत रह आय ॥ ६९८ ॥
असी सहस सेना सकल, चढ़ी राव कै संग।
माया मोह विरक्त मन, जुरन साह सों जंग ॥ ६९९ ॥

छप्पय छंद

कमध्वज कूरम गोड़ तँवर परिहार[1] अमानो।
पौरच वैंस पुँडीर बीर चहुवाँन सु जानो॥
जद्दव[2] गोहिल धीर चढ़े गहिलोत गरूरं।

---

१ कातर। २ पतिसाह सों करो जँग अद्भुत सोइ। ३ कै। ४ करिव। ४ नीसॉन। ५ दरपि। ६ कढे। ७ चित्तोड़। ८ पड़िहार। ९ जादम।

सँगर और पँवार मिल्ल[1] इक भोज मरूर॥
छत्तीस वस-छत्री चढे जिम पावस यद्दल वढ़े।
हम्मीर[2] राव चहुवाँन तम जग कज्ज[3] चौरै कढे॥ ७०० ॥
जेठ मास वुधवार सप्तमिय पक्स[4] अध्यारी।
करि सूरज कौ नमन रान कर खग्ग[5] सम्हारी॥
हरपे सुर तेतीस और हरपे ज़ु कपाली।
नारद सारद हरपि वीर वावन ज़ुत काली॥
हरपी ज़ु हरपि[6] अच्छर[7] हरपि[8] ज़ुगिन वृंद सु नचियव।
जवुक कराल गिद्धनि हरपि सूर हरपि हिय रचियव ॥७०१॥

हनूफाल छंद

सजि सूर राव हमीर विरदाय[1] नीर सु धीर॥
जनु छत्र कुल का लाज। रन सिंधु की मनु पाज॥ ७०२॥
दातार सूर सु अग। निस दौस जुट्टत जग॥
धरि स्वामि धर्म्म सुरग। वढि[10] रहै तिल तिल अग॥ ७०३॥
गढ कोट औटत एक। तौरत करि करि टेक॥
सिर खोरि चदन सोइ। रनि नदि चदि सुलइ॥ ७०४॥
गति उद्ध[11] कुद्दत भट्ट। ज्यौं[12] खेलन उतर नट्ट॥
अँग वर्म्म चर्म्म सु कीन। सिर टोप औप सु दीन[13]॥ ७०५॥
दस्ताँन रच्चिच सु हथ्थ। करि चहै गथ्थ[14] अकथ्थ[15]॥
वहु न्हाँन दाँन सु कीन। गो स्वर्ण त्रिमन दीन[16]॥ ७०६॥
रवि समु निष्णु सुपुज्जि[17]। मन साह सैं करि दुज्जि[18]॥

---

१ मोल। २ दल हरपि राव हम्मार वै साह जीन अचरिज वढे। ३ काज। ४ पाल। ५ तेग। ६ हूर। ७ अच्छरि। ८ सक्ल। ९ रन। निरदार। १० रहिव। ११ उध। १२ जिम खल खिल्लिड। १३ किन, दिन अत्यानुप्रास। १४ गत्थ। १५ अगथ्थ। १६ किन, दिन अत्यानुप्रास। १७ पूजि। १८ दुजि।

आचार भार फवंत। दोउ पच्छ सुद्ध सुभंत ॥ ७०७ ॥
बहु बंदि बिरदत जाय। बदि द्वंद हर्ष सु आय[1] ॥
असमॉन लगिग[2] सु सीस। झलहलैं तेज सु दीस ॥ ७०८ ॥
सँग चढ्यव[3] वंस छतीस। संग्राम अचल सु दीस ॥ ७०९ ॥

दोहरा छंद

स्वामि धर्म्म धारैं[4] सदा; माया मोह बिरक्त ॥
दॉन कृपाँनैं उदारमति, अचल अद्रि हरभक्त ॥ ७१० ॥
साजत साज सुवाजि सजि, कीन[5] बनाव सु ऐन ॥
चंचल चपल=विचित्र गति, राग बाग लखि सैन ॥ ७११ ॥

छंद हनूफाल

सब[6] साहनी नृप बोलि। हय सहस सोलह खोलि ॥
सब बस उच सु वाज[7]। लखि[8] रूप मोहत राज[9] ॥ ७१२ ॥
मनु [1]उच्चस्त्रव के बंधु। आवर्त्त चक्र सु कंधु ॥
तुरकी हजार स पॉच। मग चलत करत सु नाच[10] ॥ ७१३ ॥
ताजी हजार सु रुद्र। गुन सील रूप समुद्र ॥
सब धीर ताजि[11] कुलीन। नृप बंटि[12] बाजि सु दीन ॥७१४॥
बनि जीन जटित जराव। नग हीर पन्न सुहाव ॥
सिर धनिय कलँगिय ऐन। मनु सजे बाजि सु मैन ॥ ७१५ ॥
गजगाह बाह अथाह। जो करैं[13] जल पर राह ॥
नग मुक्त माल सुयाल। गुम्फी[14] सु रुचि[15] बहु काल ॥ ७१६ ॥
मखमलिय सिगरे साज। मनु[16] सबै रवि को[17] बाजि ॥
जिन परिय पक्खरि अंग। लख भ्रमत दिट्ठि[18] अभंग ॥ ७१७ ॥

---

१ जाहि आहिं, अंत्यानुप्रास। २ लग्गिय। ३ चढे। ४ धारहिं। ५ किन। ६ तब साह लिय नृप बुल्लि। ७ वाजि। ८ लख। ९ राजि। १० पच, नच्च अंत्यानुप्रास। ११ धीर। १२ बाँटि। १३ करहिं। १४ गुँथी। १५ सरचि। १६ सब्ब। १७ कै। १८ दीठि।

बहु सिरी सीसन सोहि । उड़ि चलैं भरि जो कोहि[1] ॥
गति चलैं[2] चंचल एमि । जिनि पवन पहुँचैं केमि ॥ ७१८ ॥
धर धरत सुम यों मानि । मनु जरन अगि[3] सुजानि ॥
जल चलैं थल जिमि वट्ट[4] । लखि उडैं ओघट घट्ट[5] ॥ ७१९ ॥
मृग गहत डार कमाँन । नहिं पच्छि पावहिं[6] जॉन ॥
गति पवन देखि लजात । जनु मुकुर कांति सगात[7] ॥ ७२० ॥
होड वंस सुद्ध प्रकास । चढ़ि डील पील सु जास ॥
यहिं विधि सु लिन्ने[8] मौलि । नग हेम सर भर तौलि ॥ ७२१ ॥
फोड बने कच्छिय ऐन । सव[9] उड़ै पच्छिय गैन[10] ॥
ऐराक वंस सुसील । गुन भरे झलकत डील ॥ ७२२ ॥
खंधार उपज्जि स सुद्ध । जनु लसत रूप सु उद्ध ॥
काबलिय डील अनूप । तिहिँ देखि[11] मोहत भूप ॥ ७२३ ॥
अरु चीन के जु नवान । ताजी सगुन गन लीन ॥
घर[12] थीर अनक जु डील । जो लिये साटैं[13] पील ॥ ७२४ ॥
रँग रंग अंग बनाव । सो लिये पंकति[14] दाव ॥
सिरगा सुरंग समंद । संजाफ सुरस अमंद ॥ ७२५ ॥
कुम्मैत कुमद कल्याँन । मोती सु मगसी आँन ॥
सब्जारु[15] सब रँग औंर । चपा सु चीनिय चौंर ॥ ७२६ ॥
अबलख सु गरडा रग । लख्खी जु अतिहिं[16] उमग ॥
हंसा हरेई बाजि । तीतुरिय ताँबो साजि ॥ ७२७ ॥
भिन भिन्न टुकडी साजि । चढ़ि चलिय रावत गाजि ॥
चहुवाँन राव हमीर । रँग रंग रचन सुधीर[17] ॥७२८॥

---

१ सोह, कोह अल्पानुप्रास । २ चलहिं । ३ अग्नि । ४ बार । ५ घाट ।
६ पावैं । ७ सतात । ८ लीने । ६ सँग । १० औन, गौन, अत्यानुप्रास ।
११ दिक्खि, पिक्खि । १२ अब्बिय (अरबिय) अनोखे डील । १३ साटैं ।
१४ लगे पक्ज । १५ सु । १६ ऐरि । १७ रण रग रचन धीर ।

छंद त्रोटक

गजराज सवै सत पंच सजे ।
गिरगात[1] मनो घन भद्द गजे ॥
सु महावत जंत्रन मंत्र रजे ।
करि वंधन[2] पीर सुधीर कजे ॥७२९॥
परि पांय सजाय निकट्ट ररे ।
पग[3] खोलि जंजीर सुवीर अरे[4] ॥
बिरदाय भले मन हत्थ कियं ।
असनाँन कराय सिँगार लियं ॥७३०॥
तन तेल सिँदूरन चित्र कियं ।
सिर चंद अमंद सुरंग दियं ॥
मनु कज्जल वद्दल पावसय ।
तड़िता घन[5] चंद कि मावसयं ॥७३१॥
सजि डंबर अंबर सो लगिय ।
घन घोर घटा सु पटा गिनियं[6] ॥
कसियं हवदा ध्वज धार वनी ।
मनु पगति पव्वय की जु चली ॥७३२।
वर्षा घन घोर सु जानि परै ।
कवि रूप स्वरूप समाँन करै ॥
बहु वद्दल वारन बूंद वढे[7] ।
ध्वज वैरख लाल निसॉन कढे ॥७३३॥
तड़िता घन मैं दमकन मनो ।
वगपंति सुई गजदंत भनो ॥
गरजै बहु गाज सु गाज मनं ।

१ गिरगात। २ बंदन। ३ पदपाय सुजाय ४ खुल्लि। ५ घनु
६ गजिय। ७ चढे।

मिलियौ ससि सूरज गोन भनं ॥७३४॥
ग्रपै हट मह सुभट सदा।
सु वहैं बहु भाँति सुभट्[1] सुदा ॥
सिर ढाल ढलकत• एमि लसैं।
ससि जीव धरामुत एक वसैं ॥७३५॥
अधधुध चलैं मग उम्मगय।
मनु काल कराल नठे जगयं ॥
चरग्गी-बहु थॉन जु नेज लियं।
धरि सेन सुअग्र[2] सुभाय कियं ॥७३६॥
पद लंगर थ्योर जँजीर[3] जुटे।
नहि खुल्लत आदुव न्याय लुटे[4] ॥
वल रासि अमाँन[5] सुकोहभरे।
नन चालत[6] मग्ग अमग्ग अरे ॥७३७॥
बहु दुदुभि घोर सुनैं स्रमनं[7]।
थिरदाय सुनंत करैं गमनं ॥
सिर चोंर दुरंत इमे दरसैं।
तम दाधि[8] डिनेम मरीचि लसैं ॥७३८॥
चतुरंगनि राव हमीर तनी।
सव भाँतिन मोभ अनत बनी ॥
सव रावत आय जुहार कियं।
चहुवाँन सबै सिर भार दिय ॥७३९॥
धरि अग्र[9] सु पिल्लन[10] डिल्ल[11] पिले।
बहु चंचल याजिन लाज[12] गिले ॥

---

१ नद्द। २ अग्ग। ३ अजिर बोर जटे। ४ छुटे। ५ अमावन
६ चलत। ७ स्रवन। ८ दग्धि। ९ अग्ग। १० पीलन। ११ डील
१२ गाज।

बहु दुंदभि बाजत[1] घोर घनं ।
पट गोमुख भेरि सु चंग मनं[2] ॥७४०॥
सहनाइय सिंधुर राग ररं ।
बिरदावत बंदि कविंद भरं ॥
उमगे चहुवाँन विकट्ट दल ।
अप अप्प सु बीर कराय हल ॥७४१॥
चहुँ ओर किलेक सु पुगल के ।
करिहा[3] सजि संग चले बलकै ॥
तिनकी सज मानव चित्र रचे ।
धरि दूर नजीक करै सु रचै ॥७४२॥
असवारिय सज्ज बनी तिनतैं ।
खबरैं बहु लेत घने बन तैं ॥
बहु तोप जलेबिन[4] अग्र बनी ।
सब सिंदुर लेप करी जु घनी ॥७४३॥
तिन ऊपर बैरख बृंद सजी ।
जम की मनु जीभ अनेक गजी ॥
बलि देत चले अरिबृंद भरै ।
मद बक्कर भक्खर[5] कोप धरै ॥७४४॥
हथनारि जँबूर सु चहरयं ।
छुटिया तुबकै बहु अहरियं ॥
धरि अग्र सबै चहुवाँन चढ़े ।
बहु बंदि कविंद सुछंद पढ़े ॥७४५॥
इहिं भाँति उभै दल कोप किय ।
हरखे बर धीर सुधीर हियं ॥७४६॥

---

१ बजत । २ हन । ३ करहा (ऊँट) । ४ जलेबय, अग्ग ।
५ मक्खत ।

दोहरा छंद

स्रवण सुनै वर बीर रस, सिंधव राग अपार ।
हरखि उठे दोउ तिहिं समे, मिलन बीर सिंगार ॥७४७॥

छंद हनूफाल

मिलनै सुवीर सिंगार । दुहु हरप हिये अपार ॥
वर बीर हरखेउ अंग । उत अच्छरी[1] सु उमंग ॥७४८॥
तन उभै मज्जन कीन । भये दॉन मॉनस लीन ॥
तहाँ कीच बीर नवीन । रचि बाल बसन प्रवीन ॥७०९॥
इत टोप वीरन सीस । कसि कंचुकी तिय रीस ॥
बहु अस्त्र बंधि सु श्रीर । अच्छरि सु भूषण हीर ॥७५०॥
इत सूर खङ्ग सु लीन । उत बाल अंजन दीन ॥
इत ढाल वीरन बंधि । तार्टक श्रवणनि संधि ॥७५१॥
सामंत बंधि फटार । अच्छरी तिलक सुढार ॥
सुख पॉन ज्वॉन सुभाव । तिय चंप दंत जराव ॥७५२॥
इत कसी सूर कमॉन । द्रग बाम चमक निदॉन ॥
धरि बीर कर दस्तॉन । अच्छरिय महँदी पॉन ॥७५३॥
बरच्छी सु-लीनिय सूर । बर माल कीनिय हूर ॥
सिरपेच सूर जराव । तिय सीस फूल सुहाव ॥७५४॥
इत तबल तौरा नेत । तिय हाव भाव समेत ॥
रचि सूर सेलिय अंग । अच्छरिय हार उमंग ॥७५५॥
कसि तून बीर स जंग । अच्छरिय नैन अपंग ॥
कर केहरी नख सूर । उत पानि पानि सहूर ॥७५६॥
लिय बीर तुलसिय माल । वर माल लीन स बाल ॥
कसि सूर मोजा पॉय । नूपुर सु बाल सुहाय ॥७५७॥
कसि सूर बाजि सु तंग । बिम्मॉन बाल उमंग ॥
इहि भाँति सूर सबाल । सतकंठ मिलन तिकाल ॥७५८॥

[1] अपछरी ।

जरं उज्मरं सूभरं[1] यों झपट्टें ॥
लगे गोल मैं गोल गोला सु गज्जैं ।
भए वार पारं उपम्मा सु रज्जै ॥७६६॥
मनो स्याॅम कै थास है वारपारं[2] ।
चहूँ ओर राजंत है चारु थारं ॥
रहे गिद्ध तामैं घने बैठि अट्टं ।
करैं ध्यॉन बैठे गुफा मैं मुनिद्दं ॥७६७॥
दै साथि गोलॉन कै तीर ऐसैं ।
मनो फाटिका[3] तैं उडै नट्ट जैसैं ॥
तोप जोरं करै सोर भारी ।

दोहरा छंद

उमगि उमगि हम्मीर भट, चले मऋल करि चाव।
च्यारि अनी चतुरंग की, चढ़े संभरी राव ॥७५९॥
उतै साह कै मीर भर, खाँन ओर उमराव।
रणतभँवर छिकिकय[1] हरषि, नाना करिव बनाव ॥७६०॥
च्यारि दरा घाटी जिती, कीने घाटारोह।
काल रूप कोपे[2] तुरक, थाँन विकट जंसोह ॥७६१॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े वीर कोपे दुहूँ ओर धाए।
मनो काल कै दूत अद्भुत्त आए॥
इतै राव हम्मीर कै वीर छुट्टे।
उतै मीर धीरं गहीरं सु जुट्टे ॥७६२॥
उड़ी रैत सैन न दीसंत भाँनं।
दुहूँ ओर घोरं सु बज्जे निसाँनं॥
छुटै[2] तोप वाँनं दुहूँ ओर जोरं।
धरा अंमरं बीच मच्चे सु सोरं ॥७६३॥
उठी ज्वाल माला धरा पै उपट्टे।
धुवाँ घोर घोरं सु जोरं प्रगट्टे॥
मनो दोय सिंधू तजैं आय वेला।
प्रलेकाल कै काल कीनो समेला ॥७६४॥
दुहूँ ओर घोरं सु गोलं चरक्खैं।
मनो मोघ[3] बोला अतोल[4] करक्खैं॥
उड़ै अग्रपव्वय ढहैं गड्ढ कोटं।
परैं गज्ज बाजं धरा धूरि लोटं ॥७६५॥
प्रलै पावकं जानि उट्ठी लपट्टं।

---

१ छेकिय, छिक्यउ। २ कुप्पिय। ३ मेघ। ४ अतुल्लं।

जरं वज्झरं सूझर[1] यों झपट्टं ॥
लगे गोल मैं गोल गोला सु गज्जैं।
भए वार पारं उरम्मा सु रज्जै ॥७६६॥
मनो स्याँम कै वास है वारपार[2]।
चहूँ ओर राजंत है चारु वारं ॥
रहे गिद्ध तामैं घने वैठि अट्टं।
करै ध्याँन बैठे गुफा मैं मुनिंद्रं ॥७६७॥
उड़ै साथि गोलाँन कै वीर ऐसैं।
मनो फाटिका[3] तैं उड़ै नट्ट जैसैं ॥
चलै तोप जोरं करैं सोर भारी।
परै विज्जुरी सी घने[4] एक धारी ॥७६८॥
छुटै एक वारं[5] घनी चादरं[6] यो।
मनो भार भूजैं चनै यो घनै यों ॥
बँदूकैं हजारं चलैं एमि राजैं।
मनो मेघ गोला परैं भूमि गाजैं ॥७६९॥
चलैं बाँन वेगं मचै सोर भारी।
मनो आतसबाज खेलंत कारी ॥
छुटैं बाँन कम्माँन ज्यों मेघ धारा[7]।
लगैं बाज गज्ज हुवै वारपारा ॥७७०॥
मनो नाग छौना उड़ैं होड मंडी।
डसैं अग अग करैं[8] सेन खंडी ॥
वहैं तोमरं सेल औ सक्ति ऐनं।
करैं वार पारं वहैं[9] उच्च वैनं ॥७७१॥
वहैं खग्ग[10] वेहद्द देखंत सूरं।

---

१ सुज्झरं। २ आरपारं। ३ फाटिकं। ४ घनी। ५ चारं।
६ चद्दरै। ७ धारं, पारं अंत्यानुप्रास। ८ अरी सेन। ९ वकैं। १० खग्ग।

करैं दोय टूकं सझुक्कै[१] समूरं ॥
बहैं तेग कधं परैं गज्जराजं ।
लगे आयुधं यों झरं सर्व साजं ॥७७२।
कटैं फंगलं श्रंग श्रो जीन बाजी ।
तबै सूर[२] रीझैं करैं मालसाजी ॥
कटारी बहैं वारपारं निहारैं[३]।
मनो स्यॉम उर माँझ कौस्तुभ सम्हारैं॥७७३॥
कहूँ पंजरं पिंजरं वेगि फारं ।
मनो हाथ वाला अहारी निकारं ॥
छुरी हत्थ जोरं करैं सूर हाँकैं।
कहूँ मल्ल युद्धं करैं वीर खाँकैं ॥७७४॥
परैं सीस भूमैं[४] उठैं रुंड[५] घोरं ।
दुहू सेन देखंत कौतुक्क जोरं ॥
किती श्रंत उरझंत लटकंत[६] भूमैं।
किते घायलं घाव लग्गे सु झूमैं[७] ॥७७५॥
भरे योगनी[८] पत्र पीवंत पूरं ।
परैं ज्यों मलेच्छं परैं आय हूरं ॥
किलक्कैं जु काली हँसैं वार वारं ।
करैं भैरवं घोर सोरं अपारं ॥७७६॥
भगी साह की सेन देखंत दोई ।
कहैं बैन कोपं वकं सीस सोई ॥
किते भागि जैहो अरे मूढ़ आजं ।
जिते[९] बीर चहुवॉन हम्मीर गाजं ॥७७७॥

---

१ टूकैं सु झूकै, टुक्कं सु झुक्कं। २ शंभु रीझैं। ३ बिहारैं। ४ भुम्मी। ५ सीस। ६ लरकंत। ७ घूमैं। ८ जुग्गनी। ९ जितें चाहुवॉनं हमीरं सुगाजं।

भग्यो साह संगं तज्यौ जंग भारी ।
कहै साह उज्जीर सौं जो हँकारी ॥७७८॥

दोहरा छंद

कहा राव हम्मीर कै, सूर बीर बलवाँन ।
सबै[1] सु खाय हमारिये, जग समै प्रिय प्राँन ॥७७९॥

छप्पय छंद

कहै साह उज्जीर सुनो आपन[2] मन लाई ।
जिते राव कै बीर सबै[3] छत्री प्रन[4] पाई ॥
लरत भिरत नहिं टरत करत अद्भुत रस सीतो[5] ।
करत जंग अनभंग अंग छिन भंग है नीतो[6] ॥
नहिं सहत सार आपण[7] सपन[8] सबै मीर उमराव मर ।
किज्जे सु कौन मत तत अय कहो बुद्धि आपन[9] समर ॥७८०॥
कहै उजीर[10] कर जोरि सुनो हजरत यह किज्जे ।
च्यारि सेन चतुरंग संग नाभी कर[11] दिज्जे ॥
एक[12] सेन दिवान[13] एक वकमी भड़ बंके ।
एक[14] गोल मोहिं जानि आप[15] एकन कर हंके ॥
यह भाँति सेन चतुरंग कै अनी च्यारि करि जुट्टिए ।
हम्मीर राव चहुवाँन[16] तै फते आप लहि हुट्टिए[17] ॥७८१॥

दोहरा छंद

करि करि मंत्र उजीर[18] तब, चढे संग लै मीर ।
च्यारि अनी करि साहि दल, जुरे जंग सब[19] वीर ॥७८२॥

---

१ सबंसु । २ अप्पन । ३ धर्म । ४ पन । ५ जीते, जित्ते, सीचो । ६ नित्ते, जित्तो । ७ अप्पन । ८ सयन । ९ अप्पन । १० कह वजीर । ११ नर । १२ इक्का । १३ दीवाण, दिव्वाँन । १४ इक । १५ अप्पन इक्कन करि हंक्के । १६ के । १७ खुट्टिए । १८ वजीर । १९ फिरि ।

त्रिभंगी छंद

करि मंत्र असेस सूर सु देसं, वके वैसं सज्जायं।
हय गय[1] चढ़ि वीरं फिरे सुमीरं, धरि धरि धीरं लज्जायं ॥
गजराजन सज्जे अग्गो रज्जैं, वीरं गज्जे लरि लज्जैं।
नीसाँन[2] फरक्कैं धीर धरक्कैं, हर हर बक्कैं गलगज्जैं ॥७८३॥
दोउ[3] ओर उमग्गैं[4] समर सु रड्डें[5], बढ़ि बढ़ि तडै नस्र[6] खडैं।
बहु तोपन छुट्टैं धीर अहुट्टैं, फिरि फिरि जुट्टैं वल चढैं ॥
बाजे बहु वज्जैं जनु घनु गज्जैं, सूर समज्जैं वल रज्जैं।
पद रुध्थ[7] पतालं अरि उर सालं, उट्टत[8] भालं रण सज्जैं॥७८४॥
छुट्टैं बहु बॉनं संधि[9] कमॉनं, अरि उर प्रॉनं बहु कढ्ढैं।
लग्गैं उर सेलं अरि दल पेलं, बिग्रह मेलं वल ठड्ढैं ॥
किरवॉन दुधारं हय गय पारं, सूर संहारं उर फारं।
करि जोर कुठारं बहुत[10] करारं, मिरत जुझारं रनभारं॥७८५॥
गिद्धिय[11] पल भक्खैं रत[12] बहु चक्खैं, जंबू अक्खैं हिय हर्षें।

... ...

बहु पत्र भरावैं मिलि मिलि गावैं, धरि धरि धावैं मन भावैं।
पल अरित चचोरैं बसन निचोरैं, लुथ्थि टटोरैं गुन गावैं॥७८६॥

दोहरा छद

यहिं विधि दुहुँ दल आहुरे, भिरे[13] दोउ दल ऐन।
रहे अहल चहुवॉन हू, खॉन सकल हठि सैन ॥७८७॥
अबदल मीर जु साहि कै, परे खेत मैं[14] धाय।
पकरै राव हमीर कौ, पकरै[15] अस पति पाय ॥७८८॥
ल्याऊँ गहि हम्मीर कौ, रीझ दिज्जिए मोहिं।

---

१ गज। २ निस्सॉन। ३ दुहुँ। ४ उमड्डैं। ५ रुट्टैं। ६ तंडैंतन खंडैं। ७ रुथ, रुप्पि। ८ उद्दत। ९ सगि। १० बहुत। ११ गिद्धनि। १२ रत्तहु। १३ मिरग, मिरिउ। १४ पै। १५ परसै।

जितनो हिंदू को वतन, पाऊँ अब कर जोहिं ॥७८९॥
बीस सहस अबदल मिले, इत हमीर के बीर।
आप[1]आप जय स्वामि की, चाहत मंगल धीर ॥७९०॥

छंद रसवाल

मीर मिल्ले तबै, बीर अबदुल जबै।
कहे बैन याहं, सुनो आप साहं ॥७९१॥
गहूँ राव ल्याऊँ, रणत्थंभ पाऊँ।
कसाँनस्सुग्रीवं, गरै हारि जीवं ॥७९२॥
लगूँ साह पग्गैं, उठै कोपि जग्गैं।
हजारं सु बीसं, नमाए सु सीसं ॥७९३॥
गजं साज[2] तीसं, करै जीव रीसं।
इतैं राव कोपे,[3] मिले बीर ओपे ७९४॥
उठी बंक मुच्छं, लगी जाय घच्छं।
मनो बीर मग्गं, अकासं सु लग्गं ॥७९५॥
मिले बीर दोऊ, करैं जोर सोऊ।
भिरै गज्जि गज्जं, बजे बीर वज्जं ॥७९६॥
तुरंगं तुरंगं, मचे जोर जंगं।
पयदं पयदं, बके कोप बद्द ॥७९७॥
भभक्कत बाँनं, उड्डैं लगि ज्वाँनं।
लगै तेग सीसं, उभै फाँक दीसं ॥७९८॥
लगै जम्म दड्ढं, करैं पाँन गड्ढ[4]।
परी लुत्थि जुत्थं, करी जो अकत्थं ॥७९९॥
करी जूह लोटैं, परै जानि कोटैं[5]।
तुरंगं धरत्ती, सु लड्डै परत्ती ॥८००॥

---

१ अप्प अप्प। २ सज्ज। ३ कुप्पे। ४ दाढं, गाढं ग्रंथान्तरात्।
५ डूटैं, कुटैं।

नचैं रुंड[१] बीरं, धरत्ती सरीरं[२]।
सिरं हक्क[३] मारैं, धरैं अत्र धारैं ॥८०१॥
उरज्भंत अंतं, मनो ग्राह तंतं।
गहैं अंत चिल्ली[४], अकासं समिल्ली ॥८०२॥
मनो बाल मड्डी[५], उड़ावंत गुड्डी।
उड़ै[६] स्रोण छिच्छ, फुँवारे[७] सु अच्छं ॥८०३॥
वहै स्रोण नद्दं, मनो नीर भद्दं।
भरैं पग्ग हथ्थं, तरब्बूज मथ्थं ॥८०४॥
पलक्की चसची, उठैं बीर नच्ची।
कियौ अट्टहासं, सुकाली प्रकासं ॥८०५॥
जहाँ खेत्रपालं, गुहैं संभु मालं।
भरै गिद्ध चोटी, फटै तासु पोटी ॥८०६॥
पटे सहस सूरं, परे जाय दूरं।
गजं तीस पारे, पहारं करारे ॥८०७॥
सतं दोय बाजी, परे खेत साजी।
तहाँ पञ्च सैनं, रहे देखि[८] नैनं ॥८०८॥
तबै सेख सीसं, नवाए सरीसं।
हमीरं सुरावं, कहै बैन चावं ॥८०९॥
दुहूँ सैन मध्ये, महिम्मा सु बध्ये।
कहै उच्च बाचं, सुनो राव साचं ॥८१०॥
लखो हथ्थ मेरे, बदे बैन टेरे।
सुनो साहि बैनं, लखो अप्प[९] नैनं ॥८११॥
खरो मैं जु खूनी, रहे क्यों ज मूनी।
गहो क्यों न अव्वं, कहै बैन सब्ब ॥८१२॥

---

१ रुद। २ सुबीरं। ३ हाका। ४ चिल्हो, मिल्ही-ग्रंत्यानुप्रास। ५ उड्डी। ६ उड़ैं। ७ फुहरैं, फुहारैं। ८ दिक्खि, पिक्खि। ९ आप।

यहीं सेस सीसं, रह्यौ मैं जु दीसं।
करो सत्य वाच, ततो आप साचं ॥८१३॥
तवै पातसाहं, खुरासॉन नाहं।
करे[1] कोप पिल्ल, तहाँ सेख मिल्ल ॥८१४॥
कहै साह बैनं. सुनो सर्व सैनं[2]।
गहै सेख ल्यावै, इतो द्रम्म पावै ॥८१५॥
जु वारा हजारं, मनं[3] सब्ब भारं।
नोबति निसाँनं, अरू तेग माँनं ॥८१६॥
सुने बैन ऐसे, खुरासॉन रेमे।
हजारं सतांस, निराए[4] सु सीस ॥८१७॥
सदक्की जपाँनं, पिले सेख पनं।
तबै सेख धाए, राव को सीस नाए ॥८१८॥

दोहरा छंद

करि सलाँम हम्मीर कौं, मेख लई बड बग्ग।
दुहूँ[5] सेन देखत[6] नयन. रिम करि कड्ढे[7] खग्ग ॥८१९॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनि सदकी बैनं।
यह कुट्टन[8] की गहो सु ऐन॥
जीवत पकरि याहि अब लीजै[9]।
मनसब द्वादस सहस करीजै[10] ॥८२०॥
सदक्कि[11] संग मीर खुरसानी।
तीस सहस चढ़ि चले अमानी॥
गहन सेख महिमा के काजै।

१ करी कुप्पि। २ एन। ३ मनो। ४ नमाए। ५ दोउ। ६ दिक्खत, पिक्खत। ७ कड्ढिय, कट्टे। ८ कुट्टम। ६ लिज्जिय। १० करिज्जिय, लुक्किज्जिय। ११ सदकी।

कुप्पिय[1] मीर खेत चढ़ि गाजै ॥८२१॥
इतै सुसेख राव पद बंदै ।
गहै तेग मन माहिं अनंदे ॥
इतै सेख सदका उत आए ।
आप[2] आप जय सद्द सुनाए ॥८२२॥
कहै[3] सदकि सुनि साह सुजाँन ।
ठठा भखर बसि करिए पाँन ॥
कहा सेख हम्मीर सु राव ।
उठे युद्ध कौं करि जिय चाव ॥८२३॥

छप्पय छंद

जुटे वीर दुहुँ जग अग अनभग महाबल ।
चढे जाँन आमाँन बढे निरसाँन[4] घरद्दल ॥
करि कमाँन कर पाँन काँन लौं फरिखह रक्खे ।
धरि नराच गुन रखि धाव करि बेगि बरक्खे ॥
निज सग वीर सत पचजुत सेख मेखरो यह धरिय ।
षत खुरासाँन पट सहस ल सदको सद हाकी करिय ॥८२४॥
तेग बेग बहु कढ़ी मनो पावक्क लपट्टो ।
करी बाज नर जुट्ठ[5] कटे सिर पाग उपट्टा ॥
परै धरनि धर नचै उदर काट अंत भभक्के ।
चली रक्त धर धार लुथ परि लुत्थ धधक्के ॥
पट सहस खिसे पुरसाँन दल लिय निसाँन बाने सुभर ।
किए नजर राव हम्मीर कै फबी फते महिमा समर ॥८२५॥
आइ सेख सिर नाय राव कूं बचन सुनाए ।
धनि छत्री चहुवाँन सरन पन जग जस छाए ॥

---

१ कोपे । २ अप्प अप्प । ३ कहै सदक्की साह सुजाँन । ४ नीसाँन । ५ जुट्टि कट्टि ।

तेज राज धन धाँम तात तिय हठ नहिं छंडे।
राखि[1] धर्म्म द्रढ़ सत्य कीर्ति जस जुग जुग मंडे॥
भरि नीर नैन महिमा कहै अत्र जननी कय जन्म दे।
जब मिलौं राव हम्मीर तुम बहुरि समै ह्वैहै कहे॥८२६॥
कहै राव हम्मीर धीर नहिं हीन उचारो।
सूर न करै सनेह देह छिन भंग विचारो॥
बिछुरन मिलन सँजोग 'आदि ऐसी चलि आई।
ज्यों जीवन[2] त्यों मरन सकल[3] बेदन यह[4] गाई॥
कीजे[5] न भम[6] अनभंग चित मिलैं सूर कै लोक सब।
हम तुम जु साह बहुरों[7]तया ह्वैहि एक[8] तन तजि सुभ्रब॥८२७॥
तज्जय स्वारथ लोभ मोह काहू नहिं करिये।
देह धरे परवान[9] स्वामि को[10] कारज सारिए॥
को इतसों लै जात कहा उतसों लै आयो।
रहै अमर कीरत्ति पाप नरदेह सु गायो॥
सुनि सेख दोख थिर नाहि कछु तन मट्टी मिलि जाइये।
का सोच मरन जीवन तनो यह लाभ सुजम सों पाइये॥८२८॥
सुनि हमीर कै वचन साह पर सनमुख धाए।
मीर गाभरू बीर आनि तिन[11] सीस नवाए॥
अलादीन पतिसाह इतै सिर ऊपरि[12] राजै।
तुम सिर राव हमीर स्वामि आयन[13] कुल छाजै॥
तन तजो नोन की सरत दोउ यह तन तिल तिल खंडिये।
मिलिये जु भिस्ति[14] मैं जाय अत्र धर्म न अपना छंडिये॥८२९॥
हँसि अलावदी साह सेख कौ वचन सुनाए[15]।

---

१ रक्खि। २ ज्यामन, जॉमन। ३ चऊ। ४ मैं, मिचि।
५ किज्जे। ६ भंग। ७ गवरू, गमरू। ८ इक्क। ९ परमॉन। १० जो।
११ रिस। १२ उप्पर। १३ अप्पनि। १४ बिहस्त। १५ सुमाए।

दिली छाड़ि करि सीस बहुरि मुझको नहिं[१] नाए ॥
मिलो मुझे तजि रोस हुरम मैं तुमको दीनी।
अरु गौरखपुर देस देहुँ तुम कौ सत चीन्हीं[२] ॥
मुसकाय सहि महिमा कहै[३] बचन याहि वै किज्जिये।
जननी जनमे फिरि आनि भव जबै मिलन मन किज्जिये ॥८३०॥

दोहरा छंद

जब[४] जननी जनमै बहुरि, धरूँ देह कहुँ आनि।
तऊ न तजौं हमीर संग, सत्य बचन मम जानि ॥८३१॥
तब सु राव हम्मीर सुनि, कीनों[५] मन्त्रि सु सेख।
हजरति महिमा साह की, बात लगावत देखि ॥८३२॥
कहै हमीर यह बचन पर, गही साह सौं तेग[६]।
लोभ न करिये[७] जीव का, गहो[८] साह सो बेग ॥८३३॥

चौपाई छंद

कहै मीर गभरू ये बातैं।
गहे[९] सार नहिं करिये घातैं ॥
हुकम धनी कै कौ प्रतिपालो।
आइ अदलि सीस पर चालो[१०] ॥८३४॥
सुनि गभरू के बचन सुभाए।
महिमा फूलि खेत मैं आए ॥
सनमुख सार सम्हाय सु बढ्ढै।
माया[११] मोह त्यागि खग कढ्ढै ॥८३५॥

---

१ न नवाए। २ अरु गौरखपुर औधि देस दीनो (दिन्नो) सति चीन्हीं (चिन्हीं)। ३ कही। ४ अब। ५ कीन्ही। ६ तेक। ७ किज्जिय। ८ तो रहै हमारी टेक। ९ गहौ सार रन कौ रचि घातैं। १० प्रतिपालहु, मालहु अस्पानुप्राय। ११ महिमा।

दोहरा छंद

दोऊ बधु रिसाइ कै, लई बाग[1] इमि सग ।
उतरि देव मैं मिलि उभै, कीनौ हरष उमग ॥८३६॥
मीर गाभरू पॉय परि, हुकम मॉगि कर जोरि।
स्वामि काज तन छंडिये, लगै[2] न कबहूँ खोरि ॥८३७॥

हनूफाल छंद

मिलि बंधु दोऊ ध्याय । बहु हरष कीन[3] सुभाय ।
अब स्वामि धर्म सुधारि । दोउ उठे बोर हँकारि ॥८३८॥
असमाँन[4] लग्गिय सीस । मनो उभै काल स दीस ॥
इत कोप महिमा कीन्ह । हम्मीर नौंन सु चीन्ह ॥८३९॥
उत मीर गभरू आय । मिलि सेख कै परि पॉय ॥
कर तेग बेग समाहि । रहे दुहूँ सेन सचाहि ॥८४०॥
कम्माँन लीन सु हत्थ । जनु[5] सार कार सुपत्थ ॥
धरि स्वामि काज[6] समत्थ । दोउ[7] उभै जुद्ध सपत्थ । ८४१॥
दुहूँ द्वंद जुद्ध सुकीन । मनु जुटे मल्ल नवीन ॥
तरवारि वज्जिय ताय । मनु लगी ग्रीषम लाय ॥८४२॥
कटि चरण सीसरु हत्थ । परि लुत्थ जुत्थ सु तत्थ ॥
घमसाँन थाँन सु धीर । घर धरण(नि) खेलत बीर ॥८४३॥
गजराज लुट्टत भुम्मि । बहु तुरँग परत सु झुम्मि ॥
शिव वीर बज्जिय सार । तरवारि बरसहु[8] वार ॥८४४॥
दोउ भ्रात स्वामि सकाँम । जग मै किये अति नाँम ॥
दोहुँ वीर देखत हूर । चढ़ि गए सुरग अति नूर ॥

---

१ बगा । २ लपक्त कबहूँ खोरि । ३ कियउ । ४ असमाँन सीस (मत्थ) सुलग्ग (लग्गि) । मनु उभै काल सुजग्ग । ५ धर सार धार सुपत्थ । ६ कज धर्म । ७ मनु उठ्यो । ८ परसहु ।

दल दोय दिक्खत वीर। पहुँचे विहस्त गहीर ॥८४५॥

दोहरा छंद

तिल तिल भे[1] अँग दोहुँन के, हने बाजि गजराज।
हजरत राय हमीर के, सबै सँवारे काज॥ ८४६ ॥
मुसलमॉन हिंदवाँन[2] को, चले सेस सिर नाय।
चढ़ि बिमाँन दोऊ तहाँ, विहस्त पहुँचे जाय ॥८४७॥

छप्पय छंद

कहै साह मुख बचन[3] सुनो हम्मीर महाबल।
अब न गहो तुम सार फिरैं हम सकल दिली दल॥
तुम्हैं माफ तकसीर राज रणथंभ करो थिर।
हम तुम बीच कुराँन मुहिम नहिं करो दिलीसुर॥
परगनें पाँच[4] दीनें अवर रणतभँवर भुगतो सदा।
जब लग सुराज हमरो रहै तुम सु राज राजो तदा॥ ८४८॥

चौपाई छंद

कहै राव हम्मीर सु बानी।
सुनि दिल्लीस सत्य जिय जानी॥
जाकी अदलि होय किमि मिट्टै।
नर तैं होनहार किमि घट्टै ॥ ८४९॥
तुम्हरो दयो राज किन पायौ।
तुम्ह को राज कहो किन थायौ॥
बेर बेर कहा मुखै[5] उचारो।
कोटि म्यॉनपन क्यों न बिचारो ॥८५०॥
कीरति अमर अमर नहिं कोई।

---

१ भए अंग । २ हितवाँन । ३ बच, नैन । ४ पंच दिन्निय।
५ मुक्ख ।

दुर्योधन दसकध सु जोई[1] ॥
काको गढ़ काकी यह दिल्ली।
हरि की दई हमैं तुम मिल्ली ॥८४१॥
हम तुम अस एक उपजाए॥
आदि पदम रिषि अंग उपाए॥
देव दोष तर धर भए न्यारे।
हम हिंदू तुम यवन हँकारे ॥८४२॥
तजिये भोग भूमि के सबहीं।
चलिये सुरपुर बसिये अबहीं॥
सग हमारो पहुँच्यो जाई।
हम तुम रहैं सरहिं पहुँचाई ॥८४३॥
गहो हथ्यार राज सब छंडो।
राखो जस तन रहि बिहंडो॥
अबै चालि सुरपुर सुख मंडो
मृत्युलोक[2] के भोग सु छंडो ॥८४४॥

छंद त्रोटक

यह बात[3] कही चहुवाँन तबै।
सुनि साह सबै भर पेलि जबै॥
करि साज सबै रण मंहि महा।
तिन भारथ पारथ जुद्ध सुहा ॥८४५॥
दल संग चढ़े सब सूर असी।
सब तोप सु बॉन कमाँन कसी॥
गजराज अनेक बनाय घने।
मनो पावस बद्दल मघ तने ॥८४६॥
हय कट अमट सु पोन मनो।

---

१ जोड, जोड अत्यानुप्रास। २ मर्त्यलोक। ३ वरत।

बहु दाँमनि सार चमंकि भनो।
घन गौर[१] सदायन देखतयं।
ध्वज बैरख मंडल लूरतयं ॥८५७॥
थिरदावत बृंद कविंद घने।
मनो चात्रक मोर अनंद बने॥
वगपंति सुदंति अनंत रजे।
धुरवा करि सुंड छुटे भरजे ॥८५८॥
बहै[२] धार अपार जुधार वही।
घन घोर सु नौबति नाद वही[३]॥
कर सोर समोर नकीब चले।
यह भाँति दोउ दिस[४] बीर[५] मिले ॥८५९॥
करिये हुंकार सुबीर चले।
... ...॥
कह मीर सिकंदर नेम कियं।
सिर नाय सुभाय हुकम्म लियं ॥८६०
पहलै पुर जाय सु बीर भगं।
रणथंभ कहा हजरत्ति अगं॥
तुम सेर करयौ वह आप जथा।
अब देखहु मोर सुहाथ जथा ॥८६१॥
सु जमीति खधार लई सबही।
अरु मीर सिकंदर आय[६] सही।
करि कोप सिकदर मीर चढ़े।
तब राव हमीर के भील कढ़े ॥८६२॥
तब भोज कही अब मोहिं कहो।

---

१ घन घोर। २ बह धार अपार सु धार हुई। ३ हुई। ४ दल। ५ बोर। ६ आ पठई।

इतने अब हत्थ हमार लहो ॥
तब राव कही रणथम्भ अगै ।
दुइ(रहु) जैत अगै सिर भोल तगै ॥८६३॥
अर जैत सरन्नि सुराखि तबै ।
सरि कौन करै तुम्हरी जु अबै ॥
तुम संग रतन्न चितोर गढ़ं ।
चढ़ि जाहु हमार जु काज बढ़ं ॥८६४॥
सुनि भोज इसे कहि बैन तबै ।
यह सीस तुम्हार निमित्त[१] अबै ॥
रणथंभहिं हेत जु सीस दिवै ।
अब ओर कहा बिन राव जिवै ॥८६५॥
यह औसर फेर बनै कबहीं ।
हजरत्ति हमीर मिलै जबहीं ॥
कहि बत्त इती जु सलाँम करी ।
अपनी सब लीन जमीन[२] खरी ॥८६६॥
सब भील कसे हथियार जबै ।
निकसे कढ़ि भोज अमाँन तबै ॥
कमठा[३] कर तीर सम्हार उठे ।
तत मीर सिकंदर आय जुटे[४] ॥८६७॥
बजि घोर निमाँन प्रमाँन[५] मिले ।
दल कोप करे बहु तोप चले ॥
घमसाँन जुवान कियौ तबहीं ।
दुहु सैन सुऐन बने जबहीं ॥८६८॥
गजराज हरौल करे बलयं ।

---

१ निमत्त, निमत्य । २ जमीति । ३ कमठाग कुदार । ४ उठे, बुठे ।
५ अमाँन ।

छत सार अपार कढ़े दलयं ॥
सजि भील अनी सुघनी हलकौ ।
कसि गातिय[1] कोप कियौ वलकौ ॥८६९॥
कमठा कर धार अपार वलं ।
तब भोज मिल्यौ तह साह दलं ॥
नट कूदत[2] जानि सु ढोल सुरं ।
बहै[3] तीर अमीर सुजानि छुरं ॥८७०॥
करि कोप तबै गजदंत कढ़े ।
मुरि मूरिय धूरि उपारि चढ़े ॥
सब भीलन[4] मत्त सुकोप कियं ।
जनु भाल चली मुख लक लियं ॥८७१॥
जनु मार अपार कटार चलैं ।
वहु मीर अमीर रु भील मिलैं ॥
हजरत्ति सराहत भोज बलं ।
जनु मानव रिच्छ भिरत्त दलं ॥८७२॥
दोउ भोज सिकंदर मीर जुटे ।
मुख वानिय मीर अमीर रटे ॥
जब भोज कहै करि वार तुहीं ।
कहै मीर सिकंदर बूढ तुहीं ॥८७३॥
अब तोपर वार कहा करिये ।
सब लोक अलोक महा भरिये ॥
तब भोज स कोप कियौ रण मैं ।
करि कोप कटार दियौ तन मैं ॥८७४॥
तन कंगल भेदि धरन्नि परयौ[5] ।
किरवाँन चलाय स मीर हरयौ[6] ॥

---

१ कागति । २ कुदत । ३ बहु । ४ मिल्लन । ५ धस्यौ । ६ हँस्यौ ।

सिर भोज पर्यौ धरनी[1] तल मैं।
धर धावत रुड लरै[2] थल मैं ॥८७५॥
उत मीर सिकंदर भूमि परे[3]।
वर हूर[4] सुदूर सुश्रानि वरे ॥
दरि खेत खधार अपार सबै।
धिन सीस पराक्रम भोज अबै ॥८७६॥
भजि साह अनी तजि खेत तबै।
परि भोज समाज सधीर सबै ॥
कसमीर अमीर सहस्र पची।
सुमिलै[5] धर धूर अली सु सची ॥८७७॥
तहाँ भोज स साथि हजार भले।
वरि थाल सबै सुर लोक चले ॥८७८॥

दोहरा छंद

परे भोज सँग भील भर, सहस दोइ इक ठौर।
सहस पचीस कसमीर कै, अरुपंधार भर मौर[6] ॥८७६॥
सहस तीस पंधार कै, और सिकंदर मीर।
अली सयद[7] कै संग भट, परे मीर[8] दस भीर ॥८८०॥
भजी फोज पतसाह की, विकल सकल उमराव।
दोय सहस भट भोज सँग, रहे खेत करि चाव ॥८८१॥

चौपाई छंद

राव हमीर भोज ढिंग आए।
देखि[9] सु भोज नैन जल छाए ॥
तुम सब श्रमर भए कलि मार्हीं।

---

१ धरनिस्थल। २ भुम्मि लरै चल मैं। ३ भुम्मि गिरे। ४ हूरन। ५ उलटी मइ सेन दिलीस चची। ६ श्रौर। ७ सैद। ८ पीर। ९ देखि भोज मरि,दृग, जल, छाए।

स्वामि कॉम सब देह सराहीं ॥८८२॥
जो न सिकंदर साह जु आए ।
राव हमीर कै सनमुख धाए ॥
देखि साह आपन दल भज्जै ।
हजरति देखि हमीरह लज्जै ॥८८३॥
राव हमीर खेत महि ठाढ़े ।
हजरति अंग कोप अति बाढ़े ॥
कहै साह तब कोप सु बैनं ।
फिरे सकल नीचे कर नैनं ॥८८४॥
सर्बसु भूमि[१] भोग कर नीके ।
जंग समय लालच कर जीके ॥
भगे जात जीवत माहिं अबहीं ।
गई बात[२] बीरन की सबहीं ॥८८५॥
सुन ये बैन बीर खिसयाने ।
राव हमीर मु जुद्धहिं ठाने ॥
जैन सिकदर माह अमानो ।
अरु पंधार मीरु[३] सब जानो ॥८८६॥
यह हम्मीर राव चहुवॉन ।
जुरे जुद्ध मनु काल समाँनं ॥
तोप तुपक चद्दर सब दग्गिय[४] ।
फर क्रपॉन चहुवाँन सु जग्गिय[५] ॥८८७॥

भुजंगप्रयात छंद

परे दोय हज्जार भीलं[६] समत्थं ।
तहाँ च्यारि ओरं गिरे खेत सत्थं ॥

---

१ भुम्मि । २ बूड़ि । ३ मीर । ४ दागी, त्यागी । ५ जागीं ।
६ मिलं ।

परे कासमीरं सहस्र पचीसं।
अली सेर मीरं परे संग तीसं ॥८८८॥
तबै साह कोपं किये बैन रीसं।
फिरे बीर लज्जा समेतं मुदीसं ॥
तबै राव हम्मीर कोपे सुजानं।
चले[1] संग चहुवाँन बलवाँन राँनं ॥८८९॥
लिये सेन पंधार दो लक्ख जामी।
जबै जैन साहं सिकंदर सु नामी ॥
इतै राव हम्मीर कम्माँन लीनी।
मनो पत्थ भारत्थ सारत्थ कीनी ॥८९०॥
लगैं तीर छुगं हुवे पार गज्जैं।
परैं पील भुम्मी[2] सु घुम्मैं गरज्जैं ॥
कहूँ पक्खरं[3] बाजि फूटैं[4] सरीरं।
छुटैं प्राण बाँन सु लागत तीरं[5] ॥८९१॥
जुरे जंग मारं अमारं सु चौजं।
इतै राव हम्मीर उत[6] साह फौजं ॥
चढ़े[7] राव कै रावतं जो अमानै।
बनै धंगल अंग जंगं सु ठानैं ॥८९२॥
करैं रंग कै अंग बानै अनेकं।
घने केसरं साज लीने सु टेकं ॥
किते बीर तोरा तबल्लं बनाए।
घने नेत बंध गज गाह लाए ॥८९३॥
किते मीर बंधं सजे केसराँनं।
किते बीर बाँके चढ़े चाहुवाँनं ॥

---

१ चढ़े। २ भूमें सु चक्कार मंझे। ३ पाक्खरं। ४ फुट्टे। ५ मन्ने मेघ पावस्स घूदंत नीरं। इसे राव कै हत्थ लागंत तीरं। ६ वँ। ७ चढ़े।

पढ़ैं पाहि[1] बंदीजनं बृंद भारे।
　　मनो राति जोरत टूटंत तारे ॥८९४॥
उठी उद्ध मोक्षं लगी नैन आई।
　　उठे रोम अंगं सुजगं मचाई ॥
उतै साह कीने[2] घने गज्ज अग्गैं।
　　मनो पाय चल्लैं पहारं सु मग्गैं ॥
तिन्हैं उप्परैं साह[3] के वीर धाए।
　　गही तेग हथ्थं उरं कोप छाए ॥८९५॥
इतै राव चहुवॉन कै वीर कोपे।
　　मनो आजही साह कै वीर लोपे ॥
गजैं सो हमीरं लखैं खेत राजैं।
　　सबै सूर वारं निसॉनं सु बाजैं ॥८९६॥
किते चाहुवॉनं पिले ढाल पीलं।
　　उठावत मारत पारत ढीलं ॥
कहूँ सुंडि पै तेग बाहंत ऐसी।
　　मनो रंभ थंभ कढ़ैं तेग जैसी ॥८९७॥
कटैं दंत मातंग भाजंत[3] जेते।
　　गहैं पुच्छ सुड्डु पटक्कंत केते ॥
परैं पील पब्बय मनो खेत भारी।
　　बहैं रक्त[4] घावं मनो घाव कारी ॥८९८॥
तिहॉं काल कबिराज उप्पम बिचारी।
　　बहैं स्यॉंम पव्वै सु नेरू पनारी ॥
किते बाजि राजं पटक्कंत भूमैं।
　　भए अंग भंगं खरे घाव घूमैं ॥८९९॥
कढ़ी तेग वेगं लपट्टं सु जानो।

१ ताहिं। २ कीनं। ३ भज्जंत। ४ रत्त।

मनो भीषमं लाय लग्गी सुमानो ॥
जुटे बीस बीरं गहीरं सु गज्जैं ।
भजे कायरं[1] खेत छंडे सु लज्जैं ॥१००॥
कटे सीस बाहू कहूँ पाव ऐसे ।
बहैं तेग बेगं मनो झार जैसे ॥
लगैं कध ग्रीवा तबै सीस टूटै[2] ।
परैं सीस धरनी तबै रुंड फूटैं[3] ॥१०१॥
घने सीस तर्बूज से भुम्मि डारैं ।
लरैं रुड खेतं सिरं हूक[4] मारैं ॥
चहैं बॉन किरबॉन[5] बज्जन्त[6] सारैं ।
मनो काठ काटंत[7] कट्टे कुहारैं ॥१०२॥
चहैं सील अंगं परैं पार होई ।
मनो रुड मैं नागं लपटंत सोई ॥
कटारी लगैं अंग दीसंत पारं ।
मनो नारि मुग्धा कढ्यौ पानि वारं ॥१०३॥
छुरी वार सूरं करैं जार ऐसे ।
मनो सपनां पुन्छ दीसंत जैसे ॥
लगैं जोर सों यों बिषाएं जवॉन ।
हुवैं अंग पारं जुटैं जोर बाँनं ॥१०४॥
भए लथ्थ बथ्थं दुहूँ मन ऐसे ।
मनो यों अपारे भिरे मल्ल जैसे ॥
पछारैं उछारैं भुजा सीस सूरं ।
उछारैं[8] हँकारैं उठैं[9] बीर नूरं ॥१०५॥
मची मांस मेदं धरा कीच मारी ।

---

१ भतरं । २ टुट्टं । ३ फुट्टं । ४ हाँक । ५ कम्मॉन । ६ बाजंत ।
७ कट्ट, कट्टंत । ८ उछल्लैं, हकल्लैं । ६ उट्ठैं ।

चली भ्रुट्टि खेतं नदी मैं[1] अकारी ॥
बनैं फूल पील सुडोलं सु बज्जी ।
बहै बीचि[2] लोहू जलं धार गज्जी ।९०६॥
रथं चक्र आवर्त्त सो भौंर मानो ।
घनं पंस बेला कुलं रूप मानो ॥
नरो माह पावैं करं सर्प जैसे ।
वनी अंगुरी मीन मींगा सु तैसे ॥९०७॥
बहैं सीस इंदीवरं जानि फूले[3] ।
खुले नैन यों चंचरीकं सु भूले ॥
सिवालं सु केसं सुवेसं बिराजैं ।
घने घाट चौसों खरे मर गाजैं ॥९०८॥
भरैं जुग्गनी खप्परे सूर लोही ।
मनो मॉम बामा पनीहार सोही ॥
करैं केलि भैरव हर संग पाली ।
मनो न्हात बैसाष कात्तिकवाली ॥९०९॥
इसे घाट ओघाट[4] किन्ने[5] हमीरं ।
डरैं कायर[6] साह कै मीर पीरं ॥
भजी साह सेना सवे लाज हारी ।
भिरे खेत चहुवाँन गज्जंत[7]-भारी ॥९१०॥
किते गिद्ध जंबू कराल सु चिल्ली ।
बगं[8] हंस केते बिहंगं सु मिल्ली ॥
परे खेत साहं सिकंदर सु नामी ।
सवा लक्ख खंधार के मीर ग्रामी ॥९११॥
गिरे खेत हथ्थी[9] सतं पीन ऐसे ।

---

१ वह। २ विचि। ३ फुल्ले, भुल्ले अंत्यानुप्रास। ४ घट्ट औघट्ट।
५ कीने। ६ कातरं। ७ गाजंत। ८ बकं। ९ हाथी।

मनो पर्वत[1] अंग दीखंत जैसे ॥
कसे साठि[2] हौदा परे खेत माहीं ।
जरावं जर कंचनं के सुमाहीं ।६१२॥
परे इग्रर सौ कई गज्जराजं ।
कई प्राणहीनं कई मो समाजं ॥
परे सत पचं निसानन्नवारे ।
किते फगज्जराजं परे खेत मारे ॥९१३॥
सवा लक्ख बाजी परे जे अमाँनं ।
परे खेत साहं सिकन्दर सुजाँनं ॥
तिनै साह[3] लक्ख पँधारं सवाय ।
परे एक[4] लक्ख दिलीस सुपायं ॥९१४॥
दुहूँ इक[5] मीर परे खेत नामी ।
कहूँ नॉम ताके परे खेत वामी ॥
परे दूसरे मीर सिर खॉन भारी ।
रहे खेत महरम्म खॉनं सुवारी ॥ ९१५॥
परे जौमजादेन से मीर नामी ।
मोहोवत्त मुदफ्फर परे इक ठामी ॥
परे नूर मीरं अफर्रस घोरं ।
वली इक निज्जॉम दीनं सु पीरं ॥९१६॥
परे मीर एते दुहूँ खेत सूरं ।
वहे नीर ज्यों रत्त[6] चाहंत कूरं[7] ॥
नची जुग्गनी और भैरव सु नच्चैं ।
भरैं गिद्ध आमिष्प जंबू सु रच्चैं ॥९१७॥
थके सूर रथ्थं सु जॉमं सवायं ।
महावीर घायं स घूमंत तायं ॥

---

१ पतुय । २ सहि । ३ सत । ४ इक्क । ५ एक । ६ रक्त । ७ मूरं, पूरं ।

वरैं अच्छरी सूर[1] वीरं सु अच्छे।
खुले मोच[2] द्वारं प्रवेसंत गच्छे ॥९१८॥
भयौ मंडलं कुंडलं भॉन नद्दं।
कढ़े सूर वीरं सु धीरं उपद्दं॥
महा रौद्र भौ खेत देखत जानो।
कियौ अद्भुतं देव सो जुद्ध मानो[3]।९१९॥
परे खेत संघार मीरं सु राते।
इके लक्ख हज्जार पंचास[4] जाते॥
इतै सूर हम्मीर कै सहस च्यारं।
सु तो वीर धीरं खुले मोच्च द्वारं॥९२०॥

दोहरा छंद

तब हमीर हर ध्याँन करि, हर हर हर उच्चारि।
गज निज सनमुख[5] पेलि कै, जुरे[6] साह सों रारि॥९२१॥

त्रोटक छंद

गजराज हमीर सु पेलि[7] वरं।
मुख तै उचरंत स भाव हरं॥
किरवाँन[8] कढ़ी वलवाँन हथं।
सनमुक्ख सु साहि सु वोलि[9] जथं॥९२२॥
सुनिये सु अलावदि वैन अयं।
करि द्वंद सु उद्ध सु जुद्ध थयं॥
सब सेन कहा करिहैं सु सुधं।
हम आपन[10] इक्क[11] करैं सु जुधं॥९२३॥
दुहुँ ओर उछाह अथाह सजे।

१ आय। २ मोच्छि। ३ जानों। ४ पच्चीस। ५ सम्मुख पिलि कै। ६ जुरिग, जुरिउ। ७ पिल्हि। ८ कम्माँन चढ़ी। ९ वुल्लि गयं। १० अप्पन। ११ एक।

हजरत्ति सु कोप अकथ्थ[1] रले ॥
सनमुक्ख हमीर सु आय[2] जुटे।
सब सथ्थ जथारथ बेग[3] हटे ॥९२४॥
तिहिं खेत[4] ग्वरे[5] चहुवॉन नरं।
पतिसाह सबै दल भज्जि[6] भरं ॥
रहे मीर वजीर कछूक तबै।
चहुवॉनन के दल देखि[7] जबै ॥९२५॥
पतिसाह कही यह कौन बनी।
मब सैन बड़ी[8] चहुवाँन तनी ॥
तब मंत्र वजीर सु एमि कह्यौ[9]।
तुम मित्र सदा गुन जानि लह्यौ ॥९२६॥
सुनिराव सु दूत पठाय दयौ।
चहुवॉनन सों हित जानि ठयौ ॥
अब[10] विग्रह छाड़ि[11] सु संधि करो।
चहुवाँनन सों हित जानि हरो[12] ॥
अपराध हमैं सब दूरि करो।
तुम होहु अभं हम कूच धरो ॥९२७॥
नृप सों चर जाय कही तबहीं[13]।
सुनि राव यहै मुख बत्त[14] कही ॥
अब खेत चढ़े कछु संधि नहीं।
यह बत्त हमारि सुजानि मही ॥९२८॥
रिपु तैं विनती[15] सुइ कातरता।

---

१ अगंत्थ। २ आनि। ३ देखि। ४ ग्वत्त, अत्थ, अर्थ। ५ अरे। ६ माजि। ७ दिक्खि, पिक्खि। ८ बड़ी। ६ कियौ, लियौ अंत्यानुप्रास। १० व्यग्रह। ११ छुटि। १२ दुहूँ ओर महा सुख भरि भगे। १३ जबही। १४ बात। १५ विनति।

अब[1] वृत्त कहे छल चातुरता ॥
अब जाहु यहाँ हम सेन सजी।
तिन साह को जुद्ध करंत लजी ॥९२९॥

वचनिका

अब राव हम्मीर दूत कौं नीति सहित[2] उत्तर दियौ अरु युद्ध को उच्छाह कियौ आपणां उमरावों सों कही आयुध[3] छत्तीस[4] सों च्यारि आवधां सूं युद्ध कीजे[5] अर जग में अमर जस लीजे॥ तोप, बाण, चादरि, हथनालि, जंबूर, बंदूक, तमंचा, कमाँन, सेल इन[6] नै त्यागो। अरु आयुध च्यारि लीजे। तरवारि, छुरी, कटारी, विषाण, मल्ल युद्ध करि हजरति नै हाथ दिखावो तौ सायुज्य मुक्ति पावो ॥ पातसाह की उथान बखसीस करो और अच्छरी[7] वरो यह हम्मीर की आज्ञा माथै. धरि राव हम्मीर कै उमरावाँ केसरिया साज बणाया अरु सेहरा बाँधि पातसाह की फौज परि हॉको[8] कियौ ॥

त्रोटक छंद

कछु जंत्र न तोप न'कंत[9] नहीं।
तजि चापन चक्रन बाँन जिहीं ॥
किरवाँन[10] लई कर बाजि चढ़े।
चहुवाँन अमाँन सुखेत बढ़े ॥९३०॥
सत मीर वजीर रु साहि निजं।
करि कोप तबै पतिसाह सजं ॥
तरवारि दुधार अपार वहै।
सब साहि सु सैन समूह दहै ॥९३१॥

---

१ अर वृथ (व्यर्थ)। २ संजुक्त। ३ आयुध। ४ छः तीस में। ५ किजिये। ६ यन। ७ अप्छरा। ८ हल्लो। ६ रुकंत। १० कम्माँन।

कटि ग्रीव भुजा धर यों बिफरे[1]।
मनु काटि करे रस कुत्त हरे ॥
उड़ि मध्य परे धर रुंड उठे।
[2]चहुवाँन धरासह धार उठे ॥९३२॥
सिर मारत हाँक[3] परे धर में।
धर जुज्झत जुद्ध करैं अरमें ॥
कर जोर कटार सु अंग बहै।
बहु खंजर पंजर देह दहैं ॥९३३॥
बहु रंचक[4] मुष्ट कवध्य परैं[5]।
मल जुद्ध समुद्ध सुवीर करैं ॥
पचरंग अनगिगय खेत बन्यौ।
बकसी[6] तब साह सौं वैन भन्यौ ॥९३४॥
भयभीत सु साह की फौज[7] भगी।
घमसाँन मसाँन सु ज्योति जगी ॥
परियो बकसी लखि नैन तबै।
उलटो गज कीन[8] सु साह जवै ॥९३५॥
इक संग उजीर[9] न और नरं।
फिरि रोकिय[10] साह अनंत भरं ॥
चहुवाँन धरम्म सु जानि कहै।
यह मारत साहि सु पाप अहै ॥९३६॥
अभिषेक लिलाट कियौ इन कै।
महि ईस कहावत है तिन कै[11] ॥
धरि अग्र[12]सु साह को पील जबै।

---

१ बिट्टरे। २ बहु ओग्ग धरा जु अपार उठे। ३ हक्क। ४ रंचक। ५ मरैं। ६ बकसी नृप साहि कौ आप हन्यौ। ७ सैन। ८ किस। ९ वजीर। १० रुक्किय। ११ विनकै। १२ अग्ग।

जहँ राव हमीर सु लाय पगं ॥६३७॥
अब माहि सु राव कही तबहीं।
तुम जाहु दिली न डरो अबहीं॥
लखि साह को लोग मुरकि चल्यौ।
नृप आप हमीर सु खेत मिल्यौ ॥९३८॥

वचनिका

राव हम्मीर का उमरावाँ तरवारि कटारियाँ मो जुद्ध कियौ[1] पातसाह का अमीर उमरावाँ सू मल्ल जुद्ध कर्‌यौ[2] तदि[3] पातसाह की फौज[4] बिकल होकर पातस्याह तैं छोड़ छोड़ भागी हम्मीर की रावताँ पातस्याह ने हार्थां सुद्धां घेरि ल्याया॥ हम्मीर के आगे ल्या खड़ो कर्‌यौ। राव हम्मीर पातसाह ने देखि आपणाँ रावताँ सों कही याने छोड़ देओ यह ने पृथ्वीस कहे छै या अदंड छै॥ यह सुनि पातसाह ने छोड दियौ[5]। पातसाह ने उह की फौज मैं पहुँचाय दियौ। पतसाह वहाँ से खेत छोड़ कूँच कियौ[6]॥

दोहरा छंद

छाड़ि खेत पतसाह तब, परे[7] कोस द्वै जाय।
हसम सकल चहुवाँन न, लीनो[8] तबै छिनाय ॥९३९॥
लिये साह नीसान तब, थाना जिते बनाय।
और सम्हारि सु खेत को, घायल सोधि उठाय ॥६४०॥
सब के जतन कराय कै, देस काल सम आय।
राव जीति गढ़ कौ चले, हर्ष न हृदय समाय ॥९४१॥
बिन जाने नृप हर्ष मैं, गए भूलि[9] यह बात।

१ कीघी। २ बादसाह का अमीर उमरावाँ सूँ मह्ल जुद्ध करि दुर्ग क्यारी सो रंजका को प्रहार करयौ। ३ सर्व्वभृत। ४ सेन। ५ दीधी। ६ कीघो। ७ परिय। ८ लियो। ९ भुल्लि।

साह निसाँन सु अग्र[1] करि, चले भवन हपोत ॥६४२॥

पद्धरी छंद

भगि साह सेन जुत उलट आय।
तजि विविध भाँति बाना[2] जु ताहिं ॥
सब साह हसम लीनी छिनाय।
नृप मकल खेत सोधो कराय ॥६४३॥
बजि दुंदुभि जय जय धुनि सु आय।
सब घायल नृप लीने उठाय[3] ॥
करि अग्ग[4] साह नीसॉन सुल्लि।
लखि भूप हमम हर कह्यौ फुल्लि ॥६४४॥
सब राज लोक तिय जिती जानि।
सब सार परस्पर हरी[5] आनि[6] ॥
चहुवॉन दुग्ग किन्नो प्रवेस।
यह सुनिय राव तिय मरन सेस ॥६४५॥
चहुवॉन आनि देख्यौ सु गेह।
सब वचन यादि कीनो सु येह ॥
नृप मकल मंग कौ सीख दीन।
रावत्त राण मंत्री प्रवीन ॥६४६॥
तुम जाहु जहाँ रतनेस आय।
किज्जे न मोच नृपता बनाय ॥
चहुवॉन राय हम्मीर आय।
हर मँदिर महँ प्रविसंत जाय ॥६४७॥
करि पूजन भव[7] गणपति मनाय।
बहु धूप दीप आरति बनाय ॥
हो गिरजा गणपति सु मम देव।

---

१ अग्ग। २ नाना। ३ उन्नाय। ४ अग्र। ५ हनी। ६ पानि। ७ बहु।

तुम जाँनत हो मम सकल भेव ॥९४८॥
अपबर्ग देहु तुम नाथ सिद्धि।
तन छत्र धम्मे दीजे[1] प्रसिद्धि॥
करि ध्याँन संभु निज सीस हथ्थ[2]।
नृप तोरि कमल ज्यों किय अकथ्थ ॥९४९॥
यह सुनिय साह निज स्रवण बात।
चलि हर मँदिर कौ साह आत॥
जलधार नैन लखि राव कम्मे।
कहि साहि मोहि दीनौ न गर्म ॥९५०॥
कछु दियौ हमें उपदेस नाहि।
तुम चले आप वैकुंठ माहिं॥
तुम अभय बाँह दीनी जु सेप।
जुग जुग नाँम राख्यो बिसेप ॥९५१॥
अरु महादानि तुम भए भूप।
इच्छा सदाँन दीने अनूप॥
जगदेव मोरध्वज तैं विसेप।
जम जयौ लोक तुम रक्खि सेस ॥९५२॥

वचनिका*

...... आगै (अगैं) साह कै नीसान देखि राणी आसमनी आपणा परिवार समेति परस्पर प्रहार करि खंग (खग) प्रहार कर्यो। जोहर करि देह त्यागी। सो राव हम्मीर म्यौरो सुन्यौ औरसिव कैवचन याद करयौ। औरयह निस्चय

---

१ दिजिय। २ मत्थ।

* हस्तलेख में एक पन्ने के न होने के कारण पूरी वचनिका नहीं दी जा सकी।—संपादक

जानी कि बर्ष चौदह १४ पूरे भए गढ की अवधि पूर्ण हुई तातैं यह सरीर राखनो (रक्खनो) उपहास्य है और छिन भग सरीर को राखनो आश्चर्य नहीं। यह विचारि सिव के मंदिर गए और आप एक सेवग कनैं राखि सिव को षोड़स प्रकार पूजन कर्यो और यह बदान माँग्यो कि हे सिव तुम ईस्वर हो। सेवक हृदय के जाननहारे हो और सबके प्रेरक हो तातैं हम्मीर (हमरी) यह प्रार्थना है मुक्ति दीजे तो सायुज्य दीजे। जन्म जन्म विषैं छत्रीकुल मैं जन्म पाऊँ यह कहि कै खंग (खग्ग) आप हाथ ले कै सीस उतार्यो सिव पिंडी पै चढ़ाय दियौ तब सदासिवजी प्रसन्न होय कै आसीर्वाद दियौ तिहारे कुल की जय होय॥

दोहरा छंद

साह कहत हम्मीर सौं, लेहु मोहि अब संग।
धर्म रीति जानो सु तुम, सूर उदार अभंग॥९५३॥

पद्धरी छंद

मुसकाय सीस बोल्यौ सु बानि।
तुम करो साह मम बचन कानि॥
हम तुम सु एक जानो न और।
तजि मोह देह त्यागो सु तौर॥९५४॥
लीजे[1] सुमाँफ सागर सु जाय।
तन मिलै आप[2] अर्पै सु आय॥
यह कहिस सीस सुख मूँदि होत।
तब साहि ग्याँन हद भौ उदोत॥९५५॥
उठि साह सीस बदन सु कीन।
करि प्रणम संभु को ध्यान लीन॥

[1] लिज्जिय। २ अप्प।

हजरत्त[1] आय डेरै सु तब्ब ।
वज्जीर मीर बोले[2] सु सब्ब ॥९'
तुम जाहु सकल दिल्ली सथॉन ।
अलवृत्तहिँ राज दीजे सु ऑन ॥
नहिँ करो मोर अज्ञा सु भग ।
सेवक्क धर्म्म यह है अभग ।९५७॥

दोहरा छद

आयसु पाय सु साह की, चढे सकल सजि सैन ।
महरम खाँ उज्जीर वध, आए[3] दिली सु ऐन ॥९५८॥
दयौ राज सिर छत्र धरि, अलावृत्त तिहिँ काल ।
घरि घरि अति आनद जुत, यह विधि प्रजा सुपाल ॥६५९॥
रणतभँवर कै खेत कौ, कीनो सकल प्रमॉन ।
प्रथम हने रणधीर नै, बहुरि सेन परिवॉन ॥६६०॥
दोय लक्ख रूमा परे, दोऊ कुँवर उदार ।
सेन आरबी[4] की जिती, हनी जु असी हजार ॥९६१॥
हने मीर द्वै सत सतरि, और सिकदर साह ।
अट्ठ[3] लक्ख खधार कै, हने मीर निज आह ॥९६२॥
सवा सहस गजराज[5] परे, दोय लख बाजि प्रसिद्ध ।
द्वादस लख सेना प्रबल, हनी हमीर सुसिद्ध ॥९६३॥
मस्तक राव हमीर कौ, किय[6] सुमेर हर आप ।
मुक्ति[7] द्वार सबई खुले, विद्या नर्प सुथाप ॥ ६४॥

छप्पय छद

बिदा कीन[8] उज्जीर कुच[9] दिल्ली कौ कीनो[10] ।

---

१ हजरत्ति । ४ बुल्ले । ? आयउ दिल्लिय एन । ३ अरब्बिय ।
४ अट्ठ । ५ गजमत्त । ६ कियो । ७ मोक्खि द्वार सब खुल्लियँ ।
८ कियउ । ९ कुच्च । १० किन्नव, लिन्नउ अत्यानुप्रास ।

तब सुसाह तजि सग वचन हजरत को लीनौ ॥
सेतबंद पर जाय पूजि रामेस्वर नीकै ।
परे सिधु मैं जाय करे मन भाते जी कै ॥
चवँसी साह हम्मीर नृप सेख मीर सब नाक गय।
करि लोकपाल आदर अखिल जय जय जय हम्मीर कय॥९६४॥

मिले स्वर्ग मैं जाय साह हम्मीर हरक्खे ।
महिमा मीररु बाल बिबिध मिलि सुमन बरक्खे ॥
जय जय जय हम्मीर सकल देवन मुख गाए।
लोक अमर कीरत्ति मुक्ति परलोक सुपाए ॥
माणिक्क[1] राव चहुवाँन कुल दैन खङ्ग[2] दोऊ[3] धरत।
कहि जोधराज यह बस मैं ननकारी नाहिंन करत ॥९६६॥

दोहरा छंद

सुनत राव हम्मीर जस, प्रीति सहित नृप चंद ।
मनसा बाचा कर्मना, हरे जोध के द्वंद ॥९६७॥
चंद्र नाग बसु पंच गिनि, संवत माधव मास ।
सुक्क सु त्रतिया जीव जुत, ता दिन ग्रंथ प्रकास ॥९६८॥
भूपति नीमराणा प्रगट, चन्द्रभाँन चहुवाँन ।
साँम दाँम अरु भेद जुत, दडहिं करत खलाँन ॥९६९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज-राजराजेंद्र-श्रीमदखिल-चाहुवाँन-कुल-तिलक नीमराना-अधिपति श्रीमहाराजा चंद्र-भाँनजी-देवाज्ञया कवि जोधराज विर-चित यवनेश अलावदीन प्रति हम्मीरजुद्धं समाप्तम्

---

१ माणक्य। २ खग्ग। ३ उद्धरत।